UNIVERSAL LIBRARY
OU_186548
UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 631.8 J83K Accession No. G.H. 285

Author जोशी, शंकरराव

Title खाद्य और उसके उपयोग 196

This book should be returned on or before the date last marked below.

खाद और उसके उपयोग

--खाद संबंधी विस्तृत जानकारी देनेवाली पुस्तक--

●

लेखक
शंकरराव जोशी

पुस्तक भेंट के निमित्त है

१९६३

सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली

Checked 1965

दूसरी बार : १९६३
मूल्य
३. ५० न० पै०

Checked 1969

मुद्रक
लीडर प्रेस,
इलाहाबाद

प्रकाशकीय

भारत की अर्थ-व्यवस्था का मूल आधार खेती है। हमारी कृषि-समस्याएं उन देशों की कृषि-समस्याओं से भिन्न हैं, जहां जमीन बेहिसाब है और जनसंख्या अपेक्षाकृत कम। भारत में सीमित भूमि पर आबादी का बेहद दबाव है। इसीलिए यहां घनी खेती (Intensive cultivation) की प्रणाली को अपनाया जाता है। एक ही जमीन से, गहरी खुदाई द्वारा ली जानेवाली प्रत्येक फसल के बाद, जमीन की उर्वरा शक्ति का न्यूनाधिक मात्रा में क्षय होता है। उस शक्ति की पूर्ति के लिए खाद की उपयोगिता निर्विवाद है।

जिस प्रकार हर व्यक्ति के लिए एक ही तरह का भोजन पुष्टिकर नहीं होता, उसी प्रकार भिन्न-भिन्न जमीनों की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के लिए अलग-अलग खादों की जरूरत पड़ती है। संक्षेप में कहा जाय तो प्रस्तुत पुस्तक में बताया गया है कि खादें कितने प्रकार की होती हैं, और किस तरह की जमीन में, कौन-सी खाद, किस अनुपात में देने से यथेष्ट लाभ मिल सकता है। साथ ही यह जानकारी भी दी गई है कि किस फसल के लिए कौन-सी खाद उपयोगी होगी। पुस्तक के अंत में दो परिशिष्टों में खाद-संबंधी बहुत-से आंकड़े दिये गये हैं। इस प्रकार अपने विषय की संपूर्ण जानकारी देनेवाली यह एक उपयोगी पुस्तक बन गई है। यह पुस्तक जहां खेती में लगे व्यक्तियों के लिए लाभदायक सिद्ध होगी, वहां कृषि विद्यालयों में खेती की शिक्षा पानेवाले शिक्षार्थियों के लिए भी विशेष रूप से उपयोगी होगी।

हम चाहते हैं, राष्ट्र की समृद्धि में अभिरुचि रखनेवाले प्रत्येक पाठक के हाथ में यह पुस्तक पहुंचे।

—मंत्री

निवेदन

कृषि किसी भी राष्ट्र की रीढ़ है। राष्ट्र की समृद्धि अधिकांशतः कृषि की उन्नति पर ही अवलंम्बित रहती है। खेती की उपज ही जनता की भोजन, वस्त्र तथा आवास संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति करती है और अधिकांश उद्योग-धंधे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से खेती की उपज पर ही निर्भर करते हैं। हमारे देश की कृषि-योग्य भूमि का क्षेत्रफल आवश्यकतानुसार बढ़ाना, कई कारणों से, संभव नहीं है। इसलिए खेती की प्रति एकड़ पैदावार बढ़ना, परमावश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है।

देश की जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है और जनता की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति के हेतु अनेकानेक कल-कारखानों तथा उद्योग-धंधों का निर्माण हो रहा है। पर खेती की प्रति एकड़ उपज बढ़ाये बिना जनता के भरणपोषण तथा उद्योग-धंधों के लिए कच्चे माल की पूर्ति कर सकना कठिन से कठिनतर होता जा रहा है। भारत को हर साल करोड़ों रुपय मूल्य का अनाज और कपास आदि विदेशों से मंगवाना पड़ता है, जिससे प्रतिवर्ष कर्ज का बोझ बढ़ता ही जाता है। यदि खेती के उन्नत तरीकों का सहारा लेकर प्रति एकड़ उपज दुगुनी-तिगुनी की जा सके तो कर्ज के इस बढ़ते हुए भार से सहज ही छुटकारा मिल सकता है।

देश की आर्थिक उन्नति के हेतु पंचवर्षीय योजनाओं पर अमल हो रहा है। इनमें खेती की उन्नति तथा किसानों की आर्थिक स्थिति सुधारने पर काफी ध्यान दिया जा रहा है। सिंचाई के लिए जल का प्रबंध करने के लिए अनेक नदी-घाटी योजनाएं कार्यान्वित की जा रही हैं, छोटे-बड़े नदी-नालों पर बांध बांधकर तथा तालाबों का निर्माण करके अधिकाधिक क्षेत्र में सिंचाई की जा सकने के लिए जल सुलभ किया जा रहा है। किंतु जल की पूर्ति कर देने मात्र से ही अधिक उपज प्राप्त नहीं की जा सकती है। जल के साथ-ही-साथ खाद की भी आवश्यकता है। कहा जा सकता है कि सिंचाई और खाद का चोली-दामन का-सा संबंध है।

'सॉइल एंड मैन्युअर' नामक एक अंगरेजी पुस्तक को सामने रखकर ही इस पुस्तक की रचना की गई है। 'मैन्युअर एंड मैन्युरिंग', 'मैन्युअर्स एंड फर्टिलाइजर्स' और डाक्टर लेदर द्वारा लिखित एक अंगरेजी पुस्तक से भी सहायता ली गई है। भारत के विभिन्न राज्यों की कृषि संबंधी जानकारी एकत्रित करने की कोशिश की गई है। 'खेती-बाड़ीनी उपज बढ़ावनार खातर' नामक एक गुजराती पुस्तक के अलावा निम्नलिखित पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित लेखों और विचारों को भी यथास्थान शामिल कर लिया गया है——

अंगरेजी——इण्डियन फार्मिंग, अमृत बाजार पत्रिका, रूरल इंडिया, इंडियन जनरल आफ एग्रिकल्चरल साइंस, पूना एग्रिकल्चरल कालेज मैगेज़ीन, डा० सी० एन० आचार्य द्वारा लिखित एक पुस्तिका, और नेशनल अकादमी आफ साइंस की अप्रैल १९५५ की एक मीटिंग की कार्यवाही।

मराठी——उद्यम, महाराष्ट्र, लोक-सत्ता, केसरी, विवेक आदि।

हिन्दी——नवप्रभात, पांचजन्य, साप्ताहिक हिंदुस्तान, कृषक, खेती, कृषि-संसार आदि।

उक्त सभी पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों के लेखकों तथा संपादकों के प्रति विनम्र आभार प्रकट करता हूं।

पुस्तक के संबंध में मुझे कुछ नहीं कहना है। विद्वान पाठक ही पुस्तक के अच्छे-बुरे होने का निर्णय करने में पूर्णतया समर्थ हैं।

राजेंद्रनगर, बिजलपुर ——शंकरराव जोशी
(इंदौर)

विषय सूची

१. प्रारंभिक जानकारी ९–२०

मिट्टी ९; खाद, पौधा, रासायनिक विश्लेषण १०; पौधे भोज्य पदार्थ कैसे ग्रहण करते हैं? १३; वातावरण १६।

२. मिट्टी २१–५९

मिट्टी कैसे बनती है? २१; मिट्टी के भौतिक गुण २६; मिट्टी की रसायनशाला ३६; मिट्टी में कीट व जीवाणुओं के क्रिया-कलाप ४४; जमीन की उत्पादन-शक्ति ५३; खाद की आवश्यकता ५६।

३. खाद देने के सिद्धांत ६०–७१

खादों का वर्गीकरण ७०।

४. साधारण या सजीव खाद ७२–१५६

१—गोबर की खाद ७२; पशुशाला में खाद बनाना ८४; कृत्रिम गोबर की खाद ९३; २—मिश्र-खाद या कम्पोस्ट, खाद बनाने की रीति ९५; कम्पोस्ट खाद और लोकमत १०६; ३—विष्टा की खाद (सोन खाद) १०८; विष्टा से खाद बनाने की रीति ११०; ४—पेशाब की खाद ११९; पेशाब की खाद कैसे बनायें? १२४; ५—कूड़े-कचरे की खाद १२७; ६—हरी खाद १२८; हरी खाद पर लोकमत १३६; ७—खली की खाद १३८; ८—लेंडी व लीद की खाद १४७; ९—पनाला—गंदे नाले के पानी की खाद १४९;

१०—बीट और ग्वानो[1] की खाद १५१, ११—नदी नाले और तालाब की कांप की खाद १५५।

५. नोषजनीय खाद १५७–१८०

१—काजल १५७, २—कसाईखानों मे प्राप्त खाद१५८; ३—गोश्त का ग्वानो१६०; ४—खून १६१, ५—मछली की खाद १६२; ६—चूने की खाद १६६; ७—नमक की खाद १७०, ८—शीरे की खाद १७२, ९—चिदे, कतरन, झाड़न आदि की खाद १७४; १०—गटर फलाय, ११—थूहर की खाद १७६; १२—चमड़े के टुकड़े की खाद १७७, १३—सामुद्रिक वनस्पति की खाद, १४—जलज वनस्पति की खाद १७८; १५—लकड़ी के बुरादे की खाद, १६—ईट-खपरैल के चूरे की खाद, १७—साबुन की खाद १७९; १८—हाथीदांत, मीग, सूम आदि की खाद १८०।

६. उर्वरक और जमीन की उर्वरा शक्ति १८१–२१३

उर्वरक के खिलाफ लोक-मत १८७; १—अमोनियम सलफेट १९४; अमोनियम सलफेट और लोकमत २०४, २—सोडियम नाइट्रेट २०६; ३—अमोनियम नाइट्रेट २१०; ४—पोटैशियम नाइट्रेट, ५—कैलशियम सायनामाइड (नाइट्रोलिम) २११; ६—नाइट्रेट ऑफ लाइम २१२।

७. फासफेटवाली खादें २१४–२२७

हड्डी सड़ाने की विधियां २१९; बेसिक स्लैग २२४; अन्य फासफेटयुत खादें २२७।

---

१. पृष्ठ १५१ पर के 'खानो' को 'ग्वानो' पढ़िये।

८. पोटाशवाली खादें २२८–२३७

लकड़ी की राख की खाद २३०; जिपसम या कैलशियम सलफेट (हरसोंठ) २२३; अन्य उर्वरक २३४ ।

९. कुछ आवश्यक बाते २३८–२४६

खाद का घोल २४२; खाद देने का तरीका २४३; खाद और पानी का संबंध २४५; निराई-गुड़ाई २४५ ।

१०. विभिन्न फसलों के लिए उपयोगी खादें २४७–२६९

गन्ना २४७; धान २५२; कपास २५५; ज्वार २५८; मक्का २६०; मिर्च २६२; मूंगफली, फूल-फल-झाड़ २६३; गेहूं २६५; आलू २६८; अंगूर २६९ ।

परिशिष्ट—१ २७०

परिशिष्ट—२ २७१

परिशिष्ट—३ २७२

खाद और उसके उपयोग

: १ :

प्रारंभिक जानकारी

बिना हांकी-जोती जमीन पर कुछ ऐसी वनस्पतियां उग आती हैं, जो मनुष्य की सहायता के बिना अपने-आप फूलती-फलती रहती हैं। ये फसल के पोषण और वृद्धि में रुकावट डालती हैं। इन्हें नष्ट करने की ओर किसानों को बहुत ही अधिक ध्यान देना पड़ता है। वैज्ञानिक अन्वेषणों तथा अनुसंधानों द्वारा पौधों की नस्लों में सुधार करके अनेक नई नस्लों को जन्म दिया गया है, जिनके कारण खाद्यान्न की तथा अन्य उपयोगी फसलों की पैदावार का दर्जा बहुत-कुछ ऊंचा हुआ है। किसानों का काम तो केवल इन नस्लों को बड़े पैमाने पर बोकर लाभ उठाना ही रह जाता है। जरूरत से ज्यादा पानी खेत से बाहर निकालकर और जुताई, खाद, निराई-कुलपाई आदि खेती के आवश्यक कार्यों को पूरा करके विषैले पदार्थों को मिट्टी में से निकाल बाहर करने की ओर ध्यान देना आवश्यक है। इन सबका एकमात्र उद्देश्य जमीन में हवा, पानी और भोज्य पदार्थ पर्याप्त मात्रा में जुटाना ही है।

मिट्टी

वस्तुतः मिट्टी ही पौधे के भोज्य पदार्थ का एकमात्र अटूट खजाना है। किंतु इस अक्षय या अटूट खजाने का पूरे-का-पूरा अंश ऐसी हालत में नहीं होता कि पौधों की जड़ें उसे ग्रहण कर सकें। इनमें पौधों का पोषण करने की क्षमता का अभाव-सा ही रहता है। भौतिक, रासायनिक और

शाकाणुओं या जीवाणुओं (बैक्टीरिया) के क्रिया-कलाप द्वारा ही मिट्टी में के भोज्य पदार्थ जड़ों द्वारा ग्रहण किये जाने की अवस्था में आते हैं।

लवण आदि पदार्थ मिट्टी में अघुलनशील अवस्था में ही रहते हैं। ध्यान-पूर्वक परीक्षण करने से ज्ञात हो जाता है कि भिन्न-भिन्न स्थानों की मिट्टी के रूप-रंग, वयन या पोत आदि में भिन्नता होती है। कुछ किस्म की मिट्टियां कुछ दूसरे किस्म की मिट्टियों से अधिक उर्वरा होती हैं और इसी आधार पर किसी खेत को उर्वर और किसी को अनुर्वर कहते हैं।

खाद

किसान, साधारणतः, खाद उस पदार्थ को कहते हैं, जो घास-फूस आदि और प्राणियों द्वारा मल-मूत्र के रूप में शरीर से बाहर फेंके गये पदार्थों से तैयार किये जाते हैं। न जाने कितने समय से, ये पदार्थ, खेत-खलिहानों तथा गोठों से हटाकर गढ्ढों में सड़ाये जाते और तब खेत की मिट्टी में मिलाये जाते रहे हैं। इधर कुछ वर्षों से रसायन-विज्ञान की सहायता से कई ऐसे पदार्थों का निर्माण किया जाने लगा है, जिनके द्वारा जमीन को, पौधों के आवश्यक भोज्य पदार्थ, समुचित अनुपात में, दिये जा सकते हैं और दिये जाते हैं। इनके अलावा नाना प्रकार की वनस्पति, हड्डी-गोश्त, खनिज-पदार्थ आदि द्वारा भी, जिन्हें पौधे ग्रहण कर लेते हैं, उन भोज्य पदार्थों की पूर्ति की जाती है।

पौधा

पौधे कुछ रासायनिक पदार्थों के संयोग से बने होते हैं। किसी-किसी रूप में इन तत्वों की पूर्ति किये बिना पौधे की देह का निर्माण हो ही नहीं सकता है। रासायनिक विश्लेषण द्वारा यह बात ज्ञात की जा सकती है और अन्वेषण द्वारा यह भी पता लगाया जा सकता है कि पौधे ने ये तत्व कहां से प्राप्त किये हैं।

रासायनिक विश्लेषण

विश्लेषण का कार्य उलझनभरा है। फिर भी, अति संक्षेप में, इस क्रिया पर विचार करना अप्रासंगिक न होगा। सुखाकर बहुत अधिक

गर्मी पहुंचाने पर पौधा जल जाता और थोड़ी-सी राख ही शेष रह जाती है। पौधे का अधिकांश गैस या वाति-रूप में उड़कर वातावरण में मिल जाता है और बहुत ही थोड़ा भाग, राख के रूप में, शेष रह जाता है। राख ही पौधे की देह में का खनिज अंश है, जो वाति (गैस) के रूप में उड़कर वातावरण में विलीन नहीं होता है।

भिन्न-भिन्न प्रकार के पौधों में जैव-पदार्थ (जीव-संबंधी पदार्थ) और राख का अनुपात भिन्न-भिन्न होता है। इतना ही नहीं, पौधे के भिन्न-भिन्न अवयवों में भी यह भिन्नता देखी जाती है।

सूखे पौधे या किसी वानस्पतिक पदार्थ के जलाये जाने पर उसमें से गैस के रूप में निकल जानेवाली गैसों को इसी काम के लिए विशेष रूप से बनाये गये पात्र में एकत्रित करके जांच की जा सकती है। इस गैस में उज्जन, ओषजन, नोषजन, कर्बन, गंधक, आदि तत्व वर्तमान रहते हैं। इनके अनुपात में अत्यधिक भिन्नता देखी जाती है। किंतु मोटे तौर से कहा जा सकता है कि गैसों के वजन का $\frac{१}{२}$ कर्बन, $\frac{१}{३}$ भाग ओषजन, $\frac{१}{१०}$ भाग उज्जन, $\frac{१}{२०}$ भाग नोषजन और $\frac{३}{१००}$ भाग से भी कम गंधक रहता है।

पौधे के तने, शाखा और पत्तों मे राख का अंश ५ प्रतिशत, और बीज में ५० प्रतिशत होता है। पौधे की बाढ़ के लिए राखवाले अंश का होना नितांत आवश्यक है। इसमें पोटैशियम, मैगनेशियम, कैलशियम (चूना), आयरन (लौह), फासफरस, तथा सोडियम, सिलिकान, क्लोरिन आदि भी रहते हैं। लिथियम, मैंगनीज, और कुछ अन्य तत्व भी कभी-कभी अति सूक्ष्म मात्रा में पाये जाते हैं।

रासायनिक विश्लेषण से यह ज्ञात होता जाता है कि कई तत्वों के मिलने से पौधे की देह बनती है। रासायनिक विश्लेषण के लिए सबसे पहले जमीन में से तुरंत ही उखाड़े हुए पौधे को तौल लेने के बाद, १० डिग्री (सी) ताप पहुंचाकर उसे सुखाया जाता है। इसके बाद उसे फिर तोला जाता है। इससे यह सहज ही ज्ञात हो जाता है कि पौधे की देह में कितना प्रतिशत जलांश था। पौधे की देह में पानी का प्रतिशत परिमाण बहुत अधिक होता है। काष्ठमय कठोर भाग में प्रतिशत ५०, कोमल भाग में प्रतिशत ७५ और सद्य-जात (तुरत निकले) भाग में ८५ से ९५ प्रतिशत

उस ओर आकृष्ट हो। आज देश में कोई भी वास्तविक विरोधी दल नहीं है। अतः उत्तर प्रदेश में हम लोग प्रजासमाजवादी दल को ऐसे संघटन का रूप प्रदान करना चाहते हैं जो सरकार से बाहर रहने पर वास्तविक विरोधी दल का काम करे तथा सरकार बनाने पर देश को समाजवाद की ओर ले चले।

संसद और विधान सभाओं में विरोधी दल ऐसा होना चाहिये जो जनता के दुःखों और आकांक्षाओं को ध्वनित और प्रतिबिम्बित कर सके। आज संसद और विधान सभाएं निर्जीव सी हैं। रक्तहीन हैं। उन्हें वही दल जीवन प्रदान कर सकता है जिसका नेतृत्व अधिकारारूढ़ दल से बंधा नहीं है। आज पार्टी का नेतृत्व जान बूझ कर या अनजान में देश के मुख्य प्रश्नों की अपेक्षा कर रहा है।

राष्ट्रीय कार्य समिति के वर्तमान कार्यों से समस्त देश के सौ दो सौ समाजमादी विधान मण्डलों में चले जायेंगे। कुछ को मन्त्रिमण्डलों में स्थान मिल जायगा। यह सब कुछ देश के पुनर्निर्माण में सहयोग के नाम पर होगा। क्या हम लोग १००, २००, नेताओं तक ही सीमित हैं या हम जनता की पार्टी हैं जिसका उद्देश्य देश का कायाकल्प करना है।

इन सब बातों के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट कर लेने पर ही समाजवादी आन्दोलन का भविष्य निर्भर है। प्रजा-समाजवादी दल अपना स्वरूप स्थिर करने के बाद कांग्रेस के कुशासन की आलोचना करने तथा देशव्यापी आंदोलन करने में सक्षम हो सकेगा। तभी योग्य व्यक्ति विधान मंडलों तथा उत्तरदायित्व के पदों पर पहुंच सकते हैं।

शोक प्रस्ताव

प्रजा सोशलिस्ट पार्टी उत्तर प्रदेश का द्वितीय वार्षिक अधिवेशन श्री रामनरेश सिंह की असामयिक मृत्यु पर हार्दिक शोक प्रगट करता है। रामनरेश सिंह जी की जो देन समाजवाद के आन्दोलन में है, वह चिरस्मरणीय रहेगा। इस समय जब कि समाजवादी आन्दोलन को उग्र बनाने के लिये उनकी आवश्यकता थी एकाएक हमारे बीच से उठ जाना, बहुत धक्का पहुँचाता है। सम्मेलन उनके परिवार के प्रति समवेदना प्रगट करता है।

यह सम्मेलन मशहूर मजदूर नेता श्री एन० एम० जोशी तथा मुनिराज सिंह (जौनपुर) की असामयिक मृत्यु पर शोक प्रगट करता है और इनके परिवार के प्रति अपनी समवेदना प्रगट करता है।

प्रान्तीय मन्त्री की रिपोर्ट

वस्तुतः इस रिपोर्ट को हमारे बुजुर्ग रहनुमा तथा निगोहां सम्मेलन में चुने गये प्रान्तीय मन्त्री साथी रामनरेश सिंह को पेश करनी थी किन्तु हम लोगों के दुर्भाग्य से अब वे हमारे बीच नहीं रहे। उनके निधन के बाद जनवरी के अन्त में मुझे यह जिम्मेदारी सौंपी गई। इसमें मैं संक्षेप में, जो गत वर्ष में काम हुआ, उसकी रिपोर्ट आपके सामने रखूंगा।

रेती को गीली बनाये रखने पर बीज उग आते हैं और बीज में के भोज्य पदार्थों के समाप्त होने तक पौधे बढ़ते रहते हैं। रेती में भोज्य पदार्थों का अभाव रहने के कारण बीज में के भोज्य पदार्थ समाप्त होते ही पौधा मुरझाकर सूख जाता है। इन गमलों में से प्रत्येक में, किसी एक भोज्य पदार्थ को छोड़कर, शेष सभी भोज्य पदार्थों का घोल सीचते रहने पर पौधे बढ़ते रहते हैं और यथासमय बीज भी आ ही जाते हैं। सोडियम, सिलिकॉन, क्लोरिन आदि न देने पर भी पौधे की बाढ़ पर कुछ भी बुरा असर नहीं पड़ता है और पौधे की देह में इन पदार्थों का अभाव ही रहेगा। यही कारण है कि इन्हें आवश्यक भोज्य पदार्थों की श्रेणी में नहीं माना जा सकता है। भोज्य पदार्थों में कर्बन का समावेश न करने पर भी पौधे की वृद्धि में रुकावट नहीं पड़ती है और पौधे की देह में, सामान्य मात्रा में, यह पाया भी जाता है। इससे यह साफ प्रकट होता है कि पौधों को यह पदार्थ वातावरण से ही प्राप्त हुआ है। नोषजन, गंधक या राख में पाये जानेवाले तत्वों में से किसी एक तत्व को भोज्य पदार्थ में सम्मिलित न करने का परिणाम यह होता है कि बीज में का भोजन का संग्रह समाप्त होते ही पौधा मर जाता है। इससे यह भी ज्ञात हो जाता है कि नोषजन, पोटैशियम मैगनेशियम, आयरन (लौह), सलफर (गंधक) और फासफरस आवश्यक भोज्य पदार्थ हैं—इनको भोज्य पदार्थों में सम्मिलित करना अनिवार्य है। इस प्रयोग से यह भी ज्ञात हुआ है कि पौधे के आवश्यक भोज्य पदार्थों में से किसी एक को आवश्यकता से कम मात्रा में देने का नतीजा यह होता है कि पौधों की वृद्धि उस हद तक रुक-सी जाती है।

दूसरा प्रयोग—रेती या कोयले के चूरे के स्थान पर पानी का उपयोग करके भी प्रयोग किया जा सकता है। सिद्धांत तो वही है, किन्तु भोज्य पदार्थों को पौधों की जड़ों तक पहुंचाने का साधन, रेती या कोयले के चूरे के बदले में, शुद्ध पानी को बना दिया जाता है। शुद्ध किये गये पानी अर्थात् आसुत बारि (distilled water) में सभी भोज्य पदार्थ घुलाकर एक नंबर का घोल तैयार किया जाता है। दूसरे नंबर के घोल में पोटैशियम नाइट्रेट छोड़कर शेष सभी भोज्य पदार्थ घुले रहेंगे। तीसरे नंबर का घोल

कैलशियम लवण छोड़कर शेष सभी पदार्थों का मिश्रित घोल होगा। चौथे नंबर के घोल में मैगनेशियम लवण के अलावा बाकी के सभी पदार्थ मिले हुए होंगे। लोहे के लवण को छोड़कर बाकी के सभी पदार्थ मिला हुआ मिश्रण पाचवें नबर का घोल होगा। फासफरस के यौगिक के बिना सभी पदार्थो को मिलाकर तैयार किया गया घोल छठे नंबर का होगा। सातवें नंबर के घोल में सलफर (गंधक) का अभाव रहेगा और आठवें नंबर के घोल में नोषजन के यौगिक के अलावा शेष सभी वस्तुएं मिली रहेंगी। ये सभी घोल तैयार करके अलग-अलग शीशियों में भरकर उन-पर नंबर लगा दिये जायं।

एक नंबर का घोल, जिसमें पौधे के सभी भोज्य पदार्थ मिले रहेंगे, निम्नलिखित पदार्थ मिलाकर तैयार किया जाता है :

पोटैशियम नाइट्रेट १ ग्राम, पोटैशियम फास्फेट १ ग्राम, मैगनेशियम सलफेट १ ग्राम, कैलशियम नाइट्रेट ३ ग्राम, फेरिक क्लोराइड सोल्यूशन थोड़ी-सी बूदें और १००० घन सेटीमीटर आसुत वारि। यह ६ प्रतिशत शक्तिवाला 'स्टॉक सोल्यूशन' है। इसे १ प्रतिशत शक्ति का बनाने के लिए पांच हजार घन सेंटीमीटर पानी और मिला दिया जाना चाहिए। इस रीति से तैयार किये गये मिश्रण से आवश्यकतानुसार गमलों में बोये गये पौधों को सीचते रहना चाहिए।

वाटर कलचर—एक ही आकार-प्रकार के कांच के बरतन या चौड़े मुंह की शीशियां ली जायं, जिनके मुंह पर रबर के ऐसे कॉर्क लगाये जा सकें, जो दो टुकड़ों में हों और जिनके बीच में पौधे का तना जमाने के लिए छेद हो। जितनी शीशियां या (जार) लिये जायं, उतने ही रोप या पौध सब ही एक किस्म के और जहांतक संभव हो, समान आकार के लिये जायं। शीशियों या जार पर नंबर की चिटें लगा दी जायं। बोतलों पर काला कागज लपेट दें। इसके बाद उन्हें प्रकाश में रख दें। प्रत्येक घोल का पानी नापकर नं० १ की बोतल में नं० १ का घोल, नं० २ की बोतल में नं० २ का घोल और इसी प्रकार घोल और बोतल के नंबर को देखकर बराबर-बराबर घोल भरें। एक-एक पौधे की जड़ें, बोतल के पानी में डुबा-कर, कॉर्क के छेद में पौधे का तना ठीक तरह से जमाकर बोतल के मुंह

प्र कॉर्क जमा दिया जाय। जड़ों को हवा मिलती रहे, इसका समुचित प्रबंध कर दिया जाय।

इन प्रयोगों से यह पता चल सकता है कि कौन-कौन-से दस तत्व आवश्यक भोज्य पदार्थ हैं और उनका पौधों की वृद्धि और विकास पर क्या असर पड़ता है। इससे यह भी मालूम हो जाता है कि भोज्य पदार्थ किस रूप में अधिक मात्रा में ग्रहण किये जाते हैं और पौधे के जीवन में इनका क्या महत्व है।

इस प्रकार किये गये प्रयोगों से यह बात साबित हो जाती है कि, पोटैशियम, कैलशियम, मैगनेशियम, लोह, क्लोराइड, सिलिका, सोडियम तथा कार्बन, उज्जन, ओषजन, नोषजन, गंधक और फासफरस की पूर्ति किये बिना पौधों की बाढ़ अच्छी नहीं होती है, वे पूरी तरह स्वस्थ भी नहीं होते हैं। आवश्यक भोज्य पदार्थों की, एक विशेष अनुपात में ही, पानी में घोलकर पूर्ति करना नितान्त आवश्यक है। ओषजन और कर्बन-द्वि-ओषिद मिट्टी में से नहीं, वातावरण में से ही ग्रहण किये जाते हैं। श्वासोच्छ्वास क्रिया को करने के लिए सजीव कोशों को ओषजन की जरूरत रहती है और हरे कोशों द्वारा भोज्यान्न तैयार करने में कर्बन-द्वि-ओषिद आवश्यक होता है। वातावरण में स्थित मुक्त नोषजन पौधों के लिए एकदम निरुपयोगी है। पौधों को प्रकाश में रखना भी बहुत ही जरूरी है।

वातावरण

वातावरण में मुख्यतः दो गैसें—ओषजन और नोषजन हैं। ये १ : ४ के अनुपात में विद्यमान हैं। ये रासायनिक रूप में नहीं, मामूली रूप में मिश्रित रहती हैं। किन्तु इनका अनुपात लगभग स्थिर ही रहता है। इन दो मुख्य गैसों के अलावा वातावरण में कुछ मात्रा में कर्बन-द्वि-ओषिद, जल-वाष्प और सूक्ष्म मात्रा में नाइट्रिक एसिड, अमोनिया, धूल के कण, सूक्ष्म दर्शक यंत्र की सहायता से ही दिखाई दे सकनेवाले सूक्ष्म जीवाणु और अन्य पदार्थ रहते हैं।

ओषजन—वातावरण का $\frac{१}{५}$ भाग ओषजन से व्याप्त है। यह एक रासायनिक तत्व है। यह किसी भी अन्य तत्व में जल्द ही घुल-मिल जाता

और यौगिक का रूप ग्रहण कर लेता है। यौगिक के निर्माण की इसी क्रिया को ओषिदीकरण कहते हैं। इस क्रिया में ताप या उष्णता पैदा होती है। यदि ताप अति शीघ्रता से उत्पन्न होता है, तो एकदम ज्वाला भड़क उठती है। यदि यह क्रिया अति धीमी गति से होती है, तो ताप उतना बढ़ नहीं पाता है; किन्तु अंतिम परिणाम वही होता है—तत्व ओषजन में मिलकर नया रूप ग्रहण कर लेते हैं।

प्राणियों की श्वासोच्छ्वास क्रिया और जैव पदार्थों की सड़न-क्रिया में बहुत-कुछ साम्य है। प्राणियों के शरीर और सभी प्रकार के जैव पदार्थों में कर्बन और उज्जन वर्तमान रहता है। इनका ओषिदीकरण होने पर कर्बन के ऑक्सिड (ओषिद) और उज्जन के ऑक्सिड (पानी) का निर्माण होता है, फिर चाहे यह क्रिया धीमी गति से हो अथवा श्वासोच्छ्वास की क्रिया या जलाने की क्रिया के समान अति तेज गति से हो। पौधे भी प्राणियों के समान सांस लेते और छोड़ते हैं। वे वातावरण में से नोषजन ग्रहण करते और कर्बन-द्वि-ओषिद निकालते हैं। दिन को यह क्रिया दिखाई नहीं पड़ती है। पौधे कर्बन-द्वि-ओषिद को ग्रहण करके ओषजन को निकालते भी हैं।

नोषजन—वातावरण के $\frac{4}{5}$ भाग में नोषजन व्याप्त है। ओषजन के ही समान यह भी एक तत्व है। यह दूसरे तत्वों में घुल-मिल नहीं जाता है। कई पदार्थ ओषजन में अतिशीघ्रता से जल उठते हैं किन्तु नोषजन में पदार्थ जल ही नहीं सकते हैं। ओषजन के एक भाग के साथ नोषजन के चार भाग पौधों द्वारा ग्रहण किये जाते हैं और नोषजन अधिक मात्रा में पौधों के लिये अत्यावश्यक होने पर भी, वे वातावरण में के मुक्त नोषजन को इस रूप में ग्रहण कर ही नहीं सकते हैं।

बिजली चमकने पर वातावरण में के ओषजन और नोषजन संयुक्त होकर पानी के संयोग से अतिसूक्ष्म मात्रा में नाइट्रिक एसिड का निर्माण करते हैं, जो वातावरण में व्याप्त रहता है। अब तो कारखानों में बड़े पैमानेपर नाइट्रिक एसिड तैयार किया जाने लगा है।

नोषजन और उज्जन के यौगिक में बिजली की धारा प्रवाहित करने से अमोनिया तैयार होता है, किन्तु वातावरण में उज्जन बहुत ही कम

मात्रा में होता है और संभवतः नैसर्गिक रूप में यह यौगिक बनता ही नहीं है।

वातावरण में अमोनिया सूक्ष्म मात्रा में अवश्य ही मौजूद रहता है। यह पत्थर के कोयले के पूर्णरूप से न जल पाने पर या जैव पदार्थों की सड़न-क्रिया से प्राप्त किया जाता है। इसका कुछ भाग नाइट्रिक एसिड के निर्माण में व्यय हो जाता है और एक बड़ा भाग सीधे मिट्टी द्वारा सोख लिया जाता है। शेष अमोनिया, नाइट्रिक एसिड और नोषजन के अन्य यौगिक वर्षा के पानी में घुलकर उसके साथ ही जमीन पर उतर आते और मिट्टी में मिल जाते हैं। किन्तु इस प्रकार प्राप्त होनेवाले नोषजन की मात्रा बहुत ही कम होती है।

सामान्य अवस्था में नोषजन ओषजन में मिलता नहीं है। किसी तीसरे पदार्थ के विद्यमान होने पर ये सब मिल जाते हैं। कर्बन को पोटैशियम कार्बोनेट के साथ गरम करके उसमें नोषजन गैस छोड़ने से पोटैशियम साइनामाइड बनाया जा सकता है। इसमें कर्बन और नोषजन का यौगिक विद्यमान रहता है। बिजली की भट्टी में चूर्णक या चूना और कर्बन को नोषजन के साथ ताप पहुंचाकर कुछ यौगिक तैयार किये जा सकते हैं, जो नोषजन की पूर्ति के लिए खाद की तरह उपयोग में लाये जा सकते हैं। प्रयोगों से पता चला है कि बिजली की धारा प्रवाहित करने से पौधों की बाढ़ अच्छी होती है। किन्तु अभी तक यह निश्चित नहीं हो पाया है कि पौधों की वृद्धि का कारण नोषजन का प्रत्यक्ष रूप में ग्रहण किया जाना ही है।

कुछ वानस्पतिक जीवाणुओं या शाकाणुओं के क्रिया-कलाप से नैसर्गिक अवस्था में ही नोषजन अन्य तत्वों से मिल जाता है। यह सभी जानते हैं कि फसलों के पौधे, वातावरण में के नोषजन को ग्रहण करके अपने उपयोग में नहीं ला सकते हैं। अलजी (काई) और कुछ किस्म के जीवाणु वातावरण में के मुक्त नोषजन को ग्रहण करके पौधों को प्रदान करने की क्षमता रखते हैं। द्वि-दल (दालवाली) जाति के पौधों की जड़ों पर नोषजन संग्रहीत करने की क्षमता भी कुछ किस्म के जीवाणुओं में है। इन जीवाणुओं के क्रिया-कलाप से द्वि-दल जाति के पौधों के अलावा, अन्य किसी जाति के

पौधे वातावरण में के नोषजन को ग्रहण करके उपयोग में लाने की क्षमता नहीं रखते हैं। जैव पदार्थ में के नोषजनीय यौगिक टूट-टूटकर नाइट्रिक एसिड में बदल जाते हैं और इसी रूप में ये पौधे की जड़ों द्वारा चूस लिये जाते हैं। इस प्रकार वातावरण ही वह साधन है जो पौधों को नोषजन प्रदान करता है; यद्यपि पौधे, सामान्यतः, वातावरण में का नोषजन प्रत्यक्ष रूप में ग्रहण ही नहीं कर सकते हैं।

जल-वाष्प—तापमान और दबाव में घट-बढ़ होने पर वातावरण में के जल-वाष्प का प्रतिशत परिमाण भी घट-बढ़ होता रहता है। इसी कारण से किसी स्थान-विशेष के वातावरण में के जल-वाष्प के परिमाण में घट-बढ़ होती रहती है। मिटटी में के जल के भाप बनकर वातावरण में मिलते रहने और नदी-नाले, तालाब आदि के जल के, वाष्प-रूप ग्रहण करके वातावरण में फैलते रहने से वातावरण में जल-वाष्प का प्रतिशत परिमाण बढ़ जाता है। बादल और ओस बनने से यह परिमाण घट जाता है। बादल जल-वाष्प से नहीं बने होते हैं—ये तो जल के अति सूक्ष्म कणों के हवा में फैलने से ही बनते हैं।

कर्बन-द्वि-ओषिद—सूखी हवा के दस हजार भागों में चार भाग कर्बन-द्वि-ओषिद विद्यमान रहता है। दूसरे शब्दों में, यह परिमाण ०·००४ प्रतिशत के लगभग है। ओषजन या नोषजन के समान यह तत्व नहीं है। कर्बन और ओषजन के रासायनिक रूप में मिल जाने से ही यह बनता है, प्राणियों के उच्छ्वास और वनस्पतियों के सड़ने से तथा कर्बन और कर्बन के यौगिकों के अन्य तरीकों से होनेवाले ओषिदीकरण द्वारा ही इसका निर्माण होता है। इसे कर्बन-द्वि-ओषिद इसलिए कहते हैं कि यह चूना और उसीकी किस्म के अन्य पदार्थों से मिलकर कार्बोनेट ऑफ लाइम का निर्माण करता है। कर्बन और ओषजन का यह मिश्रित रूप इतनी अधिक एक-रूपता धारण कर लेता है कि इन दोनों को अलग-अलग करना अत्यंत कठिन होता है। प्रकाश में हरी वनस्पति वातावरण में से कर्बन-द्वि-ओषिद ग्रहण कर तत्वों को अलग-अलग करके ओषजन को निकालती रहती है और कर्बन को वनस्पति अपने शरीर के तंतु-जाल (Tissue) के निर्माण के हेतु रख लेती है।

अन्य-पदार्थ—वर्षा के पानी की जांच-पड़ताल करके यह जाना जा सकता है कि उसमें किस परिमाण में कौन-कौन-से अशुद्ध पदार्थ विद्यमान हैं। नाइट्रिक एसिड और अमोनिया के अलावा क्लोराइड (निरेय), सोडियम सलफाइड, मैगनेशियम सलफाइड और कैलशियम सलफाइड भी वर्षा के जल में रहते हैं, जो तुरंत ही पानी में घुल जाने की अवस्था में रहते हैं। सिलिका, अलुमिना और आयरन ऑक्साइड भी घुलनशील अवस्था में होते हैं। इन पदार्थों के अलावा सूक्ष्मदर्शक यंत्र की सहायता से ही दिखाई देनेवाले सूक्ष्म जीवाणु भी विद्यमान रहते हैं। ये हैं, दूध को खराब करने—फाड़नेवाले कीटाणु, क्षय के कीटाणु आदि रोगोत्पादक जीवाणु, तथा पदार्थों को सड़ाने और उनमें दुर्गंध पैदा करनेवाले अति सूक्ष्म जीव।

भारत के भिन्न-भिन्न भागों के वर्षा के जल की जांच-पड़ताल नहीं की गई है, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि किस राज्य के, किस प्रदेश के, किस स्थान के, वर्षा के जल में नोषजन, अमोनिया और नाइट्रिक एसिड के रूप में, किस प्रतिशत मात्रा में मौजूद हैं और प्रतिवर्ष कितना नोषजन, एक एकड़ जमीन को वर्षा के जल के साथ प्राप्त होता है। भिन्न-भिन्न स्थानों के वर्षा के जल में क्लोराइड और सलफेट के प्रतिशत परिमाण के अनुपात में भी अत्यधिक भिन्नता देखी जाती है। किन्तु भारत में अभी तक यह सब जानने का प्रयत्न ही नहीं किया गया है।

: २ :

मिट्टी

मिट्टी कैसे बनती है ?

मिट्टी के आदिस्रोत और उसकी रचना या बनावट पर विचार इसलिए किया जा रहा है कि उसमें पाये जानेवाले भौतिक और रासायनिक पदार्थों का ज्ञान प्राप्त किया जा सके एवं मिट्टी द्वारा पौधों के भोज्य पदार्थों की पूर्ति की जाने की क्रिया की जानकारी प्राप्त कर ली जाय।

जमीन में नीचे की सतह पर स्थित ठोस चट्टानों से ही मिट्टी बनी है। चट्टानों और सतह पर की मिट्टी के बीच में स्थित तहों के अध्ययन से मिट्टी की बनावट की जानकारी प्राप्त हो जाती है। वातावरण के परिवर्तन का प्रभाव चट्टानों पर पड़ता है, जिससे उनकी ऊपरी सतह में दरारें पड़ जाती हैं और तब धीरे-धीरे ये टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं। ये टुकड़े कई आकार के होते हैं और धीरे-धीरे छोटे होते जाते हैं। कालांतर में यही चूर-चूर होकर मिट्टी का रूप ग्रहण कर लेते हैं। जमीन की सतह के सबसे ऊपर के—छः से आठ इंच की गहराई तक के, तह की मिट्टी का रंग, सामान्यतः, जैव पदार्थों के एकत्रित हो जाने के कारण, काला ही होता है। इसके नीचे की मिट्टी भी लगभग इसी रंग की होती है।

कभी-कभी एक स्थान के पदार्थ दूसरे स्थान पर जमा होकर भी मिट्टी बनाते हैं। यह क्रिया वर्षा के पानी के बहाव या बर्फ की चट्टानों के फिसलकर दूर-दूर तक बह जाने से पूरी होती है। मिट्टी की बनावट पर विचार करने से पहले चट्टानों के संबंध में दो शब्द लिखना आवश्यक ही होगा।

खनिज-पदार्थ—चट्टानों के छोटे-छोटे टुकड़े या टोल या चट्टान में खनिज तत्व छोटे-छोटे रवों या स्फटिकों के रूप में शुद्ध रूप में विद्यमान

रहते हैं। एक ही चट्टान में कई प्रकार के खनिज शुद्ध रूप में पाये जाते हैं। चट्टानों में सामान्यतः, सिलिकेट ऑफ पोटैश, सोडा, मैगनेशिया, चूना और अलुमिना मौजूद रहते हैं। सलफेट्स, फासफेट्स, कार्बोनेट्स, फ्लुओराइड्स, सलफाइड्स, ऑक्साइड्स और अन्य यौगिक भी थोड़ी-बहुत मात्रा में पाये जाते हैं। स्थानाभाव के कारण इस संबंध में अधिक नहीं लिखा जा सका है।

चट्टानें मुख्यतः अग्नि-जन्य, जल-जन्य और प्राणि-जन्य (organic) होती हैं।

अग्नि-जन्य चट्टानें—भूगर्भ-स्थित उष्णता से पिघलकर चट्टानें द्रव की शक्ल में आ जाती हैं। ज्वालामुखी के फट पड़ने पर यह पदार्थ जमीन की सतह पर दूर-दूर तक फैल जाते हैं और शीतल होने पर ठोस हो जाते हैं। इसीपर चट्टानें बनती रही हैं। जो चट्टानें धीरे-धीरे ठंडी होती हैं उनमें के रवों या स्फटिकों का आकार बड़ा होता है और ये स्फटिक आँखों से ही दिखाई दे जाते हैं। अतिशीघ्रता से ठंडी होनेवाली चट्टानों में स्फटिकों का आकार बहुत ही छोटा होता है और ये खुर्दबीन की सहायता से ही देखे जा सकते हैं।

जल-जन्य चट्टानें—अग्नि-जन्य चट्टानों के टुकड़े हो जाने और उसी स्थान पर उनके तह जम जाने से इनका निर्माण होता है। पानी के प्रवाह के साथ बहकर आये हुए पदार्थों के एक के ऊपर एक तहों के जम जाने से भी ये चट्टानें बनती हैं। ग्लेशियर (बर्फ की चट्टानों) के बहाव या नीचे की ओर लुढ़कने से तथा वायु, जल-प्रवाह, तापमान आदि के प्रभाव से जमीन कटती रहती है।

ग्लेशियर—बहुत ऊंचे पहाड़ों पर बर्फ जमी रहती है। तापमान बढ़ जाने पर बर्फ की चट्टानें पिघलने लगती हैं और बर्फ के बड़े-बड़े ढोके या बर्फ की शिलाएं पहाड़ के ढलाव की ओर तेजी से लुढ़कने लगती हैं। बर्फ की शिलाएं अपने साथ-साथ पत्थर की चट्टानों के बड़े-छोटे टुकड़े भी रगड़ते-पीसते नीचे की ओर लुढ़का ले जाती हैं। आपस में रगड़ने से पत्थर के टुकड़े गोल हो जाते हैं तथा छोटे-छोटे कण टूटकर चूर्ण में बदल जाते हैं। बर्फ की चट्टानों और जल-प्रवाह के साथ ये पदार्थ दूर-दूर के

प्रदेशों में फैलकर जम जाते हैं। कभी-कभी इनकी तह कई फुट गहरी होती है।

मौसम का प्रभाव—तापमान की घटा-बढ़ी, पाला, पानी, बर्फ, कर्बन-द्वि-ओषिद और ओषजन के प्रभाव से चट्टानें टूटती रहती हैं। यह कार्य सतत चला करता है।

तापमान घट-बढ़ जाने पर चट्टानें सिकुड़ती और फैलती हैं। इस क्रिया से चट्टानों में दरारें पड़ जाती हैं और पत्थर टूट जाते हैं। धीरे-धीरे चट्टानें टूट जातीं और पत्थर टूटकर कंकर-रेत में बदल जाते हैं। गरम सूखे मौसम में यह कार्य अति प्रभावशील होता है, कारण कि ऐसे मौसम-वाले प्रदेशों में रात और दिन के तापमान में बहुत अधिक अंतर होता है। मुख्यतः इसी कारण से गरम देशों में रेगिस्तान का जन्म हुआ है। उन प्रदेशों में दूसरे साधनों द्वारा शायद ही कभी कुछ हो पाता है।

चट्टानों में भरा हुआ पानी जमकर बर्फ का रूप धारण कर लेता है। पानी की अपेक्षा बर्फ को फैलने के लिए ज्यादा जगह की जरूरत होती है। बर्फ के दबाव से चट्टान की दरार कुछ और बड़ी हो जाती है। दरारों में भरे हुए पानी को चट्टान के छिद्रवाले भाग चूस लेते हैं और इस पानी के जम जाने से चट्टान को तोड़ने के कार्य में पर्याप्त सहायता मिलती है। इन साधनों द्वारा बड़ी-बड़ी चट्टानें टुकड़े-टुकड़े होकर चूर-चूर हो जाती हैं और तब मिट्टी बनती है।

पानी के प्रवाह से चट्टानों के टुकड़े एक-दूसरे से टकरा-टकराकर चिकने और गोल हो जाते हैं। कुछ खनिज पानी में बिल्कुल ही नहीं घुलते हैं। खनिजों के पानी में घुलने की क्रिया बहुत ही धीमी गति से, लेकिन सतत जारी रहती है और इस प्रकार बहुत बड़ा भाग मुक्त हो जाता है।

कर्बन-द्वि-ओषिद- पानी की पदार्थों को घुलाने की क्षमता, बहुत बढ़ा देता है। कार्बोनेट ऑफ लाइम-जैसे कुछ पदार्थ शुद्ध पानी में बिल्कुल ही नहीं घुलते हैं। किन्तु कर्बन-द्वि-ओषिदयुत पानी में ये बहुत जल्दी घुल जाते हैं।

उक्त सब साधन सम्मिलित रूप से या अलग-अलग एक लंबे समय तक

अपना करतब दिखाकर कड़ी और मोटी चट्टानों की रासायनिक या भौतिक तोड़-फोड़ करते रहते हैं।

जमीन की सतह में फेर-बदल—पानी के प्रवाह से या आंधी-हवा से मिट्टी या रेती के कण एक स्थान से हटकर किसी दूसरे स्थान पर जमा होते रहते हैं। आंधी से रेती उड़कर किसी दूसरे स्थान पर छोटी-बड़ी टेकरियां-सी बना देती है। यह हवा की ही मेहरवानी है कि राजस्थान का रेगिस्तान धीरे-धीरे उत्तर प्रदेश को हड़पता जा रहा है।

मिट्टी, रेत, कंकर-पत्थर आदि को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाकर जमा करने के लिए जल-प्रवाह एक मुख्य साधन है। जल-प्रवाहों द्वारा बहाकर ले गये पदार्थ नालों-खारों में से होकर नदियों में पहुंच जाते हैं और यदि मार्ग में, तली में या किनारों पर, जम नहीं जाते हैं, तो समुद्र में जा मिलते हैं। जल-प्रवाह की गति धीमी हो जाने या उसके मार्ग में बाधा उपस्थित हो जाने पर प्रवाह रुक-सा जाने पर जल में घुले हुए पदार्थ किनारों पर या तली में बैठ जाते हैं। जल-प्रवाहों के बीच में धीरे-धीरे बेट बन जाते हैं। इसी प्रकार नदी के मुहानों पर 'डेल्टा' का निर्माण हो जाता है।

नदी-नालों के प्रवाह के साथ बहकर आई हुई मिट्टी के जम जाने से बनी हुई जमीन को कलई की जमीन (alluvial soil) कहते हैं। यह जमीन बहुत ही ज्यादा उपजाऊ होती है। भूगर्भ में होनेवाली नाना प्रकार की उथल-पुथल और परिवर्तनों के कारण तलछटवाली चट्टानों का निर्माण होता है।

हरसोंठ (जिपसम), मामूली नमक आदि घुलनशील पदार्थ पानी में बहुत ही जल्दी घुल जाते हैं। पानी के भाप बनकर उड़ जाने पर इन पदार्थों के रवे या स्फटिक-से जम जाते हैं। इन पदार्थों की तह-पर-तह जम जाने से भी बड़ी-बड़ी चट्टानें बन गई हैं।

सेंद्रिय या जैव चट्टानें—सेंद्रिय या जैव पदार्थों से बनी हुई चट्टानों में खनिज पदार्थों का अभाव-सा ही रहता है। चूने के पत्थर, चॉक (खरिया मिट्टी) आदि पदार्थ प्राणियों के शरीर के कवच-शंख-सीपी आदि, या इन प्राणियों के शरीर के अवशेषों से ही बने होते हैं। शंख-सीपी कार्बोनेट

ऑफ लाइम से ही बने होते हैं। वनस्पति के अवशेषों से पत्थर के कोयले की चट्टानें आदि बनी हैं। सेंद्रिय या जैव-पदार्थों से बनी चट्टानें कृषि की दृष्टि से अत्यधिक मूल्यवान् और महत्व की हैं।

मिट्टी, रेत आदि की तह-पर-तह जमकर बनी हुई चट्टानों के संबंध में अधिक विवेचन करने की आवश्यकता नहीं जान पड़ती है।

रेत या बालू—समुद्र और नदी-नालों के तट पर रेत पाई जाती है। रेगिस्तान में तो चारों ओर रेत-ही-रेत दिखाई देती है। रेत के कण छोटे-बड़े आकार के होते हैं। रेती भारी होती है और मिट्टी हलकी। कृपि की दृष्टि से रेतीली जमीन हलकी मानी जाती है और मिट्टीवाली जमीन भारी। रेत के कणों में एक-दूसरे से सटकर चिपकने का गुण नही होता है। रेत के कणों के बीच में बहुत ज्यादा खाली जगह रह जाती है, जिससे उस खाली जगह में बहुत थोड़ा पानी भरा रह पाता है। धीरे-धीरे पानी के नीचे की सतह मे उतर जाने पर खाली स्थान में हवा भर जाती है। ये जमीनें कम उपजाऊ होती हैं।

मिट्टी—मटियार भूमि अधिक उर्वर होती है। इसके कणों में एक-दूसरे से सटकर चिपक जाने का गुण होता है। ये जमीनें भारी कहलाती हैं, कारण कि इनकी जुताई में अधिक श्रम करना पड़ता है और बैल-घोड़ों आदि पर ज्यादा जोर पड़ता है।

मिट्टी में छेद करके बिलों में रहनेवाले कृमियों-कीड़ों और प्राणियों के कार्य-कलापों का मिट्टी के गुण-धर्म पर काफी असर पड़ता है। नाना प्रकार के साधनों द्वारा चट्टानें चूर-चूर होकर ऐसी मिट्टी का रूप धारण कर लेती हैं जो पौधों को उगाने और उनका पोषण करने योग्य होती हैं। मिट्टी के अन्दर रासायनिक परिवर्तन होते रहते हैं जिससे मिट्टी में स्थित खनिज पदार्थ पौधों की जड़ों द्वारा सोख लिये जाने की अवस्था में आ जाते हैं। मिट्टी में स्थित पौधों के भोज्य पदार्थो की घुलनशील अवस्था में परि-वर्तित करने की क्रिया की गति पर ही जमीन की उर्वरा-शक्ति निर्भर करती है। जुताई, खाद, जमीन को परती रखना, आवश्यकता से अधिक पानी खेत से बाहर निकालना आदि क्रियाएं एकमात्र इसी उद्देश्य की पूर्ति के हेतु की जाती हैं कि मिट्टी की भौतिक अवस्था में सुधार हो।

भारत-जैसे विशाल देश में अनेक किस्म की मिट्टियां विद्यमान हैं। देश के भिन्न-भिन्न राज्यों और प्रदेशों में जुदी-जुदी किस्म की मिट्टी को जुदे-जुदे नाम दिए गये हैं और एक ही किस्म की मिट्टी जुदे-जुदे प्रदेशों में जुदे-जुदे नामों से पहचानी जाती है। अतएव, सभी किस्म की मिट्टियों पर यहां कुछ लिख सकना संभव नहीं है। यहां इतना ही लिख देना पर्याप्त होगा कि मिश्र बनावट की चट्टानों से बनी मिट्टी ज्यादा उपजाऊ होती है; किसी एक ही पदार्थ से बनी चट्टानों से निर्मित मिट्टी उतनी उपजाऊ नहीं होती है।

मिट्टी के भौतिक गुण

मिट्टी की भौतिक बनावट, मुख्यतः उसके कणों के आकार पर ही निर्भर करती है। गोल छेदवाली छलनी से छानकर उसमें के कंकर-पत्थर, रेत आदि सरलता से अलग किये जा सकते हैं। सूक्ष्म दर्शक यंत्र की सहायता से कणों का आकार जाना जा सकता है। मिट्टी में प्रतिशत ०.०० से ५० तक कंकर-पत्थर रेत पाई जा सकती है। जिस जमीन में खेती होती है, उसमें २ प्रतिशत से २० प्रतिशत तक ये पदार्थ मौजूद रहते हैं। भिन्न-भिन्न आकार के मिट्टी के कणों का प्रतिशत अनुपात, भिन्न-भिन्न किस्म की जमीन में भिन्न-भिन्न होता है। अनुमान लगाया गया है कि बलुई जमीन में ८० प्रतिशत से अधिक कण बड़े आकार के होते हैं और मटियार भूमि में ८० प्रतिशत से अधिक कण बहुत ही छोटे आकार के होते हैं। दुमट जमीन में मध्यम आकार के कणों की ही अधिकता होती है।

जमीन में मिट्टी के कण भिन्न-भिन्न तरीके से जमे रहते हैं। यदि सभी कण समान आकार-प्रकार के हों, तो किसी नाप में भरे हुए कणों की संख्या जानी जा सकती है। किन्तु सभी कणों का आकार-प्रकार समान नहीं होता है और उनकी जमावट भी अलग-अलग होती है। कण इस तरीके से जमे रहते हैं कि उनके बीच में खाली जगह रह जाती है। दबाकर या बरतन को हिलाकर कण अधिक पास-पास कर दिए जायं, तो उस बरतन में और भी ज्यादा कण भरे जा सकते हैं, कारण कि कण अधिक पास-पास

आ जाते हैं। मिट्टी के कण जितने ही अधिक पास-पास आ जाते हैं, उनके बीच में उतनी ही कम जगह खाली रह पाती है। कणों के बीच की खाली जगह कणों के आकार-प्रकार पर ही निर्भर करती है। सूखी मिट्टीवाली जमीन में कणों के बीच की खाली जगह में हवा भरी रहती है। धीरे-धीरे इस स्थान को पानी ग्रहण कर लेता है और हवा बाहर निकल जाती है।

बलुआर और मटियार भूमि के आपेक्षिक भार (specific gravity) में बहुत अन्तर होता है, कारण कि मटियार भूमि में कणों के बीच में खाली जगह कम होती है और बलुआर जमीन में ज्यादा। जमीन के नीचे की सतह का आपेक्षिक भार ऊपर की सतह के आपेक्षिक भार से अधिक ही होता है, कारण कि वे ज्यादा जमे हुए होते हैं अर्थात् कण एक-दूसरे से बहुत ही ज्यादा सटे हुए रहते हैं और उसमें जैव तत्व का परिमाण भी कम ही होता है।

मिट्टी में नमी—पौधों की पानी की आवश्यकता की पूर्ति करना भी मिट्टी का एक मुख्य कार्य है। मिट्टी की पानी की आवश्यकता की पूर्ति करने की क्षमता पर ही जमीन की उर्वरा-शक्ति बहुत-कुछ निर्भर करती है। किसान यह बात भली प्रकार जानते हैं कि खेत के गीले या सूखे हिस्से का, फसल पर, खाद, जुताई आदि के असर की अपेक्षा बहुत ज्यादा असर पड़ता है। मिट्टी की पानी की मांग की पूर्ति करने की क्षमता तापमान, मौसम, जमीन की भौतिक रचना आदि पर ही मुख्य रूप से आधारित रहती है।

पानी मुख्यतः वर्षा, बर्फ और ओस से ही प्राप्त होता है। इस प्रकार प्राप्त पानी जमीन में गहरा उतरकर और भाप बनकर हवा में उड़कर नष्ट हो जाता है। फिर भी, मिट्टी में पानी शेष रह ही जाता है। यही पानी या आलजल केशाकर्षण-क्रिया द्वारा पौधों को प्राप्त होता है।

वर्षामान—भारत के भिन्न-भिन्न प्रदेशों में न्यूनाधिक वर्षा होती है। कुछ भाग तो ऐसे भी हैं, जहां साल भर में नहीं के बराबर ही पानी बरसता है। अतएव एक ही स्थान पर सारे देश के वर्षामान पर कुछ भी नहीं लिखा जा सकता है। सभी राज्यों में भिन्न-भिन्न स्थानों का वार्षिक वर्षामान नापने का प्रबंध किया गया है। वर्षा का नाप इंचों में लिया जाता है।

एक इंच वर्षा का मतलब यह है कि एक एकड़ जमीन पर १०० टन पानी बरसा है। कुछ पानी मिट्टी सोखकर अपने में संग्रहीत करके रख लेती है और शेष पानी जमीन में अधिक गहराई पर उतर जाता या जमीन की सतह पर से बहकर नदी-नालों में जा मिलता है। ओस अधिकतर हरी वनस्पति पर ही जमती है। मिट्टी को तो बहुत ही थोड़ी ओस मिल पाती है। जितनी भी ओस मिल पाती है, वह सब मिट्टी की ऊपर की सतह पर ही रह जाती है और शीघ्र ही भाप बनकर उड़ जाती है।

वातावरण में अत्यधिक नमी मौजूद रहने पर ही ओस जमती है। किंतु मिट्टी तो सूखे वातावरण में से ही जल-वाष्प ग्रहण करती है। सभी गैसों में, जमीन के संसर्ग में आने पर, अति सघन होने की नैसर्गिक शक्ति होती है। यही कारण है कि मिट्टी के सछिद्र महीन कण उसे ग्रहण कर अपने शरीर में समा लेते हैं। कणों में यह क्षमता बहुत ही अधिक होती है। यह संघनित वाष्प (Condensed Vapour) अतिशीघ्र द्रव में परिवर्तित हो जाती है। इस प्रकार मिट्टी द्वारा ग्रहण किये गये जल की मात्रा, वातावरण में स्थित जल-वाष्प के परिमाण पर निर्भर करती है। मिट्टी के कणों द्वारा निर्मित आंतरिक सतह पर ही यह सब निर्भर करता है।

मिट्टी में मौजूद अन्य पदार्थों के गुण-दोषों पर ही, इन पदार्थों द्वारा सीधे वातावरण में से जल-वाष्प ग्रहण करने की क्षमता निर्भर करती है। कैलशियम क्लोराइड और फासफरिक एसिड में यह गुण बहुत ऊंचे दरजे का है; किंतु मामूली नमक, अलुमिना, सिलिका आदि भी मिट्टी में मौजूद रहते हैं, जिससे कणों की वातावरण में से जल-वाष्प ग्रहण करने की क्षमता कम-ज्यादा रूप से बनी ही रहती है।

मिट्टी को १०० अंश (श) ताप पर गरम करने के बाद, तौलकर खुली हवा में पड़ा रहने देने के पश्चात् फिर से तौल लेने से मिट्टी की जल-वाष्प ग्रहण करने की क्षमता की जानकारी सहज ही मिल सकती है। बालू-वाली जमीन में यह क्षमता मिट्टी में स्थित बालू के अनुपात पर ही निर्भर करती है। बलुई जमीन में तो इस क्षमता का एकदम अभाव ही रहता है।

मिट्टी की पानी ग्रहण करने की शक्ति का मतलब यह है कि उसमें पानी पूरी तरह से भिद जाय—कणों के बीच की खाली जगह में भी पानी

भर जाय। भिन्न-भिन्न किस्म की मिट्टी की यह शक्ति कम-ज्यादा होती है। मिट्टी में जैव तत्व का परिणाम बढ़ा दिया जाने पर यह शक्ति सहज ही बढ़ाई जा सकती है।

नैसर्गिक अवस्था में मिट्टी अधिक समय तक पूरी तरह से पानी से भरी-पूरी या अनुविद्ध (Saturated) नहीं रह सकती है। पानी का एक भाग धीरे-धीरे पृथ्वी की आकर्षण-शक्ति से खिंचकर नीचे की ओर उतर जाता है। फिर भी पानी का कुछ अंश मिट्टी में बना ही रह जाता है। मिट्टी के गीला हो जाने पर उसका प्रत्येक कण अपने चारों ओर जल का एक आवरण बना लेता है और उसे अपने आस-पास बनाये रखता है। यदि पानी कम होता है, तो यह जलावरण भी पतला पड़ जाता है। पानी अधिक होने पर जलावरण मोटा हो जाता है। किंतु मिट्टी में के पानी के प्रतिशत अनुपात के अनुसार ही उसकी आकर्षण-शक्ति घटती-बढ़ती रहती है। पानी के ऊपर की ओर खींचे जाने की शक्ति से, आकर्षण-शक्ति का प्रभाव अधिक होने पर, पानी नीचे की ओर उतरने लगता है और धीरे-धीरे पानी के ऊपर की सतह के ओर के खिंचाव और पानी के नीचे की ओर उतरने के खिंचाव में संतुलन स्थापित हो जाता है।

मिट्टी कितना पानी ग्रहण करके धारण कर सकती है, यह बात मुख्यतः मिट्टी के कणों के आकार पर ही निर्भर करती है। छोटे कणवाली मिट्टी अधिक पानी ग्रहण करके धारण कर सकती है; यदि कण बहुत ही छोटे होंगे, तो ज्यादा पानी मिट्टी में भरा रहेगा और इस प्रकार मिट्टी पानी से तर बनी रहेगी। यदि मिट्टी के कण कुछ बड़े होंगे, तो पानी के ऊपर के खिंचाव की अपेक्षा आकर्षण-शक्ति का खिंचाव अधिक होगा, जिससे पानी नीचे की ओर उतर जायगा और कणों के बीच की जगह कुछ खाली रह जायगी। किंतु इससे कणों पर का जलावरण पूर्ववत् ही बना रहेगा—इसपर उस आकर्षण-शक्ति का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ेगा।

आमतौर पर बलुआर जमीन की पानी धारण करने की शक्ति कम होती है और मटियार जमीन की सर्वाधिक। जुताई, खाद आदि द्वारा मिट्टी की इस क्षमता में परिवर्तन किया जा सकता है। जैव खाद देने और दबा देने से बलुआर जमीन की जल-धारण करने की शक्ति बढ़ाई जा सकती

है और जुताई करके मिट्टी के कण खुले करके मटियार जमीन की यह शक्ति कम की जा सकती है।

मिट्टी में बहुत ज्यादा पानी भरा रहने से कणों के बीच के खाली स्थान में व्याप्त वायु बाहर निकल जाती है, जिसका पौधे पर बुरा प्रभाव पड़ता है। यदि मिट्टी में पानी कम होगा तो पौधों की बाढ़ ही रुक जायगी। बलुई जमीन १० प्रतिशत से अधिक पानी धारण ही नहीं कर सकती है; किंतु पौधों को यह पानी अतिशीघ्रता से प्राप्त हो जाता है।

गोबर या घूरे की खाद देने से हलकी किस्म की जमीन की जल ग्रहण कर संग्रहीत रखने की शक्ति बढ़ जाती है। खेत में पानी की कमी होने पर खाद और उर्वरक से पौधों को लाभ पहुंच ही नहीं पाता है। किंतु यह अनुभव सिद्ध बात है कि जैव-पदार्थों द्वारा मिट्टी में संग्रहीत करके रखे गये जल से, सूखे मौसम में, फसल को लाभ ही पहुंचता है।

केशाकर्षण-शक्ति—ऊपर बताया जा चुका है कि एक निश्चित परिमाण से अधिक पानी खेत की मिट्टी में बना रहता है तो पानी के सतह की ओर के खिचाव की शक्ति पर गुरुत्वाकर्षण शक्ति विजय प्राप्त कर लेती है और पानी जमीन में नीचे की ओर उतरने लगता है। पानी कम होने पर सतह की ओर की आकर्षण-शक्ति बढ़ जाती है, जिससे कणों का जलावरण मोटा हो जाता है और संतुलन स्थापित होने तक यह बना रहता है। इसे ही केशाकर्षण-शक्ति कहते हैं।

गुरुत्वाकर्षण-शक्ति के कारण जमीन की नीचे की सतह में पानी का अंश अधिक पाया जाता है, जिसका कुछ अंश केशाकर्षण-शक्ति द्वारा ऊपर की ओर खींच लिया जाता है। यदि ऊपर की सतह की मिट्टी में नीचे की सतह की मिट्टी से ज्यादा पानी रहता है, तो वह नीचे की ओर को उतरने लगता है और जिस स्थान पर पानी कम रहता है, वहां धीरे-धीरे फैल जाता है। मिट्टी में पानी गतिशील रहता है। पानी ऊपर की ओर, नीचे की ओर या आजू-बाजू की ओर को बढ़ता रहता है और इस प्रकार चारों ओर एक समान पानी का अंश फैल जाता है। खेत के सभी भागों में यह बराबर-बराबर बंट जाता है।

मटियार भूमि में पानी अधिक-से-अधिक चार फुट की ऊंचाई तक

चढ़ सकता है। किंतु पानी की ऊपर चढ़ने की गति बहुत ही धीमी होती है। ज्यादा बड़े कणों की मिट्टी में पानी तेज गति से ऊपर की ओर को बढ़ता है। किंतु वह ज्यादा ऊंचाई तक चढ़ नहीं पाता है और पानी कम मात्रा में ही चढ़ता है। जैव तत्व या धरण (ह्यमस) मौजूद रहने पर केशाकर्षण-शक्ति बढ़ जाती है।

केशाकर्षण-शक्ति जमीन के अंदर के पानी के संग्रह पर ही निर्भर करती है। केशाकर्षण-शक्ति की व्यापकता की सीमा के अंदर काफी पानी मौजूद रहता है, तो जल अधिक मात्रा में खेत की मिट्टी के ऊपर के तह में चढ़ आता है; किंतु सामान्यतः इतना पानी मिट्टी के ऊपर के तह में आ नहीं पाता है। पौधे की जड़ें जमीन में गहराई तक प्रवेश करती हैं और केशाकर्षण-शक्ति द्वारा उनको पानी पहुंचा ही दिया जाता है, यद्यपि पानी ऊपर के तह तक पहुंच ही नहीं पाता है।

कणों के छोटे और अधिक पास-पास होने पर पानी का नीचे की ओर को उतरना उसी अनुपात में कम हो जाता है। पानी सोखकर धारण करने की शक्ति के बढ़ जाने पर जल के मिट्टी में से छनकर बाहर निकल जाने की क्रिया में रुकावट पड़ती है। पानी ग्रहण करके धारण करने की क्षमता से अधिक पानी मिट्टी में बना रहता है, तो वह छनकर खेत से बाहर निकल जाता है। कंकर-पत्थर और मोटी रेतवाली जमीन बहुत ही कम पानी धारण कर सकती है। छोटे कणवाली जमीन में पानी भरा ही रह जाता है। इन दोनों ही अवस्थाओं का उत्पादन पर काफी असर पड़ता है।

ज्यों-ज्यों जमीन का धरातल सूखता जाता है, नीचे के तह का पानी केशाकर्षण-शक्ति द्वारा ऊपर चढ़ता जाता है और धीरे-धीरे ज्यादा गहराई तक मिट्टी सूखती जाती है। खेत के धरातल की तीन-चार इंच गहराई तक की मिट्टी ढीली और पोली कर देने से केशाकर्षण-नलिकाओं के मुख टूट जाते हैं और पानी का भाप बनकर उड़ जाना रुक जाता है। भारतीय किसान बखर, कुलपा, हो आदि इसी उद्देश्य से चलाते हैं। पठार, पाटा आदि फेरकर मिट्टी दबा देने से केशाकर्षण बढ़ जाता है।

जिस मिट्टी में फसल बोई गई हो उसमें से बहुत ज्यादा मात्रा में पानी भाप बनकर हवा में उड़ जाता है। बड़े-बड़े वृक्षों द्वारा जमीन में से इतना

अधिक पानी सोख लिया जाता है कि उनके नीचे की जमीन बिल्कुल ही सूख जाती है। वृक्षों की छाया से पानी के भाप बनकर उड़ जाने की क्रिया लगभग बंद हो जाने पर भी वृक्ष के आसपास पानी का अंश रह ही नहीं पाता है और यही कारण है कि वृक्ष के नीचे की जमीन पर बहुत ही थोड़े पौधे पनप पाते हैं।

अनुमान है कि फसल के सूखे वजन से लगभग चारसौ-गुना पानी जमीन में से ग्रहण करके भाप के रूप में वातावरण में छोड़ा जाता है। एक एकड़ में चार हजार पौंड सूखी पैदावार देनेवाली फसल अपने जीवन-काल में लगभग १६ लाख पौंड पानी वातावरण में छोड़ती है, जो सात इंच वर्षा के बराबर होता है।

तापमान का जमीन की उर्वरा-शक्ति पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है, कारण कि मिट्टी के अंदर होनेवाले रासायनिक परिवर्तन और जीवाणुओं के कार्य-कलाप पर तापमान का काफी असर पड़ता है और इन्हीं दोनों पर जमीन की उर्वरा-शक्ति निर्भर करती है। पानी के बर्फ में परिवर्तित होने के तापमान से पचास अंश (श) से अधिक तापमान बढ़ जाने पर जीवाणु निश्चेष्ट-से हो जाते हैं और उनके कार्य की गति धीमी पड़ जाती है।

जमीन को गरमी सूर्य से प्राप्त होती है। मिट्टी में होनेवाले नाना परिवर्तनों से भी गरमी पैदा होती है। किंतु इस गरमी का होना-न-होना बराबर ही है। जमीन के भीतर से भी कुछ गरमी प्राप्त होती है। यह गरमी हमेशा एक-सी बनी रहती है।

देशांश अक्षांश का भी प्रभाव पड़ता ही है। पृथ्वी के उस भाग में, जहां सूर्य की किरणें सीधी समकोण बनाती हुई जमीन पर गिरती हैं, बहुत ज्यादा गरमी प्राप्त होती है। पृथ्वी का बहुत ही थोड़ा भाग ऐसा है।

पहाड़ों की चोटियों और ऊंचाई पर स्थित प्रदेशों की जमीन को अंदर से बहुत ही कम गरमी प्राप्त होती है। इन स्थानों के वातावरण में जलवाष्प की मात्रा भी कम ही होती है। इन स्थानों की भूमि को विकिरण (Radiation) होनेवाला ताप भी कम ही मात्रा में मिल पाता है।

काली जमीन, हलके रंग की जमीनों की अपेक्षा ज्यादा गरमी सोखती

है। जमीन की मिट्टी का रंग गहरा काला या हलका करके मिट्टी का तापमान कम-ज्यादा किया जा सकता है। जैव पदार्थों की विपुलता के कारण ही मिट्टी का रंग गहरा काला हो जाता है। गहरे काले रंग की मिट्टी में ऐसी फसलें अधिक अच्छी होती हैं, जिन्हें ज्यादा गरमी की जरूरत होती है।

किसी एक निश्चित इकाई का पदार्थ जितनी उष्णता ग्रहण कर सकता या संग्रहीत रख सकता है, उसे उस काय या पदार्थ (Body) की आपेक्षिक ऊष्मा (Specific heat) कहते हैं। मिट्टी में के खनिज पदार्थों पर ताप का असर पड़ता है। जैव पदार्थों की उपस्थिति के कारण मिट्टी के ताप या उष्णता में वृद्धि हो जाती है।

जिन जमीनों में नमी कम होती है, जैसे मोटी रेत आदि, उनकी ताप ग्रहण करने की क्षमता भी न्यूनतम ही होती है और उनका तापमान अत्यधिक बढ़ जाता है। जैव-तत्वयुत जमीनों की ताप या उष्णता ग्रहण करने की शक्ति या क्षमता अधिक ही होती है और ये अधिक-से-अधिक शीतल होती है। खनिज पदार्थों की अपेक्षा जैव तत्व की उष्णता ग्रहण करने की शक्ति अधिक ही होती है।

ग्रहण की गई उष्णता का कुछ भाग मिट्टी में के जलांश को भाप बनाकर उड़ाने में सहायक होता है। गरमी के दिनों में बहुत अधिक पानी भाप बनकर वातावरण में मिलता रहता है। सूर्य की किरणों द्वारा मिट्टी का तापमान बढ़ जाने पर पानी के भाप बनकर उड़ने की क्रिया अधिक तेजी से होने लगती है। यह क्रिया जिस हद तक रोक दी जायगी तापमान उसी अनुपात से बढ़ जायगा। खेत की सतह पर खाद, कचरा-कूड़ा फैला देने या सतह पर की मिट्टी ढीली और पोली कर देने से वाष्पीभवन की क्रिया के मार्ग में रुकावट पड़ती है, जिससे उष्णता बनी रहती है।

सतह पर की उष्णता के बाहर निकल जाने से रात को मिट्टी ठंडी हो जाती है। मिट्टी और वातावरण के तापमान के अंतर पर ही उष्णता के बाहर निकलने की गति निर्भर करती है। मिट्टी में की नमी का भी इस पर प्रभाव पड़ता है। किंतु मिट्टी के रंग का इस पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता है।

ठोस पदार्थों की अपेक्षा पानी उष्णता को अधिक शीघ्रता से बाहर निकालता है। अतएव, नमी होने के कारण मिट्टी की उष्णता बाहर निकालने

की क्षमता बहुत अधिक बढ़ जाती है। ज्यों-ज्यों मिट्टी में का पानी शीतल होता जाता है, नीचे का गरम पानी ऊपर की ओर चढ़ता रहता है और पानी की शीतल होने की गति धीमी पड़ जाती है।

पानी की अपेक्षा ठोस चट्टानों में उष्णता-परिवहन (Conduction) पांच गुनी अधिक तेज गति से होता है। फिर भी, यह गति धातु की उष्णता-परिवहन-शक्ति से कम ही है। चट्टानों के टुकड़े हो जाने पर यह क्षमता भी काफी घट जाती है, कारण कि टुकड़ों के बीच के खाली स्थान में हवा भर जाती है, जिसकी उष्णता-परिवहन-शक्ति चट्टान की उष्णता-परिवहन-शक्ति का लगभग सौवां भाग ही है। खाली जगह में हवा के स्थान पर पानी भर जाता है, तो यह शक्ति पानी की शक्ति से २२ गुना के लगभग अधिक हो जाती है। कंकर-पत्थर की उपस्थिति इस शक्ति को बढ़ाने में सहायक ही होती है। मिट्टी की इसी शक्ति के कारण उष्णता मिट्टी में प्रवेश पा लेती है और मिट्टी में सब ओर तापमान एकसमान बना रहता है। जल-वाष्प की घनीभूत होने की क्रिया द्वारा जितनी उष्णता प्राप्त होती है, उसकी मात्रा इतनी कम होती है कि उसका किसी प्रकार का क्रियात्मक महत्व ही नहीं रह जाता है।

जमीन की सतह पर की मिट्टी की उष्णता या तापमान वातावरण के तापमान के अनुसार घटता-बढ़ता रहता है। ज्यों-ज्यों जमीन में अधिकाधिक गहराई पर उतरते जाते हैं, तापमान की प्रतिदिन की घट-बढ़ शीघ्रता से कम होती जाती है। दो-तीन फुट की गहराई पर तापमान में अंतर ही नहीं जान पड़ता है। सरदी में मिट्टी का तापमान वातावरण के तापमान से कुछ ऊंचा होता है और गरमी में कुछ कम।

रंग या वर्ण—मिट्टी का अधिकांश भाग, जो जैव पदार्थों से बना होता है, काले या भूरे रंग का होता है। मिट्टी में के खनिज तत्वों का रंग सफेद या राख के समान होता है। लोहे के यौगिकयुत मिट्टी काली या गहरे रंग की होती है। मिट्टी में भिन्न-भिन्न रंगों की छाया, उसमें स्थित जैव पदार्थ, खनिजों के महीन चूर्ण आदि के कारण ही दिखाई देती है।

रंग के आधार पर मिट्टी की उर्वरा-शक्ति का अनुमान लगाया जा सकता है। किंतु अन्य साधनों द्वारा इन अनुमानों की पुष्टि हुए बिना इस

पर विश्वास कर लेना उचित नहीं है। न्यूनाधिक मात्रा में फेरिक एसिड के साथ-साथ जैव पदार्थ के मौजूद रहने पर मिट्टी का रंग, गहरे लाल रंग से काली झाईवाला होता है। जैव पदार्थों की अनुपस्थिति में दिखाई देने-वाली काले रंग की मिट्टी में विषैले पदार्थों का बाहुल्य रहता है, जो पौधों के लिए हानिकारक ही है।

गीली मिट्टी में से एक प्रकार की सौंधी गंध निकलती है, जिसके निश्चित कारणों का पता लगाया जा रहा है। गीली या नम मिट्टी के कण पानी के खिचाव के कारण एक-दूसरे से चिपके-से रहते हैं। मिट्टी के ज्यादा छोटे कणों का एक-दूसरे से सटकर चिपकने का गुण उच्चावस्था में होता है। यह बात मटियार भूमि में स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है। इसी गुण के कारण मटियार भूमि की जुताई करने में अधिक श्रम करना पड़ता है और इसीलिए उसे 'भारी जमीन' कहा जाता है। मिट्टी के कणों की मोटाई बढ़ने के साथ-साथ एक-दूसरे से सटे रहने का गुण भी घटता जाता है। बालू में तो यह गुण होता ही नहीं है। सूखे कणों में भी इस गुण का अभाव ही रहता है। अलुमिना, सिलिका, धरणिकाम्ल या काष्टाम्ल (Humic acid) आदि की उपस्थिति के कारण ही मिट्टी में यह गुण आ जाता है।

भारी मिट्टी का महीन चूरा करके पानी में डालकर खूब चला दिया जाय और उसे कुछ घंटों तक पड़ा रहने दिया जाय। मिट्टी का अधिकांश बरतन की तली में बैठ जायेगा, किंतु पानी गंदला ही बना रहेगा। पानी को गंदला बनाये रखनेवाला यही पदार्थ, कणों को एक-दूसरे से सटाकर चिपकाये रखता है। कणों के एक-दूसरे से सटकर चिपक जाने से कणों के बीच की खाली जगह भर जाती है और जबतक इनका यह गुण दूर नहीं किया जाता है, तबतक मटियार भूमि की जुताई करना श्रम-साध्य और कठिन ही बना रहता है। यही कारण है कि इन जमीनों को गीली हो जाने पर जोता या गूंधा न जाना चाहिए, और जमीन में राख या इसी के समान दूसरे पदार्थ नहीं डाले जाने चाहिए। सूख जाने पर मिट्टी के बड़े-बड़े ढेले बंध जाते हैं, जो जुताई करने पर भी टूटते नहीं हैं। इन कड़े ढेलों में पानी सोखने की क्षमता होती है। चूना डालने से मटियार भूमि के मिट्टी के कणों का एक-दूसरे से सटकर चिपके रहने का गुण पर्याप्त घट जाता है। प्रति-एकड़

१/२ प्रतिशत चूना डालने से चिकनी मटियार मिट्टी बहुत ज्यादा सुधर जाती है। थोड़ी-सी हरसोंठ (जिपसम) भी काफी फायदा पहुंचाती है। सुपर-फासफेट और उसीके समान गुणवाले पदार्थ भी अच्छा असर दिखाते हैं।

सूखने पर मिट्टी सिकुड़ जाती और उसमें दरारें पड़ जाती हैं। सूखने से कणों का एक-दूसरे से चिपके रहने का गुण नष्ट हो जाता है। बलुआर जमीन में दरारें पड़ती ही नहीं हैं। जैव पदार्थवाली या मटियार जमीनों में ही दरारें पड़ती हैं। इन दरारों में से होकर वायु जमीन में अधिक गहराई तक प्रवेश कर जाती है, जिससे मिट्टी के सभी भागों को ओषजन मिल जाती है। ओषजन मिट्टी के लिए अत्यावश्यक पदार्थ है। गीली हो जाने पर मिट्टी फूल जाती है, जिससे दरारें भर जाती हैं।

जैव पदार्थों और खनिज पदार्थों की सड़न-क्रिया से अनेक प्रकार के लवण और यौगिक पानी में घुल जाते और जड़ों द्वारा सोखकर पौधे की देह में पहुंचा दिये जाते हैं। धीरे-धीरे यह घोल मिट्टी के सभी भागों में चारों ओर फैल जाता और संतुलन बनाये रखता है।

मिट्टी की रसायनशाला

रसायनशाला में विश्लेषण करने पर ही यह ज्ञात हो सकता है कि मिट्टी में कौन-कौन-से रासायनिक पदार्थ किस-किस परिमाण में मौजूद हैं। विश्लेषण करने की रीति का इस पुस्तक के विषय से गहरा संबंध है। लेकिन यह अपने-आपमें एक स्वतंत्र विषय है, जिसका सविस्तार वर्णन यहां स्थानाभाव के कारण नहीं किया जा सकता।

मिट्टी का विश्लेषण पांच विभिन्न विभागों में किया जाता है। ये विभाग हैं—(१) मिट्टी में स्थित पानी और उसमें घुले हुए पदार्थ या मिट्टी में से घोलके रूपमें ग्रहण किये जानेवाले पदार्थ (२) क्षार के हलके (Diluted acids) घोल के रूप में ग्रहण किये जानेवाले पदार्थ या पौधों के भोज्य पदार्थ (३) हलके क्षार में न घुलनेवाले पदार्थ जो संघनित क्षार (Condensed acid) में घुल जाते हैं। (४) जैव पदार्थ और (५) अघुलनशील खनिज, पत्थर, रेती आदि।

आलजल या मिट्टी में स्थित जल—मिट्टी को तौलकर खूबते ज धूप

में सुखा लेने के बाद खूब तेज आंच से गरम करके तुरंत ही तौल लिया जाता है। इन दोनों वजनों का अंतर ज्ञात करने पर यह सहज ही जाना जा सकता है कि मिट्टी में प्रतिशत कितना जल है। इतना सब-कुछ करने पर भी मिट्टी में थोड़ा-सा जलांश रह ही जाता है।

अधिकांश पदार्थ न्यूनाधिक मात्रा में पानी में घुल ही जाते हैं। एक-हजार भाग पानी में ०·०१३ भाग चूना घुल ही पाता है। यदि पानी में काफी कर्बन-द्वि-ओषिद घोल दिया जाय, तो ०·९९ भाग चूना घुल जाता है। किंतु मिट्टी में स्थित पानी में कर्बन-द्वि-ओषिद अधिक मात्रा में घुल नहीं पाता है। उसका बहुत ही थोड़ा भाग समरस हो पाता है। इस घोल में जैव पदार्थ और खनिज तत्व भी मिले रहते हैं। यह घोल बहुत ही हलका होता है। घुलनशील लवण पानी में घुलकर सब-के-सब बहकर खेत से बाहर चले जाते हैं। मिट्टी की ज्यादातर किस्में इस घोल में से लवणों को सोखकर रख लेती है। जमीन मे अधिक गहराई पर उतर जानेवाले पानी में घुले हुए लवण का कुछ अंश नितरकर निथार (Drain age) के पानी के साथ खेत से बाहर निकल जाते हैं।

गोबर और घूरे में के पदार्थों के सड़ने की क्रिया के कारण उनमें के जैव-पदार्थो में स्थित कैलशियम कार्बोनेट, कार्बोनिक एसिड की सहायता से तुरंत ही घुल सकनेवाले बाय-कार्बोनेट में परिवर्तित हो जाते हैं, जो पानी में घुलकर बह जाते हैं। इन परिवर्तनों के कारण मिट्टी में का चूने का अंश नष्ट हो जाता है और अमोनिया आदि मिट्टी में सुरक्षित रह जाते हैं।

विदेशी विशेषज्ञों का मत है कि बिना खाद दी गई एक एकड़ जमीन में से प्रतिवर्ष २५० पौंड चूना, कैलशियम कार्बोनेट के रूप में घुलकर नष्ट हो जाता है। यदि जमीन में ज्यादा खाद दी गई हो तो यह हानि और भी बढ़ जाती है। यदि जमीन में चूने की मात्रा काफी नहीं होगी, तो चूने के इतनी अधिक मात्रा में घुलकर बह जाने के कारण जमीन की उर्वरा-शक्ति बहुत ही अधिक घट जायगी और तब जमीन को चूना देना अत्यावश्यक हो जायगा। पोटैश और फासफरिक एसिड भी पानी में घुलकर नष्ट हो जाते हैं; किंतु इस क्षति पर विचार करने की बिल्कुल ही आवश्यकता नहीं है; कारण कि इस प्रकार होनेवाली हानि नगण्य ही है, फिर चाहे जमीन को

बहुत ज्यादा खाद ही क्यों न दी गई हो। अनुमान है कि प्रतिवर्ष प्रति एकड़ २ पौंड फास्फरिक एसिड और दस पौंड पोटैश की ही हानि होती है। इस क्षति की पूर्ति खाद या उर्वरक द्वारा बहुत ही थोड़े मूल्य में की जा सकती है।

नोषजन की ही अधिक मात्रा में क्षति होती है और इस क्षति की पूर्ति के लिए व्यय भी अधिक करना पड़ता है। चूने के प्रभाव से अमोनिया के लवण नाइट्रिक एसिड में बदल जाते हैं। गोबर, घूरा आदि में के सेंद्रिय या जैव पदार्थ में का नोषजन भी इसी अवस्था को प्राप्त हो जाता है। निथार के पानी में नोषजनीय यौगिक नाइट्रेट के रूप में ही घुले रहते हैं। बिना खाद दिये गये खेत में से प्रतिवर्ष प्रति एकड़ १२ पौंड तक नोषजन नष्ट हो जाता है। और प्रति एकड़ ४३ पौंड नोषजन अमोनिया के लवण के रूप में दिया जाने पर यह हानि प्रति एकड़ २५ पौंड अर्थात् ४० प्रतिशत तक बढ़ जाती है। इससे अधिक नोषजन अगर दिया जाय तो हानि भी उसी अनुपात से बढ़ जाती है। खड़ी फसलवाली जमीन में यह क्षति कम ही होती है, कारण कि पौधे नोषजन को नाइट्रेट (नत्रेत) के रूप में ही ग्रहण करते हैं, जिससे निथार के पानी में उसका बहुत ही कम अंश घुल पाता है। यहां यह स्मरण रखना चाहिए कि निथार के पानी में घुलकर नष्ट होनेवाले नोषजन की मात्रा, मिट्टी में स्थित नाइट्रेट (नत्रेत) और जमीन में गहराई पर उतर जानेवाले पानी के परिमाण पर ही निर्भर करती है।

लवणों का ग्रहण किया जाना, मुख्य रूप से, जमीन के उपजाऊपन पर ही निर्भर करता है। मिट्टी की लवण ग्रहण करने की इसी क्षमता के कारण उसमें नैसर्गिक रूप में स्थित घुलनशील तत्वों या खाद के रूप में दिये गये तत्वों की बहुत कम मात्रा निथार के पानी में घुलकर बाहर निकल पाती है। इस प्रकार नोषजन के अलावा अन्य भोज्य पदार्थों का बहुत ही कम मात्रा में नुकसान हो पाता है।

अघुलनशील अवस्था में परिवर्तित हो जाने के कारण ही फासफरिक एसिड मिट्टी में सुरक्षित रह जाता है। मिट्टी, क्लोराइड्स की अपेक्षा सलफेट्स में से अधिक पोटैश ग्रहण करती है, और कार्बोनेट्स से इससे भी अधिक मात्रा में।

जैव तत्व में भी पोटैश और अमोनिया को सोख लेने की शक्ति अधिक होती है; किंतु ऐसा मिट्टी की भौतिक रचना के ही कारण होता है।

फसल काट लेने के बाद खेत में खड़े पौधों के अवशेषों से भी जमीन को जैव पदार्थ प्राप्त होते है। फसल काट लेने पर खेत में बच रहे पौधों के अवशेषों और खर-पतवार तथा गोबर-घूरे की खाद को जोतकर मिट्टी में मिला देने से जमीन को कुछ-न-कुछ वापस मिल ही जाता है। ये पदार्थ जीवाणुओं के क्रिया-कलापों द्वारा सड़कर मिट्टी में घुल-मिल जाते हैं। एक से अधिक प्रकार के जैव पदार्थों की सड़न-क्रिया द्वारा ही धरण या जैव तत्व (Humus) अस्तित्व में लाया जाता है। किसी भी जैव पदार्थ से बना जैव तत्व सदा काले रंग का ही होता है। इस छिद्रमय पदार्थ का सापेक्षिक घनत्व बहुत ऊंचे दर्जे का (high specific gravity) होता है।

जैव तत्व से निर्मित पदार्थो को सामूहिक रूप से धरणिकाम्ल या काष्ठाम्ल (Humic acid) कहते हैं, जो बहुत कम मात्रा में पानी में घुल पाता है। जैव तत्व के संबंध में वैज्ञानिकों में काफी मतभेद है। इन पर यहां विचार करने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती है।

जैव तत्व की उपस्थिति से जमीन के भौतिक गुणों पर तो प्रभाव पड़ता ही है; साथ ही कृषि-कार्य में मिट्टी में स्थित नोषजन की दृष्टि से भी यह विशेष महत्व रखता है। नोषजन अघुलनशील अवस्था में मौजूद रहता है। इसलिए इसके घुलकर नष्ट हो जाने की संभावना ही नहीं रहती है। ज्यों-ज्यों जैव-तत्व सड़ता जाता है, उसमें का नोषजन शीघ्र ही घुलनशील अवस्था में आ जाता है और जड़ों द्वारा तुरंत ही सोख लिया जाता है। जैव तत्व के भिन्न-भिन्न नमूनों में, अन्य भोज्य पदार्थों के समान ही, नोषजन की प्रतिशत मात्रा भी न्यूनाधिक होती है। कर्बन और उज्जन के ओषिदीकरण द्वारा बाहर निकल जाने के कारण ज्यों-ज्यों जैव तत्व सड़ता जाता है, नोषजन की मात्रा बढ़ती जाती है। किंतु घुलनशील यौगिक एकत्रित नहीं हो पाते हैं। यदि ये जड़ों द्वारा ग्रहण नहीं कर लिय जाते हैं, तो घुलकर खेत के बाहर चले जाते हैं। मिट्टी गरम करने पर जैव तत्व और कर्बन-द्वि-ओषिद उड़कर वातावरण में मिल जाते हैं।

चूना मिट्टी में कैलशियम कार्बोनेट के रूप में रहता है। मिट्टी में पाये जानेवाले चूने के अन्य लवणों से यह एक भिन्न पदार्थ है। इसका प्रभाव भी भिन्न ही होता है। मामूली दर्जे की जमीन में चूने का अंश २ से १० प्रतिशत तक रहता है। अधिक जैव तत्ववाली मटियार जमीन में चूने का अंश प्रतिशत एक से कम हो, तो जुताई-खाद आदि की ओर विशेष सावधानी से ध्यान दिया जाना चाहिए। उपजाऊपन की दृष्टि से बलुआर जमीन में चूने के अंश का रहना जरूरी नहीं है। इस किस्म की जमीन में चूने का अंश बहुत ही कम होता है। कैलशियम कार्बोनेट पानी में घुलता ही नही है; किंतु कार्बोनिक एसिड के संयोग से यह बाय-कार्बोनेट में बदल जाता है और तब अन्य रासायनिक क्रियाएं पूरी होती हैं।

जैव पदार्थों के सड़ने की क्रिया से अम्ल बनते हैं और कभी-कभी कुछ खनिजों में होनेवाले रासायनिक परिवर्तनों के कारण भी अम्ल बनते हैं। यदि इन्हें जमीन में जमा होने दिया जाय, तो मिट्टी अम्ल या खट्टी या खाटिया (Sour) हो जाती है। ऐसी जमीनों में फसलें उगती ही नही हैं। कैलशियम कार्बोनेट का अधिक मात्रा में रहना जमीन के लिए हितकारक ही है। क्षार के चूने से मिल जाने पर रासायनिक क्रिया पूरी होती है और कर्बन-द्वि-ओषिद बाहर निकल जाता है। अघुलनशील होने के कारण यह पदार्थ जमीन में जमा होता रहता है। इसकी मौजूदगी से पौधों और जीवाणुओं को किसी प्रकार की हानि नहीं होती है और जमीन के भौतिक गुणों पर भी इसका अच्छा ही असर पड़ता है।

खुली हुई बलुआर भूमि में जैव पदार्थों के सड़ने की क्रिया बहुत तेजी से होती है, जिससे जैव तत्व कम मात्रा में जमा हो पाता है। इससे जमीन के खट्टी, खाटी या खटिया बन जाने की संभावना रहती है। खेत में चूना डालने से यह दोष दूर हो जाता है।

मिट्टी में चूना मौजूद होने के कारण सड़ने की क्रिया तेजी से होने लगती है तथा इससे नाइट्रिक एसिड बन जाता है और तब कैलशियम नाइट्रेट बनता है। चूने के काफी मात्रा में न होने पर नत्रीभवन (Nitrification) संपन्न करानेवाले जीवाणुओं का कार्य शिथिल पड़ जाता है, जिससे एक अन्य

प्रकार की क्रिया प्रारंभ हो जाती है और फसल को हानि पहुंचानेवाले विषैले पदार्थ का निर्माण हो जाता है।

मिट्टी में चूने की सहायता से तबतक कई रासायनिक क्रियाएं संपन्न होती हैं जबतक फासफरिक एसिड के बनने की अवस्था न आ जाय। यदि ये क्रियाएं न हों तो चूने के लवण प्रभावशील हो ही नहीं पाते हैं और कभी-कभी हानिकर ही सिद्ध होते हैं। खादों के प्रभावशाली होने या न होने पर चूने का काफी असर पड़ता है। जमीन की उर्वरा-शक्ति कम हो जाने पर चूना मिलाने पर भी खादों का फसल पर साधारण-सा ही असर दिखाई पड़ता है। चूना डालने के बाद दी गई खादों का ही फसल पर लाभदायक असर दिखाई देता है। खेत के एक कोने पर चूने की खाद देने के बाद फसल बोकर यह पता लगाया जा सकता है कि उस खेत में चूना देने की आवश्यकता है या नहीं।

जिन तत्वों से पौधे की देह बनती है, उनमें चूना अत्यन्त आवश्यक है। मिट्टी में चूने की उपस्थिति से यह नहीं मान लिया जाना चाहिए कि यह पदार्थ एकमात्र मिट्टी में के चूने के अंश से ही प्राप्त किया गया है। कैलशियम सलफेट आदि अन्य पदार्थों से भी यह प्राप्त कर लिया जाता है।

चूने का बहुत महीन चूर्ण ही खेतों में फैलाकर मिट्टी में मिलाया जाता है। कभी-कभी खेत में ही भट्टी लगाकर चूना पकाया जाता है और तब उसे खेत में फैला दिया जाता है। वायु के संयोग से चूने के डले चूर-चूर हो जाते हैं और जुताई कर दी जाती है। यह चूना वातावरण में से कर्बन-द्वि-ओषिद ग्रहण करके कैलशियम कार्बोनेट का रूप धारण कर लेता है। पत्थर के कोयले से गैस बनाने के कारखानों में भी चूने का उपयोग किया जाता है। इस क्रिया में 'गैस लाइम' प्राप्त होता है, जो कभी-कभी खाद की तरह काम में लिया जाता है।

मिट्टी में की बालू ही एक ऐसा पदार्थ है, जो घुलनशील नहीं है। जिन चट्टानों से मिट्टी बनी होती है, उसीके छोटे-बड़े टुकड़े, कंकर-रेत आदि ही इसमें मिलते हैं। वनस्पति आदि से बनी हुई मिट्टी में ये पदार्थ बहुत ही कम मात्रा में पाये जाते हैं। इनका मिट्टी पर भौतिक प्रभाव ही

पड़ता है। ये ही वे आदि-स्रोत हैं, जिनसे भोज्य-पदार्थों में के खनिज तत्व प्राप्त होते हैं।

जुदी-जुदी किस्म की मिट्टियों में क्षारों का प्रतिशत परिमाण न्यूनाधिक होता है। चूने के अंशवाली मिट्टी में ये सबसे अधिक और बलुआर मिट्टी में सबसे कम मात्रा में होते है। मामूली दर्जे की चूनायुत महीन सूखी मिट्टी में ५ से १५ प्रतिशत तक अंश ही घुलनशील अवस्था में रहता है। ऑक्साइड ऑफ आयरन, अलुमिना, चूना और मैगनेशिया ही कुछ अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। अन्य पदार्थों की मात्रा एक प्रतिशत से कम ही होती है।

मिट्टी में पाये जानेवाले कुछ मुख्य पदार्थ मामूली तौर पर कम मात्रा में ही रहते हैं। किंतु प्रतिशत परिमाण के अनुसार खेत में उनका परता बहुत ही अधिक वैठता है। पौधे तो इसमें से बहुत ही थोड़ा अंश ग्रहण करते हैं। यह अत्यावश्यक है कि पौधे पदार्थो का जितना अंश ग्रहण करते है, उससे कई गुना अधिक वे पदार्थ मिट्टी में मौजूद होने चाहिए।

फासफरिक एसिड और अन्य पदार्थ, जो संकेंद्रित या सघन क्षार के घोल (Concentrated acids) में घुले रहते हैं, ऐसी अवस्था में मौजूद रहते हैं कि पौधों की जड़ें उन्हें ग्रहण ही नहीं कर सकती हैं।

अभी तक कई प्रश्नों का निश्चित उत्तर प्राप्त नहीं हो सका है। फिर भी यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि कुछ पदार्थ, जो पानी में घुलनशील अवस्था में नहीं रहते हैं, जड़ों द्वारा ग्रहण कर लिये जाते हैं और क्षार के सघन घोल में घुले हुए कुछ पदार्थों को जड़ें सोख ही नहीं सकती हैं। फसलों की भोज्य पदार्थ ग्रहण करने की क्षमता में भी काफी भिन्नता है। तीव्राम्ल या तेज क्षार (strong acid) या पानी की सहायता से मिट्टी में से अलग किये गये पोटैश या फासफरिक एसिड के प्रतिशत परिमाण के आधार पर ही यह निश्चित नहीं किया जा सकता है कि फ़सल को इन भोज्य पदार्थों की आवश्यकता है या नहीं। हलके क्षार से इस निश्चय पर पहुंचने में अच्छी सहायता मिलती है। विशेषज्ञों का मत है कि जिन मिट्टियों में ०·००५ प्रतिशत से कम पोटैश और ०·०१ प्रतिशत

फासफरिक एसिड मौजूद हो, उन्हें खाद के रूप में ये पदार्थ अवश्य ही दिये जाने चाहिए ।

मिट्टी की रसायनशाला में रात-दिन रासायनिक परिवर्तन होते रहते हैं और सभी पदार्थों पर इसका असर पड़ता है । भिन्न-भिन्न पदार्थों का निर्माण होता है और तब इनसे अन्य पदार्थ अस्तित्व में आ जाते हैं । इस पर विस्तारपूर्वक लिखने की आवश्यकता नही जान पड़ती है ।

वातावरण में की वायु मिट्टी में प्रवेश कर कणों के बीच में की उस खाली जगह में भर जाती है, जिसमें पानी नहीं भरा होता है । धीरे-धीरे कर्बन-द्वि-ओषिद बाहर निकल जाता है और जड़ों द्वारा ग्रहण किये गये पदार्थो द्वारा खाली किये गये स्थान में वायु भरती जाती है । मिट्टी के कण जितने ही ज्यादा महीन होते हैं, वे उतने ही अधिक परिमाण में वातावरण में से गैस ग्रहण करते हैं । परंतु इससे मिट्टी में ज्यादा पानी भरा रहने लगता है, जिससे जड़ों द्वारा भोज्य पदार्थों के सोखे जाने की क्रिया शिथिल पड़ जाती है । अतएव, नैसर्गिक अवस्था में कणों के कुछ मोटे होने पर हवा अति शीघ्रता से खाली जगह में स्थान पा लेती है ।

वातावरण में भिन्न-भिन्न गैसें जिस प्रतिशत मात्रा में रहती हैं, उसी प्रतिशत मात्रा में ही वे मिट्टी के कणों के बीच की खाली जगह में भरी हुई वायु में भी पाई जाती हैं । वायु में ओषजन की मात्रा कम और कर्बन-द्वि-ओषिद की मात्रा अधिक होती है । जैव पदार्थों और खनिज तत्वों की ओषदीकरण-क्रिया में ओषजन खर्च हो जाता और कर्बन-द्वि-ओषिद का निर्माण होता है । किंतु इसका नोषजन के भंडार पर कुछ भी असर नहीं पड़ता है, कारण कि जितना ओषजन खर्च होता है, उतना ही कर्बन-द्वि-ओषिद उसका स्थान ले लेता है । अनुकूल परिस्थिति प्राप्त होने पर—काफी नमी, गरमी, और काफी मात्रा में ओषजन मिलते रहने पर, जीवाणु अधिक तेज गति से कार्य करने लगते हैं, जिससे वायु में का ओषजन लगभग आधा रह जाता है और उतना ही कर्बन-द्वि-ओषिद उसका स्थान ग्रहण कर लेता है ।

बलुआर जमीन में की हवा वातावरण की हवा के समान ही होती है । खाद देने पर इन जमीनों में जैव पदार्थों का ओषदीकरण बहुत तेज

गति से होने लगता है, कारण कि जैव पदार्थों का संग्रह एकदम बढ़ जाता है। नमी कम होने पर जीवाणुओं के कार्य में शिथिलता आ जाती है और पानी देने पर कार्य की तेजी फिर बढ़ जाती है।

कोलॉइड्स—मिट्टी में एक अत्यंत सूक्ष्म पदार्थ मौजूद रहता है, जिसे यह नाम दिया गया है। इसके कण बहुत ही महीन रहते हैं। यदि मिट्टी के कण का व्यास एक मिलीमीटर (२५ मिलीमीटर=१ इंच) मान लिया जाय, तो इस पदार्थ के कण का व्यास ०.०००१ से ०.००००००१ मिलीमीटर तक होता है। ये कण पानी में लगभग घुले-मिले रहते हैं। शक्तिशाली सूक्ष्म दर्शक यंत्र से बड़े कण ही देखे जा सकते हैं। ज्यों-ज्यों मिट्टी के कण छोटे-छोटे होते जाते हैं, इस पदार्थ की मात्रा बढ़ती जाती है। अतएव बालूवाली और दुमट जमीन में, जिनके मिट्टी के कण बड़े होते हैं, इसकी मात्रा कम और ऊंची काली मिट्टी में अधिक होती है। पानी मिलने पर ये फूलने लगते हैं और चिकना, शहद या गुड़ के पानी के समान, चिपचिपा-सा पदार्थ बन जाता है। यह पदार्थ मिट्टी के कणों के बीच की खाली जगह में व्याप्त होकर भर जाता है, जिससे हवा भीतर प्रवेश नहीं कर सकती है और न पानी ही वहां स्थान पा सकता है। इसी पदार्थ के कारण चिकनी काली मिट्टी में पर्याप्त पानी रहते हुए भी फसलें कुम्हलाने लगती हैं। चूना या सेंद्रिय खाद देने, मिट्टी जलाने या खूब जुताई करने से इस पदार्थ के कण मिट्टी के कण के बाहरी भाग पर चिपट जाते हैं, जिससे कणों के बीच का स्थान खाली हो जाता है और इसमें पानी और हवा खुलकर खेलने लगती है। अतएव, काली मिट्टीवाली और ऊंचे दरजे की काली जमीनों की उपयुक्त समय पर खूब जुताई की जानी चाहिए और अधिक मात्रा में सेंद्रिय खाद देना इष्ट है। हरी खाद भी दी जा सकती है। सेंद्रिय या जैव खाद की कमी के कारण अमेरिका में चूना डाला जाता है।

मिट्टी में कीट व जीवाणुओं के क्रिया-कलाप

मिट्टी में रहनेवाले जीवाणु वस्तुतः बहुत ही निम्न कोटि के साधारण पौधे-से ही हैं। वनस्पति-विज्ञान में उन्हें काई और कुकुरमुत्ता की श्रेणी

का माना जाता है। काई-श्रेणी के पौधों में हरित् (क्लोरोफिल) मौजूद होता है और कभी-कभी दूसरे रंग के पदार्थ भी पाये जाते हैं। कुकुरमुत्ता की श्रेणी के पौधे सफेद रंग के या रंग-रहित होते हैं—इनमें हरित् नहीं होता है। इस श्रेणी के पौधों में फफूंद (मोल्ड) और शाकाणुओं या जीवाणुओं (बैक्टीरिया) का समावेश होता है।

काई-श्रेणी के पौधे नम जमीन या पानी में ही बढ़ते हैं। मिट्टी में पाये जानेवाले इस श्रेणी के जीव इतने छोटे होते हैं कि सूक्ष्म दर्शक यंत्र की सहायता बिना देखे ही नहीं जा सकते हैं। इनकी वृद्धि और पोषण के लिए सूर्य के ताप और प्रकाश की आवश्यकता होती है। अतएव ये जमीन के धरातल पर ही पनपते हैं। विशेषज्ञों का मत है कि इस श्रेणी के कुछ जीव वातावरण में से नोषजन ग्रहण करके सेंद्रिय यौगिकों का निर्माण करते हैं। इनके मृत देह में स्थित नोषजन ऊंची श्रेणी के पौधों के काम आ सकता है। संभवतः, यही नोषजन पौधों के काम आता है। जीवाणु भी वातावरण में से नोषजन ग्रहण करके पौधों को देते हैं।

फफूंद-श्रेणी के पौधे परोपजीवी होते हैं और अधिक उच्च कोटि के पौधों की जड़ों के ही संसर्ग में रहते हैं। ये तेजी से वृद्धि पाते और मरकर जल्द सड़-गलकर मिट्टी में मिल जाते हैं। इनकी देह में स्थित नोषजन तथा अन्य तत्व ऊँची श्रेणी के पौधों के काम आते हैं।

मिट्टी में जीवाणु या शाकाणु करोड़ों की संख्या में मौजूद रहते हैं। बीस मिनट की उम्र होते ही नई पुश्त का जन्म हो जाता है। अनुमान लगाया गया है कि २४ घंटों में एक ही कोश से लगभग एक करोड़ जीवाणुओं की सृष्टि हो जाती है। इनमें प्रतिकूल तापमान और परिस्थिति में भी सुरक्षित रहने की क्षमता होती है।

जीवाणुओं को रसायनशाला में पाला-पोसा और बढ़ाया जा सकता है। ये गुच्छों में ही दिखाई देते हैं। इन गुच्छों में से एक जीवाणु का पता पाने के लिए बहुत अधिक शक्ति के सूक्ष्म दर्शक यंत्र की आवश्यकता होती है। इनके आकार-प्रकार, भेद-उपभेद, रूप-रंग आदि पर कुछ लिखने की आवश्यकता नहीं है।

जीवाणुओं और पौधों के भोज्य पदार्थ एकसमान ही हैं। जीवाणु

में हरित् का अभाव है। अतएव, ये कार्बोज और ऐसे ही अन्य पदार्थों पर ही जीवन-निर्वाह करते हैं। ये सेंद्रिय यौगिकों में से ही नोषजन ग्रहण करते हैं। कुछ किस्म के जीवाणु, अमोनिया के लवण, नत्रेत (नाइट्रेट) और वातावरण में से भी नोषजन प्राप्त करते हैं। कुछ जीवाणु पालक-पौधों पर और कुछ जीवाणु सड़े-गले पदार्थों पर जीवन-यापन करते हैं।

कुछ ऐसे जीवाणु होते हैं, जिनको ओषजन की आवश्यकता रहती है और कुछ ओषजन के अभाव में भी वृद्धि पाते रहते हैं। कुछ किस्में बहुत ही हल्के क्षार या अम्ल में खूब बढ़ती हैं।

भारतीय किसान यह बात अच्छी तरह से जानते हैं कि दलहन की फसलों के बाद बोई गई गेहूं, ज्वार आदि की फसलें ज्यादा उपज देती हैं। ज्वार, मक्का, कपास, गेहूं आदि फसलों में उर्द, मूंग, अरहर, चना आदि भी इसी उद्देश्य से बोये जाते हैं। सन, गुवार, मूंग ढेंचा आदि बोकर हरी खाद देने के महत्व से भी वे भली प्रकार परिचित है।

अनुसंधानों से पता चला है कि दलहन की फसलें नोषजन ग्रहण करके अपने शरीर में संग्रहीत कर लेती हैं; किंतु इससे मिट्टी में के नोषजन की मात्रा कम नहीं होती है; बढ़ अवश्य जाती है। यह बात सभी प्रकार की दलहन की फसलों को समान रूप से लागू होती है।

दलहन-फसलों की जड़ों पर मसे के समान छोटी-छोटी गांठें होती हैं। ये मसे या गाँठें उन्हीं जीवाणुओं द्वारा बनाई जाती हैं, जो पौधे की जड़ों में प्रवेश पा लेते हैं और यही जीवाणु नोषजन ग्रहण करके पौधों को देते हैं। नोषजन के यौगिकों के अभाव में पौधों की बाढ़ रुक जाती है। जीवाणु दलहन-फसलों के पौधों की जड़ों पर मसे बनाते हैं और तब पौधों को मिट्टी में के नोषजन के यौगिकों पर अवलंबित नहीं रहना पड़ता है। जीवाणुओं के अभाव में इन पौधों की जड़ों पर मसे बन नहीं पाते हैं और तब पौधों को मिट्टी में स्थित नोषजन के यौगिकों में से नोषजन ग्रहण करना पड़ता है। मिट्टी में नोषजन के यौगिक तथा उपयुक्त जीवाणुओं के होने से पौधों की बाढ़ बहुत ही अच्छी होती है। कुछ अनुभवी किसानों का मत है कि फसल के उग आने के बाद खेत में पौधों की जड़ों के पास थोड़ी मात्रा में नोषजनयुत खाद दे देना लाभदायक ही है।

वातावरण में से नोषजन चाहे पत्तों द्वारा ग्रहण किया गया हो या जड़ों द्वारा; किंतु यह निश्चित है कि यह नोषजन मसों या गांठों में ही संचित किया जाता है। यदि मसों को पानी में डुबो दिया जाय, तो नोषजन-संचय की क्रिया रुक जाती है। मसों का तंतु-जाल जड़ों से संबंध बनाये रखता है और उनमें के जीवाणु या शाकाणु अत्यधिक क्रियाशील होते हैं।

जीवाणुयुत मिट्टी, जीवाणुरहित मिट्टीवाली जमीन में मिलाकर खेत में जीवाणुओं का प्रवेश करा दिया जाता है। इससे भी कुछ लाभ होता देखा गया है। किंतु ऐसा करना व्यावहारिक दृष्टि से संभव प्रतीत नहीं होता है; कारण कि कुछ हजार या कुछ लाख जीवाणु मिट्टी में मिला देने मात्र से ही विशेष सुधार हो जाने की आशा करना व्यर्थ ही है। यदि जमीन में जीवाणु नही है, तो इसका स्पष्ट कारण यह है कि उस मिट्टी की अवस्था जीवाणुओं के पोषण और वृद्धि के उपयुक्त नहीं है। इस प्रतिकूल परिस्थिति में सुधार किये बिना—उस मिट्टी के दोषों का पता लगाकर उन्हें दूर किये बिना, इस दिशा में कुछ भी नहीं किया जा सकता है। यदि परिस्थिति दालवाली फसलों के अनुकूल होगी तो नैसर्गिक रूप से ही जीवाणुओं की संख्या-वृद्धि बहुत ही तेज गति से होती रहेगी और दूसरे खेत से मिट्टी लेकर खेत में डालने की आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी।

दालवाली फसलों के पौधों की जड़ों पर के मसों का रस खेत में मिलाने से अच्छे परिणाम निकले हैं। किंतु जिस प्रकार की फसल के पौधों की जड़ों पर के मसों का रस लिया गया था, उसी फसल को इससे लाभ पहुंचा है। अनुमान है कि हरएक किस्म की दलहन के पौधों पर एक खास किस्म के जीवाणु ही वृद्धि पाते हैं। अधिकांश किस्म के जीवाणु एक ही कुटुंब के हैं, कितु ये किसी खास किस्म के पौधों के संसर्ग में आने पर इतने अधिक बदल जाते हैं कि दूसरी किस्म की फसल पर मसे बना ही नहीं सकते हैं। वे अपने पालक-पौधे से इतने अधिक समरस हो जाते हैं कि अन्यत्र बेकार-से ही साबित होते हैं। जीवाणुओं के इस परिवर्तनशील गुण के कारण भविष्य में बहुत-कुछ उन्नति की जाने की आशा है, जैसा कि पौधों की नई नस्लें तैयार करके किया जा सकता है। अभी तक यह बात निश्चित नहीं हो पाई है कि दालवाली फसलों के अलावा दूसरी फसलें भी नोषजन को,

उसकी प्राथमिक अवस्था में (elementary form) में ग्रहण कर सकती हैं या नहीं।

जलाने पर जैव पदार्थों में के नोषजन के सिवा अन्य सब तत्व ओषिद के रूप में उड़ जाते हैं। जीवाणुओं के क्रिया-कलाप द्वारा मिट्टी में भी इसी प्रकार के परिवर्तन बहुत ही धीरे-धीरे होते रहते हैं। ओषजन होने के कारण नोषजनसहित सभी तत्त्व ओषिदों में बदल जाते हैं। नत्रीभवन (nitrification) की क्रिया द्वारा सल्फेट्स और नाइट्रेट्स बनते हैं। ओषजन के अभाव या कमी के कारण यह क्रिया बहुत ही धीमी गति से होती है और तब इसे दुर्गंध पैदा करनेवाली सड़न-क्रिया या पूयन (putrefication) कहते हैं। यदि जैव पदार्थ अधिक मात्रा में होते हैं, तो दुर्गंध इतनी तेज होती है कि उधर से होकर निकलना बहुत ही कठिन हो जाता है।

कृषि-विज्ञान की दृष्टि से अच्छी रीति तो यह है कि जैव पदार्थों को मिट्टी के अंदर दबा दिया जाय और वहीं नत्रीभवन की क्रिया पूरी होने दी जाय। गढ़े में घास, कचरा-कूड़ा, गोबर, राख, लीद आदि सभी पदार्थ भरकर सड़ाये जाते हैं। नत्रीभवन की क्रिया पूरी हो जाने पर इसे उठाकर खेत में फैलाकर मिट्टी में मिला देते हैं। कुछ किसान, गढ़े में भरे गये खाद से दुगुनी-तिगुनी खेत की मिट्टी, जिसमें चूने का अंश न हो, मिलाते हैं। किंतु व्यावहारिक दृष्टि से ऐसा करना संभव नहीं है; कारण कि ऐसा करने में बहुत ज्यादा परिश्रम करना पड़ता है। मिट्टी तो केवल इसलिए मिलाई जाती है कि खाद को सारे खेत में समान रूप से फैलाया जा सके। किंतु मिट्टी मिलाने के लिए खाद के ढेर को उलट-पुलट करने से नत्रीभवन की क्रिया तेजी से होने लगती है, जिससे नोषजन का कुछ अंश उड़ जाता है। मिट्टी मिला देने से नोषजन के उड़ जाने के कार्य में रुकावट पड़ती है। किंतु आमतौर से मिट्टी मिलाना बहुत ही कठिन काम जान पड़ता है।

प्रोटीड के सेंद्रिय यौगिकों में के नोषजन को नाइट्रिक एसिड में परिवर्तित करने का कार्य जीवाणु ही करते हैं। पहले अमोनिया और नाइट्रिक एसिड बनते हैं और तब कर्बन-द्वि-ओषिद और पानी। जीवाणुओं की

सहायता से ही अमोनिया नाइट्रिक एसिड में परिवर्तित होता है। मिट्टी की रसायन शाला में जुदे-जुदे किस्म के जीवाणु अपना-अपना कार्य करते रहते हैं; परिवर्तन होते रहते हैं और नाइट्रस (nitrous), नाइट्रिक एसिड में बदल जाता है।

जैव पदार्थयुक्त मिट्टी में उपयुक्त जीवाणु पर्याप्त संख्या में मौजूद रहते हैं। ओषजन के अभाव में ये जीवाणु अपना कार्य कर ही नहीं सकते हैं। इसलिए ये मिट्टी की उसी तह में रहते हैं, जो जोती-बोई जाती है। इससे नीचे की तह में ये कम संख्या में मिलते हैं। तीन फुट की गहराई पर इनकी संख्या बहुत ही कम होती है और नौ फुट की गहराई में तो ये मिलते ही नहीं हैं। अंधेरे में इनकी वृद्धि तेजी से होती है। अतएव, जमीन की सतह पर, जो अक्सर सूखी होती है, ये बहुत ही कम संख्या में पाये जाते हैं, कारण कि तेज प्रकाश में ये जीवित ही नहीं रह पाते हैं। इनकी प्रजा-वृद्धि के लिए मिट्टी में काफी नमी बनी रहनी चाहिए। किंतु जरूरत से ज्यादा पानी भर जाने पर प्रजा-वृद्धि का कार्य रुक जाता है, कारण कि मिट्टी के कणों के बीच में व्याप्त ओषजन के निकल जाने से ओषदीकरण के लिए ओषजन मिल ही नहीं पाता है। कुएं या अन्य साधनों द्वारा प्राप्त जल में भी ये मौजूद रहते हैं। किंतु गटरों के पानी और सड़े-गले पदार्थ मिले हुए पानी में अत्यधिक संख्या में पाये जाते हैं।

नत्रेत के निर्माण के लिए ही नहीं, नोषजन के इस रूप को बनाये रखने के लिए भी, ओषजन का होना आवश्यक होता है। अनुकूल परिस्थिति के अभाव में रासायनिक क्रियाओं में गड़बड़ हो जाती है, जिससे नोषजन की कमी पड़ जाती है।

जमीन में के एक विशेष किस्म के जीवाणुओं की क्रिया द्वारा नत्रेत नाम-शेष हो जाता है। पर्याप्त मात्रा में ओषजन न मिलने के कारण नत्रीभवन की क्रिया रुक-सी जाती है। कुछ किस्म के जीवाणु नत्रेत को नाइट्राइट में और कभी-कभी नोषजन में परिवर्तित कर देते हैं।

कुछ भी कारण क्यों न हो, पर इतना स्पष्ट है कि खेत को ऐसी अवस्था में बनाये रखना अत्यंत जरूरी है, जिसमें ओषदीकरण की क्रिया बिना रुकावट के ठीक तरह से होती रहे।

नत्रीभवन की क्रिया पर ही मिट्टी की फसल की नोषजन की मांग की पूर्ति करने की क्षमता निर्भर करती है; कारण कि इसी क्रिया द्वारा नोषजनीय यौगिकों को पौधों द्वारा सोख लिये जाने की अवस्था में लाया जाता है। जमीन की उर्वराशक्ति का नत्रीभवन की क्रिया से अति निकट का संबंध है। जोती जानेवाली सभी जमीनों में यह क्रिया जारी रहती है। किंतु परिस्थिति अनुकूल बना दी जाने पर यह क्रिया और भी तेजी से होने लगती है। ताप और नमी तथा ओषजन और चूना से इस क्रिया पर लाभदायक असर पड़ता है। जमीन का नितार अच्छा होने पर, जरूरत से ज्यादा पानी छनकर निकल जाता है, जिससे मिट्टी का तापमान बढ़ जाता है और ओषजन अधिक मात्रा में मिट्टी में प्रवेश पा लेता है।

जुताई से मिट्टी ढीली और पोली हो जाती है, जिससे ओषजन उसमें प्रवेश पा लेता है। किंतु ऐसा करने से मिट्टी में का पानी भाप बनकर उड़ जाता है। जड़ें मिट्टी में प्रवेश करती हैं, जिससे वह पोली हो जाती है और हवा भीतर प्रवेश पा लेती है। यही कारण है कि जिस जमीन पर फसल खड़ी होती है, उसमें नत्रीभवन-क्रिया अधिक तेजी से होती है। मिट्टी जम जाने से ओषजन बाहर चला जाता है, जिससे क्रिया में रुकावट-सी पड़ जाती है। शीतकाल में यह क्रिया धीमी गति से होती है; किंतु गरमी बढ़ते ही इसकी गति भी बढ़ जाती है।

दलहन को छोड़कर दूसरी सब फसलें सीधे वातावरण में से नोषजन को नहीं सोख सकती हैं; अन्य भोज्य पदार्थों के समान ही इसे भी मिट्टी में रहनेवाले यौगिकों से ही प्राप्त करती हैं।

पौधों के पोषण के लिए नोषजन का नत्रेत या नोषेत रूप ही आवश्यक है। पौधे नोषजन के यौगिक से ही नोषजन प्राप्त करते हैं। किंतु नत्रीभवन की क्रिया तेज गति से होते रहने पर भी मिट्टी में यह ज्यादा मात्रा में एकत्रित ही नहीं हो पाता है। सामान्य अवस्था में, मिट्टी में ग्रहण किया जानेवाला नोषजन, नत्रेत के रूप में होता है।

नोषजन छोड़कर पौधे के अन्य सभी भोज्य पदार्थ मिट्टी के निर्माण में योगदान करनेवाले मूल पदार्थों से ही प्राप्त होते हैं। नोषजन का आदिस्थान तो वातावरण ही है। पहले इस बात पर सविस्तार लिख आये हैं

कि पौधों को नोषजन कहाँ से और किस रूप में प्राप्त होता है। अतएव उसे यहां दोहराने की आवश्यकता नहीं है।

इन सभी साधनों द्वारा प्राप्त नोषजन, यथासाध्य शीघ्र ही, यौगिकों के रूप (form) के अनुसार नत्रीभवन की क्रिया का शिकार हो जाता है और जड़ें इसे तुरंत ही ग्रहण करके जैव पदार्थ का रूप प्रदान कर देती हैं। अधिकांश नोषजन मिट्टी में सक्रिय अवस्था में मौजूद नही रहता है। ज्यों-ज्यों जैव पदार्थ सड़ते-घुलते जाते है, त्यों-त्यों वे ऐसी अवस्था में आते जाते हैं कि जड़ें उन्हें सोख सकें। किंतु किसी एक समय में यह बहुत कम मात्रा में ही संचित रहता है। नत्रेत के मिट्टी में संचित न हो पाने का एक कारण यह भी है कि यह पानी में बहुत ही जल्दी घुल जाता है और इसके नितार के पानी में घुलकर खेत से बाहर निकल जाने की पूरी संभावना हर घड़ी बनी ही रहती है। इसलिए खेत खाली पड़ा न रहने दिया जाय। फसल बोकर, उसे हांक-जोतकर खेत की मिट्टी में मिला देने से यह हानि बहुत ही घट जाती है। बोई गई फसल खेत में ही या गोठे में मवेशियों को चरा दी जाय और चारे की जूठन और मवेशियों के मल-मूत्र आदि से खाद बना लिया जाय। इस रीति से भी हानि कम की जा सकती है।

नाना प्रकार के कीट-कीटाणु और जीवाणु, मिट्टी में निवास करते हैं। ये अपने भरण-पोषण और वृद्धि के लिए मिट्टी में स्थित ओषजन और जल का कुछ अंश ग्रहण करते हैं। ये मिट्टी में के रासायनिक यौगिकों को परिवर्तित करके घुलनशील अवस्था में ला देते हैं। जल्दी-से-जल्दी लाभ प्राप्त करने के हेतु, कृत्रिम रीति से, मिट्टी में कीट-जीवाणुओं का प्रवेश करा दिया जाता है। कृत्रिम उपायों द्वारा पाले-पोसे गये कीट-जीवाणु या शाकाणु (Becteria culture) बहुत थोड़ी मात्रा में खेत में बिखेर देने से, पहले से ही विद्यमान कीट-जीवाणु अपना कार्य द्रुत गति से करने लगते है। इसका परिणाम यह होता है कि कीट-जीवाणुओं की संख्या तेजी से बढ़ने लगती है और मिट्टी की उर्वरा-शक्ति में काफी वृद्धि हो जाती है। इनकी सहायता बिना न तो गोबर ही पौधों के काम आ सकता है और न गोबर आदि में किसी तरह का परिवर्तन ही हो पाता है।

किसानों का मित्र केंचुआ—प्रसिद्ध वैज्ञानिक अरस्तू केंचुआ को 'मिट्टी

की आंत' के नाम से संबोधित करते हैं। सर अलबर्ट हॉवर्ड का कथन है कि केंचुए जमीन को स्वस्थ अवस्था में बनाये रखते हैं, जिससे मिट्टी के अंदर रहनेवाले जीवाणु और अन्य लाभ पहुँचानेवाले कीट स्वस्थ और पुष्ट बने रहते हैं। केंचुए आदि कीटों द्वारा बनाये गये बिलों-छिद्रों द्वारा वायु जमीन के अंदर अधिक गहराई तक प्रवेश पाती रहती है। इन्हीं छिद्रों में से होकर मिट्टी में का जरूरत से ज्यादा पानी उप-भूमि (Sub-soil) में उतर आता है। केंचुए के शरीर में से छोड़ी गई मिट्टी बहुत ज्यादा उपजाऊ होती है; कारण कि इसमें नोषेत, फासफेट और पोटैश प्रचुर मात्रा में रहता है। अमेरिका में किये गये प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि केंचुए के शरीर में से तुरंत ही बाहर फेंके गये पदार्थ, जिसे मल कहना अधिक सयुक्तिक होगा, उपयोज्य या प्राप्त नोषजन के रूप में पांच गुना, प्राप्य फासफेट के रूप में सात गुना और प्राप्य पोटैश के रूप में ग्यारह गुना अधिक मूल्यवान होते हैं। अमेरिका के वैज्ञानिकों के मत से केंचुआ किसानों की खाद तैयार करने की फैक्टरी है। बक्सों में केंचुओं का मल भरकर उगाये गये पौधों की पैदावार बहुत ज्यादा आई है।

'अवर फ्रेंड—दि अर्थ वर्म' (हमारा मित्र केंचुआ) नामक पुस्तक में इस संबंध में सविस्तार विवेचन किया गया है। सर अलबर्ट हॉवर्ड के मत से यह मिट्टी का आदर्श विश्लेषक है। संयुक्त राज्य अमेरिका में अनेक व्यापारिक संस्थाएं हैं, जो केंचुए पालकर बेचने का धंधा करती हैं। किसान इन्हें खरीदकर खेतों या खाद के ढेर में छोड़ते हैं। स्थानाभाव के कारण इस संबंध में या अन्य कीटों के संबंध में अधिक नही लिखा जा सका है।

भारत में अभी इस ओर ध्यान नहीं दिया गया है। फिर भी, यदि किसान खेतों तथा खाद के ढेरों में केंचुए छोड़ने लगें, तो विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि अवश्य ही लाभ होगा।

मिट्टी के अंदर दूसरे कई प्रकार के कीट और प्राणी निवास करते हैं, जो सदा किसान का हित-साधन करते रहते हैं। किंतु उनके कार्य-कलाप पौधों के भोज्य पदार्थों का निर्माण करने में प्रत्यक्ष रूप से किसी प्रकार की सहायता नहीं करते हैं। अतएव उनके संबंध में यहां कुछ भी नहीं लिखा गया है।

जमीन की उत्पादन-शक्ति

सर्वसाधारण जमीन को अनुर्वरा या उर्वरा कहते हैं। जबतक आब-हवा की खराबी, मिट्टी में हानिकारक पदार्थों के बढ़ जाने या अन्य आकस्मिक परिस्थितियों के कारण जमीन की उर्वरा-शक्ति हमेशा के लिए नष्ट नहीं हो जाती है, वह कभी अनुर्वरा होती ही नहीं है। जमीन को जरूरत से ज्यादा भरे हुए पानी का नितार या निस्तार का समुचित प्रबंध करके तथा खाद, जुताई आदि की सहायता से फसल बोने योग्य बनाया जा सकता है। कुछ जमीनें अन्य कुछ जमीनों से अधिक उर्वरा होती हैं। इन्हें ही बोलचाल की भाषा में जोरदार या अच्छी उपजाऊ जमीनें कहते हैं।

किसान अपने प्रयत्नों से जमीन को कम-ज्यादा उपजाऊ बना सकता है। यदि जमीन बहुत ही कम हो और कुछ महंगी ही मिलती हो, तो उर्वरा-शक्ति बढ़ाना ही लाभदायक है और इस प्रकार बढ़ाई गई उर्वरा-शक्ति को सामान्य दर्जे के उपजाऊपन से काफी ऊंची बनाये रखकर स्थिर रखना नितांत आवश्यक है। यदि जमीन सस्ती और काफी उपजाऊ हो, तो मिट्टी की नैसर्गिक उर्वरा-शक्ति पर पूर्ण रूप से आश्रित रहना ही अधिक हितकर है।

बिना काफी खाद दिये, हर साल, एक के बाद एक फसल लेते रहने से उत्पादन-क्षमता बहुत अधिक घट जाती है, तब उसे कमजोर या 'निकस' जमीन कहते हैं। इसका साफ मतलब यह है कि उसकी उत्पादन-शक्ति मामूली दर्जे के उपजाऊपन से भी कम हो गई है, अर्थात् जमीन की नैसर्गिक उत्पादन-क्षमता अपनी अंतिम सीमा से भी कुछ नीचे उतर गई है। सर्वसाधारण की भाषा में कहा जा सकता है कि जमीन बिल्कुल ही निकस या बेकस हो गई है। इससे यही समझा जाना चाहिए कि जमीन के जोतने-बोने आदि खेती के काम में लगा खर्च और मिहनत का मुआविजा तक खेती की पैदावार से मिल नहीं पाता है। इसका मतलब यह हरगिज नहीं है कि जमीन एकदम ऊसर या बेकार हो गई है—जमीन में के पौधों के भोज्य पदार्थों का अंतिम अंश तक फसल के रूप में निकाल लिया गया है। ऐसी अवस्था कभी प्राप्त हो ही नहीं सकती है; और कभी ऐसी

अवस्था प्राप्त हो ही जाती है, तो वह स्थिर ही रहती है। जमीन की मिट्टी के निर्माण का कार्य सतत जारी रहता है और मिट्टी में पौधों का भोजन तैयार करने का काम रात-दिन चला करता है। जमीन में का अघुलनशील भोज्य पदार्थों का अटूट संग्रह कभी खतम हो ही नहीं सकता है।

जमीन की नैसर्गिक उत्पादन-शक्ति का मतलब है खाद के रूप में किसी पदार्थ के खेत की मिट्टी में मिलाये बिना ही प्राप्त हो जानेवाली पैदावार। जमीन की यह नैसर्गिक उत्पादन-शक्ति, अधिकांश में इस बात पर निर्भर करती है कि उसपर उगी हुई फसल काटकर हटा ली जाती है या नहीं। यदि उगी हुई फसल खेत में ही खड़ी रह जाती है, तो जमीन से खींच लिये गये सभी भोज्य पदार्थ, समय पाकर, उसे अधिकांश मात्रा में आप-ही-आप वापस मिल जाते हैं, जो फिर फसल के काम आते हैं। फसल के उग आने के दिन से, उसके सड़कर फिर से मिट्टी में मिल जाने तक की अवधि में पौधे के भोज्य पदार्थों का निर्माण होता रहता है और भोज्य पदार्थों के संग्रह में उतनी मात्रा बढ़ जाती है, जिससे बाद की फसल की पैदावार ज्यादा आती है और धीरे-धीरे जमीन की उर्वरा-शक्ति बढ़ जाती है।

जितनी अवधि में एक एकड़ में उगी हुई फसल जितनी मात्रा में भोज्य पदार्थ ग्रहण करती है, उतनी ही अवधि में मिट्टी में उतनी ही मात्रा में भोज्य पदार्थों का निर्माण नहीं होता है। इसलिए फसल को काटकर हटा लेने से पौधों के भोज्य पदार्थों के संचय में उतनी ही मात्रा में कमी हो जाती है। किंतु व्यवहार में बात दूसरी ही दिखाई देती है। जमीन की जुताई आदि के कारण भोज्य पदार्थों के निर्माण-कार्य की गति में ज्यादा तेजी आ जाती है; कुछ अधिक मात्रा में उनका निर्माण हो जाता है, जिससे कुछ ज्यादा पैदावार प्राप्त कर लेने में कुछ हर्ज नहीं है। फिर भी, आवश्यकता इस बात की है कि खेती के उन तरीकों का आसरा कदापि नहीं लिया जाना चाहिए, जिनसे उपजाऊपन घट जाता हो। यदि जमीन से लगातार फसलें ली जाती हों, तो ऐसे तरीकों को अपनाया जाना चाहिए, जो जमीन की उत्पादन-शक्ति को स्थिर तो रखें ही; साथ ही, यदि संभव हो तो उसे कुछ बढ़ा भी दें।

कुछ समय पूर्व तक तो किसानों ने यह तरीका अपनाया हुआ था कि

थोड़े वर्षों तक फसलें लेते रहने के बाद जमीन को कुछ समय तक के लिए यों ही बिना जोती-बोई छोड़ देते थे। उसे जोरदार बनाने के लिए परती रखते थे। किंतु इस बीसवीं सदी में यह संभव नहीं है। वर्तमान काल में लगातार एक के बाद दूसरी फसल ली जाती है। इसलिए फसल के रूप में जमीन में से निकाले गये भोज्य पदार्थों को खाद या उर्वरक के रूप में अवश्य ही जमीन को लौटा देना चाहिए। जोरदार बनाने के लिए जमीन को परती रखने की अपेक्षा मूंग, सन आदि जैसी दलहन-फसलें बोकर हरी खाद देना ही अत्यधिक लाभदायक है।

कहीं-कही चारे की फसल बोकर खेत में ही खड़ी फसल मवेशियों को चरा देने का रिवाज है। किंतु इसकी अपेक्षा चारे की फसल काटकर गोठों में खिलाना ही अधिक सुविधाजनक है और पशुओं के मल-मूत्र, कचरा-कड़ा आदि से खाद तैयार करके खेत में डालने से उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है।

हरेक फसल को नोषजन, पोटैश, फासफेट आदि भोज्य पदार्थ भिन्न-भिन्न मात्रा में आवश्यक होते हैं और यह मात्रा बहुत-कुछ जमीन की उर्वरा-शक्ति, फसल की बाढ़, उपज आदि पर निर्भर करती है। फिर भी स्थूल मान से यह कहा जा सकता है कि प्रति एकड़ ७०-७५ पौंड नोषजन, २३-२४ पौंड फास्फरिक एसिड और ७९-८० पौंड पोटैश ग्रहण कर लिया जाता है। यदि फसल द्वारा ग्रहण कर लिये गये भोज्य पदार्थ जमीन को वापस नहीं किये जाते हैं, तो वह तेजी से 'बेकस' होने लगती है और धीरे-धीरे प्रति-एकड़ पैदावार घट जाती है।

किसान फसल की पैदावार—नाज, दाना, कड़बी, घास-चारा, फूल-फल-पत्ते, दूध-दही-घी आदि—के रूप में स्वयं खाता, पशुओं को खिलाता या बाजार में बेच देता है। इस प्रकार उपज का अधिकांश भाग खेत को वापस नहीं मिल पाता है। डंठल, जड़ें, पत्ते आदि के रूप में कुछ अंश खेत में ही सड़-गलकर मिट्टी में घुल-मिल जाता है। यदि मनुष्य और पशुओं का मल-मूत्र, कचरा-कूड़ा, भूसा, पत्ते आदि गढ़े में सड़ाकर खाद करके खेत में डाला जाता रहे तो जमीन का उपजाऊपन कायम रखा जा सकता है। यदि ऐसा करना संभव न हो, तो गोबर-कम्पोस्ट आदि की खाद, खली, उर्वरक आदि खरीदकर खेत में डाले जाने चाहिए।

यदि फसलों द्वारा ग्रहण कर लिये गये भोज्य पदार्थों के परिमाण से कम मात्रा में ही ये खेत को वापस किये जाते हैं, तो जमीन का उपजाऊ-पन उसी अनुपात से घट जाता है। अभी तक यह निश्चित नहीं हो पाया है कि मिट्टी की रसायनशाला द्वारा किस प्रतिशत मात्रा में अघुलनशील पदार्थ जड़ों द्वारा ग्रहण कर लिये जा सकने की अवस्था में, परिवर्तित किये जाते हैं। भिन्न-भिन्न फसलों की भोज्य पदार्थ ग्रहण करने की क्षमता भी भिन्न-भिन्न होती है और जुदी-जुदी फसलों को जुदे-जुदे भोज्य पदार्थ न्यूनाधिक मात्रा में आवश्यक होते हैं। विशेषज्ञों का कथन है कि नोषजन देने पर, अन्य दो मुख्य भोज्य पदार्थ—फासफेट और पोटैश, भी उसी अनु-पात से अधिक मात्रा में खर्च होते हैं।

खाद की आवश्यकता

भारत में जमीनें हजारों वर्षों से जोती-बोई जाती रही हैं और सभी राज्यों में लाखों एकड़ भूमि ऐसी है, जिसमें कभी खाद ही नहीं दी जाती है। इन जमीनों में हरसाल फसलें निकाली जाती हैं। यही कारण है कि जमीनों की उत्पादन-शक्ति अपनी अंतिम सीमा तक घट गई है; कारण कि पौधों के जड़-डंठल और पत्तों के सिवा उन्हें खाद के रूप में अन्य कोई पदार्थ कभी प्राप्त ही नहीं होता है। अतएव यह आवश्यक ही नहीं, अनि-वार्य भी है कि जमीन की उपजाऊ शक्ति बनाये रखने के लिए ही नहीं, उसमें वृद्धि करने के लिए भी, खाद और उर्वरक दिये जाने चाहिए।

यों तो भारत की जमीनें आज भी कुछ-न-कुछ पैदावार दे ही देती हैं, किन्तु मुख्य प्रश्न तो यह है कि क्या किसान को अपने श्रम और व्यय का पूरा-पूरा फल मिल पाता है? क्या आज कृषि-व्यवसाय एक लाभदायक धंधा है?

भारत के लगभग सभी किसान कृषि-व्यवसाय के आय-व्यय का लेखा नहीं रखते हैं। इससे वे यह जान ही नहीं पाते हैं कि उन्हें इस धंधे में लाभ होता है या हानि उठानी पड़ती है।

किसान यह बात भले प्रकार जानते हैं कि खाद देने से ज्यादा उपज आती है। सारे भारत में अधिकतर गोबर-घूरे की खाद ही काम में ली

जाती है। किन्तु अधिकांश प्रदेशों में ईंधन का अभाव होने के कारण गोबर के उपले ही ईंधन की जगह काम में लिये जाते हैं। ज्वार के मोटे डंठल, सनेटी, बनसटी, तिलौंजा आदि जलाये जाते या झोपड़े बनाने के काम में लिये जाते हैं। मनुष्य और पशुओं का मूत्र खाद के काम में लिया ही नहीं जाता है। मनुष्य के मल का भी, नहीं के बराबर ही, खाद की तरह, उपयोग किया जाता है और वह भी केवल बड़े-बड़े नगरों में ही। खाद बनाने का तरीका भी दोषपूर्ण ही है। यही कारण है कि खाद का अभाव सदा बना रहता है। इस अभाव की पूर्ति के हेतु उर्वरकों का सहारा लिया जाय, तो प्रति एकड़ पैदावार काफी बढ़ सकती है, जिससे ज्यादा माल बाजार में बेचकर काफी लाभ उठाया जा सकता है। साथ ही अधिक मात्रा में पौष्टिक भोजन बाजार से खरीदकर पशुओं को खिलाया जाय तो पशुओं के मल-मूत्र से ऊंचे दर्जे की खाद तैयार की जा सकेगी। बैल-गाय आदि ताकतवर और पुष्ट हो जायंगे और दूध-घी की भी कमी नहीं रह जायगी।

वैज्ञानिकों का मत है कि पदार्थ कभी विनष्ट नहीं होते हैं, केवल अपना रूप बदल लेते हैं। प्रकृति का यह अटल नियम सभी पदार्थों पर समान रूप से लागू होता है। फसल की पैदावार का वजन, बोये गये बीज के वजन से इतना अधिक होता है कि अकसर हम अज्ञानवश यह मान बैठते हैं कि ईश्वर की ही असीम दया से एक का दसों गुना अधिक प्राप्त हो जाता है, या दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं कि राई से टेकड़ी का निर्माण हो जाता है। सच बात तो यह है कि पौधों ने जमीन और वातावरण में से जितने भी पदार्थ प्राप्त किये हैं उन्हें ही दूसरे रूप में प्रस्तुत कर दिया है।

अकसर देखा जाता है कि किसान जितने पशु पाल-पोस सकता है, उससे कई गुने अधिक पशु वह रख लेता है। नतीजा यह होता है कि सभी मवेशियों को आधे पेट रहना पड़ता है। यह एक सर्वमान्य बात है कि जो पदार्थ प्राणियों के पेट में जाते हैं, वे ही मल-मूत्र के रूप में शरीर से बाहर फेंके जाते हैं। यदि केवल घास-भूसा ही खिलाया जाता है, तो मल-मूत्र के रूप में वे ही प्राप्त होते हैं। यदि प्राणियों को पौष्टिक पदार्थ खिलाये जाते हैं, तो मल-मूत्र में ये भी प्राप्त होते हैं और पौधे के भोज्य पदार्थों की दृष्टि से, इनसे बनाई गई खाद भी अधिक मूल्यवान होती है। यहां यह बात

सदा स्मरण रखनी चाहिए कि अधिक-से-अधिक उपज प्राप्त करने के लिए पौधे के भोज्य पदार्थों का एक निश्चित अनुपात में मिट्टी में रहना अनिवार्य है। यदि इस निश्चित अनुपात से कम मात्रा में मौजूद होंगे, तो पैदावार भी उसी मान से कम ही आंयगी। इस अनुपात में गड़बड़ होने का भी पैदावार पर बुरा असर पड़ता है।

अमेरिका की मोनसेंटो केमिकल कंपनी ने क्रीलियम (krilium) नामक एक नया रासायनिक पदार्थ तैयार किया है, जो जमीन का पोत सुधारने में कम्पोस्ट खाद आदि जैव खादों की अपेक्षा सौ से हजार गुना तक अधिक गुणकारी है। यह पदार्थ नैसर्गिक जैव तत्व का स्थान बाखूबी ग्रहण कर सकता है। उर्वरा भूमि और बंजर जमीन में यह तत्व पर्याप्त मात्रा में रहता है। किन्तु कांप-मलई से बनी भूमि, हलकी मटियार जमीन में, इसका अभाव रहता है। दावा किया गया है कि इस पदार्थ को डालने से अनुपजाऊ और हलकी किस्म की जमीन भी अच्छी उपज देने लगती है। भोज्यान्नों की कमीवाले देशों के लिए, संभव है, यह पदार्थ बरदान साबित हो।

अमेरिका में 'एग्रिकलचरल क्रिट' नामक कांच के समान एक रासायनिक पदार्थ तैयार किया गया है, जो बाजार में 'एफ-टी-ई' के नाम से बेचा जाता है। इसमें मैगेनीज, लोहा, जस्ता, तांबा, बोरोन और माली बडीनम है। इस पदार्थ की खाद देने से आलू की पैदावार प्रतिशत ४० बढ़ गई है। मक्का में एक टन की वृद्धि हुई है और बंदगोभी, टमाटर आदि की पैदावार भी खूब बढ़ गई है। खनिज तत्वों को गलाकर बनाया गया कांच-जैसा यह पदार्थ मिट्टी में गलनेवाले लवणों की तरह बहकर नष्ट नहीं होता है।

कृत्रिम खाद के विशेषज्ञ श्री एलेक्स का कथन है कि जमीन की उत्पादन-शक्ति का प्रतिशत ८० भाग पशु के मल-मूत्र में निहित रहता है। एक गाय एक वर्ष में १२ से २५ टन तक खाद देती है। 'डेअरी कैटल एंड मिल्क प्रोडक्शन' नामक पुस्तक में लिखा है कि १०० पौंड वस्तु घोड़े को खिलाने से २१० पौण्ड खाद मिल जाती है। इतना ही पदार्थ खाकर भेड़ १८३ पौंड खाद देती है। किन्तु गाय इतना ही पदार्थ खाकर ३८४ पौंड खाद

देती है। श्री एलेक्स ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि एक बुशल नाज प्राप्त करने में गाय के मल-मूत्र द्वारा २३ सेंट में जितनी उत्पादन-शक्ति प्राप्त की जाती है, उतनी उत्पादन-शक्ति उर्वरकों द्वारा प्राप्त करने में २७ सेंट खर्च करने पड़ते हैं।

: ३ :

खाद देने के सिद्धांत

परिभाषा—वे सभी और केवल वे ही पदार्थ, जिनमें पौधे के भोज्य पदार्थ, एक विशेष मात्रा में, जड़ों द्वारा सोख लिये जाने की अवस्था में मौजूद हों या जो शीघ्रतापूर्वक इस अवस्था में परिवर्तित हो जाने की क्षमता रखते हों, 'खाद' कहलाते हैं। ये सीधे खेत में फैलाकर मिट्टी में मिलाये जा सकते हैं। इसमें गोबर, घूरे का खाद, प्राणियों द्वारा उत्सर्ग किये गये मल-मूत्र, प्राणियों के शरीर के भाग और पौधे के बेकार भाग, जो जमीन को वापस किये जाते हैं, शामिल हैं। भारत में, मुख्यत:, इन्हें ही 'खाद' नाम से पहचाना जाता है। वैज्ञानिक दृष्टि से कई खनिज पदार्थ, गैस तैयार करनेवाले कारखानों से प्राप्त पदार्थ तथा लोहे और हड्डी के कारखानों से प्राप्त होनेवाले पदार्थ भी खाद में शुमार होते हैं। इसमें खली आदि ऐसे पदार्थ, जो पशुओं को खिलाये जा सकते हैं, शुमार नहीं होते हैं। प्राणियों के भोज्य पदार्थों के सड़-गल जाने या अन्य किसी प्रकार से बेकार हो जाने पर, जब खाद के गढ़े में या सीधे खेत में फेंक दिये जाते हैं, तभी उन्हें 'खाद' संज्ञा दी जाती है। चूने के यौगिक पौधे की देह में विद्यमान हैं। अतएव चूना खाद में शुमार किया जा सकता है। सारांश में, 'खाद' उस पदार्थ को कहते हैं, जो पौधे के भोज्यान्नों की पूर्ति के लिए खेत की मिट्टी में मिलाये जाते हैं।

गोबर-घूरे की खाद में वानस्पतिक पदार्थों के अवशेष ही अधिक मात्रा में मौजूद रहते हैं। अतएव इनके बहुत ज्यादा मात्रा में डालने पर ही पौधों की भोज्य पदार्थों की मांग पूरी की जा सकती है। किन्तु फसलों द्वारा खेत की मिट्टी में से ग्रहण किये गये सभी पदार्थों को खाद के रूप में मिट्टी

को वापस करना अनिवार्य नहीं है। पौधे की वृद्धि के लिए जिन तत्वों की आवश्यकता होती है उनमें से कर्बन, उज्जन और ओषजन पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है। कर्बन पौधों को वातावरण में से मिल जाता है। पौधों के पोषण की दृष्टि से मिट्टी में कर्बन का मौजूद होना जरूरी नहीं है। किन्तु एक दूसरी दृष्टि से मिट्टी में कर्बनयुत पदार्थों का होना महत्वपूर्ण है। उज्जन और ओषजन मुख्यतः पानी से मिल जाते हैं। गंधक, लौह और मैगनेशिया साधारणतः पौधों की जरूरत पूरी करने भर का मिट्टी में संचित रहता ही है। गंधक वर्षा के पानी के साथ पर्याप्त मात्रा में मिल जाता है। पौधों को लौह इतनी कम मात्रा में आवश्यक होता है कि मिट्टी में उसकी मात्रा कम होने का प्रश्न ही उपस्थित नहीं हो सकता है। अकसर कहा जाता है कि लौह की कमी के कारण पौधों के पत्तों का हरा रंग फीका पड़ जाता है। किन्तु जांच से पाया गया है कि इसका कारण लौह की कमी नहीं, कुछ दूसरा ही है। बहुत ही कम खेत ऐसे हैं, जिनमें खाद के रूप में मैगनेशिया देने की आवश्यकता होती है, कारण कि मिट्टी में मैगनेशिया के यौगिक पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध रहते हैं।

चूना आदि अनावश्यक भोज्य पदार्थों को छोड़ देने पर, नोषजन, पोटैश और फास्फरिक एसिड ही तीन ऐसे पदार्थ हैं, जिन्हें खाद के रूप में मिट्टी में मिलाना अनिवार्य है। मिट्टी में न्यूनाधिक मात्रा में इनकी कमी पाई जाती है। खेती की पैदावार को बेच देने से नोषजन और फासफेट का बड़ा भाग नष्ट हो जाता है। कुछ नोषजन अन्य रीति से भी नष्ट हो जाता है। ये ही पदार्थ, मुख्यतः मिट्टी को खाद के रूप में अवश्य ही वापस किये जाने चाहिए और इसलिए ये ही खाद के प्रमुख अंग माने जाते हैं। खाद का मूल्य निर्धारित करते समय उसमें के नोषजन, पोटैश और फासफरिक एसिड के प्रतिशत परिमाण पर ही मुख्य रूप से विचार किया जाता है। इन्हें ही कभी-कभी खाद के तत्व या उत्पादक पदार्थ कहते हैं।

फसल द्वारा ग्रहण किये गये भोज्य पदार्थ जमीन को वापस देने, या जमीन की उपजाऊ शक्ति बनाये रखने या जमीन की नैसर्गिक उत्पादन-क्षमता में वृद्धि करने के हेतु से ही खाद दी जाती है।

जमीन के उपजाऊपन को बनाये रखने के लिए गोबर-घूरे की खाद

देना पर्याप्त है और जबतक गोबर-घूरे की खाद के मुख्य तत्व वे ही पदार्थ रहेंगे, जो मिट्टी में से सोख लिये गये हैं, तबतक यह उत्पादन-शक्ति बढ़ाने में समर्थ नही हो सकेंगे, उसे स्थिर ही रख सकेंगे। यदि जमीन की पैदावार का बेचा जाना रोका जा सके या कम किया जा सके तो उसी अनुपात में यह खाद उत्पादन-शक्ति बढ़ा सकती है। किन्तु ऐसा करने से खेती का धंधा एक लाभदायक व्यवसाय नही रह जायगा। अलबत्ता इसमे खली आदि अन्य पदार्थ मिला दिये जायं, या पशुओं को खिलाकर उनके मल-मूत्र से खाद बनाई जाय तो यह अधिक लाभकारी बन सकती है। किन्तु भारत में यह खाद इतनी कम मात्रा में तैयार की जाती है कि इसका सदा अभाव ही बना रहता है। इसलिए रासायनिक खादों या उर्वरकों का सहारा लिये बिना दूसरा कोई चारा ही नहीं रह जाता है। उर्वरकों का एकमात्र कार्य उत्पादन-शक्ति बढाना ही है। गोबर-घूरे की खाद के बदले में उचित अनुपात में तैयार किये गये उर्वरकों के मिश्रण का उपयोग सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

रासायनिक या कृत्रिम खादों—उर्वरकों—में, नोषजन, फासफेट और पोटैश, तीनों ही तत्व, या इन तीनों में से कोई एक या दो तत्व विद्यमान रहते हैं। उर्वरक में मुख्य रूप से पाये जानेवाले तत्व के आधार पर ही उसे नोषजनीय या फास्फेटयुत या पोटैशयुत खाद कहते हैं। हरेक किस्म की खाद कई प्रकार की होती है और इनमें खाद के तत्वों की प्रतिशत मात्रा भी न्यूनाधिक होती है। अधिक-से-अधिक उपज प्राप्त करने के लिए किसान इनमें से किसी एक किस्म के खाद को अपनी इच्छा और आवश्यकता के अनुसार काम में लेता है। आजकल गोबर-घूरे की खाद और उर्वरकों की तुलना करने का जो रिवाज-सा पड़ गया है, वह अनुचित है। इस प्रकार की तुलना तो तभी की जा सकती है, जबकि एक के बदले में दूसरे का उपयोग किया जाता हो। यदि गोबर-घूरे की खाद के बदले में उर्वरक दिया जाय, तो तीनों ही प्रमुख पदार्थों के मिश्रण को ही काम में लिया जाना चाहिए। इनको उस अनुपात में ही मिलाना चाहिए, जिस अनुपात में ये तीनों प्रमुख तत्व गोबर-घूरे ही खाद में विद्यमान हों; किन्तु स्मरण रखना चाहिए कि उर्वरक से मिट्टी में भौतिक या जीवाणुओं की

गति विधि-संबंधी सुधार नहीं किये जा सकेंगे। यदि जमीन की नैसर्गिक उर्वरा-शक्ति में वृद्धि करने के लिए ही उर्वरक दिये जायं, तो बोई जानेवाली फसल की जरूरत की जांच-पड़ताल करके ही दिये जाने चाहिए।

जमीन की भौतिक रचना और रासायनिक बनावट पर सबसे पहले विचार किया जाना परमावश्यक है। हलके किस्म की जमीन पर इनका बहुत अच्छा असर होता है। अति शीघ्र घुलनशील खाद के तत्व चिकनी और कड़ी जमीन में से रिस-रिसकर नष्ट नहीं हो पाते हैं।

मिट्टी की रासायनिक जांच से यह बात स्पष्ट रूप से ज्ञात हो जाती है कि किस किस्म की जमीन में, कौन-कौन से भोज्य पदार्थ, कितनी प्रतिशत मात्रा में, मौजूद हैं। मटियार भूमि में पोटैश की कमी नहीं रहती है। बलुआर और जैव तत्व से भरी-पूरी जमीन में पोटैश की मात्रा कम ही होती है। जैव तत्वयुत जमीन में नोषजन की मात्रा अन्य तत्वों से कुछ अधिक ही होती है। ओषदीकरण की क्रिया तेजी से होती रहने और पानी का नितार बहुत ही अच्छा होने के कारण बलुआर जमीन में नोषजन की कमी बनी रहती है। दलहन की फसलें जमीन में नोषजन का संचय तो अवश्य ही बढ़ा देती हैं, किन्तु वे पोटैश और फासफेट को अधिक मात्रा में ग्रहण कर लेती है। आलू और जड़वाली फसलें भी पोटैश और फासफेट अधिक मात्रा में ग्रहण करती हैं। इनसे नोषजन की मात्रा नहीं बढ़ती है।

मिट्टी में जो तत्व आवश्यकता से अधिक मात्रा में रहते हैं, उनको खाद के रूप में देना व्यर्थ-सा ही है। उन तत्वों को ही खाद के रूप में दिया जाना आवश्यक है, जिनकी कमी या अभाव हो। वैज्ञानिकों का निश्चित मत है कि हरेक किस्म की फसल, प्रत्येक आवश्यक भोज्य पदार्थ एक निश्चित न्यूनतम मात्रा में रहने पर ही ग्रहण करती है। किसी एक तत्व की इस निश्चित न्यूनतम मात्रा में कमी होने पर फसल की उपज पर बुरा असर पड़ता है। मान लें कि किसी फसल को प्रति एकड़ ५० पौंड नोषजन, २० पौंड फासफरिक एसिड और ३० पौंड पोटैश की आवश्यकता है; इस मात्रा में इन तत्वों की पूर्ति करने की क्षमता मिट्टी में होने पर ही पूरी पैदावार हाथ लग सकती है। यदि मिट्टी इन तीनों तत्वों में से किसी एक तत्व की आधी मात्रा ही पूरी कर सकने में समर्थ है, तो शेष दो तत्वों के पर्याप्त

मात्रा में उपलब्ध रहने पर भी पैदावार आधी ही प्राप्त होती है। जिस तत्व की जितनी कमी है, उसकी पूर्ति के बिना, शेष दो तत्वों की मात्रा काफी बढ़ा देने पर भी पैदावार हरगिज नहीं बढ़ सकेगी। नोषजन और फासफरिक एसिड की कमी होने पर नोषजन या फासफरिक एसिड किसी एक के देने पर, उपज तो अवश्य ही बढ़ जाती है किन्तु पूरी पैदावार कदापि हाथ नहीं लग पाती है। पूरी पैदावार 'तो तभी मिल सकती है जब नोषजन और फासफरिक एसिड दोनों साथ-ही-साथ दिये जायं। दोनों प्रकार के उर्वरकों का सम्मिलित प्रभाव ही पैदावार में काफी वृद्धि कर सकता है।

भोज्य पदार्थो में से किसी एक तत्व का बाहुल्य हो जाने पर उसी परिस्थिति का निर्माण हो जाता है, जो उसकी कमी के कारण पैदा होती है। मिट्टी में नोषजन की मात्रा अधिक होने पर किसान उस खेत को 'जोरदार' कहते है। नोषजन की अधिकता से पौधों के शाखा-पत्तों की खूब बाढ़ होती है और दाना कम बैठता है। अन्य पदार्थों की पूर्ति करके इसे कुछ अंशों में रोका जा सकता है, फिर चाहे मिट्टी में इन पदार्थों की बिल्कुल ही कमी न हो।

गमलों में खेत की मिट्टी भरकर उसमें बो करके भी जांच की जा सकती है कि उस खेत की मिट्टी में किन तत्वों की कमी है। किन्तु इस तरीके से जांच करना सरल नहीं है। रसायनशाला में मिट्टी का विश्लेषण करके भी यह बात ज्ञात की जा सकती है कि मिट्टी में नोषजन, पोटैश और फासफरिक एसिड किस प्रतिशत में मौजूद हैं। रासायनिक विश्लेषण द्वारा मिट्टी की जांच का काम शीघ्रतापूर्वक पूरा किया जा सकता है। परन्तु इस जांच में खर्च ज्यादा बैठता है और दोनों तरीकों से की गई जांच से ही भोज्य पदार्थों की सही-सही प्रतिशत मात्रा ज्ञात हो सकती है।

खेत में से निकाली गई फसल का विश्लेषण करने से फसल की भोज्य पदार्थों की आवश्यकता की सही-सही जानकारी प्राप्त नहीं हो सकती है, जबतक कि अन्य सभी परिस्थितियों पर पूर्णतया विचार न कर लिया जाय; इसका कारण यह है कि पौधे अपने भोजन का एक बड़ा भाग सीधे खेत की मिट्टी में से ही प्राप्त करते हैं और इनके लिए उन्हें खाद पर बहुत

ही कम अवलंबित रहना पड़ता है। इसलिए पैदावार के विश्लेषण के आधार पर किसी अंतिम निर्णय पर पहुंचा ही नहीं जा सकता है। फिर भी, साधारण तौर पर यह कहा जा सकता है कि जिस किस्म की जमीन में उत्पादक तत्व अधिक मात्रा में विद्यमान होते हैं, उसे ही अधिक खाद की आवश्यकता होती है। जिस फसल में जो तत्व जितनी ही अधिक मात्रा में रहता है, उसे वह तत्व उतनी ही अधिक मात्रा में आवश्यक होता है और उस तत्व को उतनी मात्रा में दे देने पर पैदावार अवश्य ही ज्यादा आती है।

एक ही वर्ग की फसलें सभी दृष्टियों से लगभग समान ही होती हैं और इसी आधार पर फसलों का वर्गीकरण किया जा सकता है। ज्वार, गेहूं, बाजरा आदि नाज की फसलों और घास की फसलों में, समान मात्रा में नोषजन, पोटैश और फासफरिक एसिड रहता है। मटर, सेम तथा इन्हीं की जैसी अन्य फसलों में तीनों ही मुख्य भोज्य पदार्थ समान मात्रा में पाये जाते हैं। भिन्न-भिन्न देशों में किये गये प्रयोगों के आधार पर निम्नलिखित निश्चित परिणाम पर पहुंचा जा सकता है :

मक्का, ज्वार आदि घासवर्गीय फसलों को भोज्य पदार्थ कम मात्रा में आवश्यक होते हैं।

मूंग, उर्द, चना, मटर आदि दालवाली या दलहन फसलों में नोषजन और पोटैश अधिक मात्रा में मौजूद रहते हैं।

जड़वाली फसलों में उतना ही नोषजन रहता है, जितना दलहन फसलों में, किन्तु पोटैश की मात्रा बहुत ज्यादा होती है। आलू में नोषजन कम मात्रा में पाया जाता है किन्तु पोटैश अधिक मात्रा में रहता है।

सभी फसलों की भोज्य पदार्थ ग्रहण करने की क्षमता समान नहीं है। जो पौधे भोज्य पदार्थ अधिक मात्रा में ग्रहण करते हैं, वे खाद पर कम निर्भर रहते हैं। घास-वर्ग की फसलों की भोजन ग्रहण करने की क्षमता अत्यधिक होती है और जड़वाली फसलों तथा आलू की सबसे कम। घास-वर्ग की फसलों में सिलिका का अधिक परिमाण में प्राप्त होना इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि इन फसलों को सिलिका प्राप्य रहता है और अन्य फसलों को प्राप्य नहीं होता है। किसानों का अनुभव है कि जिन जमीनों

में जड़वाली फसलें बिना खाद दिये पैदा नहीं की जा सकती हैं, उनमें नाज आदि घासवर्गीय फसलें सफलतापूर्वक ली जा सकती हैं।

अन्य वर्ग की फसलों की अपेक्षा घास-वर्ग की फसलों को कम खाद की आवश्यकता होती है, कारण कि इन्हें जितनी भी मात्रा में उत्पादक तत्वों की आवश्यकता है, उन्हें वे सीधे मिट्टी से ही प्राप्त कर लेती हैं। मामूली दर्जे की उत्पादन-क्षमता रखनेवाली जमीनों को पिछली फसल निकाल लेने के बाद, गोबर-घूरे की खाद दे देने से नाज आदि घासवर्गीय फसलों की अच्छी पैदावार ली जा सकती है। थोड़ी मात्रा में नोषजनीय खाद दे देने से ही पैदावार में वृद्धि हो जाती है। नोषजनीय खाद का यह हितकारी प्रभाव इस कारण से होता है कि जीवन की प्रारंभिक अवस्था में ही इन फसलों के पौधों की बाढ़ तेजी से होती है। यदि गोबर-घूरे की खाद देकर जमीन की उत्पादन-क्षमता स्थिर रखने का प्रयत्न न किया गया हो, तो नोषजनीय खाद के साथ-ही-साथ फास्फेटयुत खाद भी अवश्य ही दी जानी चाहिए।

जड़वाली फसलों को बहुत ज्यादा खाद की आवश्यकता होती है, कारण इनकी भोज्य पदार्थ ग्रहण करने की क्षमता इतनी कम है कि नैसर्गिक रूप से सर्वाधिक उर्वरा भूमि में भी फसल से पूरी-पूरी पैदावार प्राप्त नहीं की जा सकती है, जबतक उसमें काफी खाद न दी जाय। और यह भी एक कारण है कि फसलों को बोने के क्रम में इन्हें प्रथम स्थान दिया गया है, ताकि ये फसलें जमीन की उत्पादन-शक्ति को बनाये रखने के हेतु दी गई गोबर-घूरे की खाद से प्राप्त होनेवाले भोज्य-पदार्थों से पूरा-पूरा लाभ प्राप्त कर सकें। इन फसलों को नोषजनीय या पोटैशयुत खाद देने की उतनी आवश्यकता नहीं है। सुपरफासफेट देना ही काफी है। जड़वाली फसलें मिट्टी में संचित ओषजन को ग्रहण करने की क्षमता रखती हैं; कारण कि इन फसलों की बाढ़ फसल के जीवन-काल के अंतिम भाग में ही ज्यादा गति से होती है और रासायनिक क्रियाओं द्वारा तैयार किया गया नोषजन उन्हें प्राप्त हो जाता है। जड़वाली वे फसलें, जिनकी जड़ें जमीन में अधिक गहराई तक प्रवेश करती हैं, सीधे मिट्टी में से ही फासफरिक एसिड ग्रहण करती हैं।

आलू को नोषजन और पोटैश देने की उतनी जरूरत नहीं पड़ती है। फिर भी, थोड़ा-सा पोटैश दे देने से पैदावार अवश्य ही कुछ ज्यादा आती है। गोबर-घूरे की खाद की पूरी मात्रा के साथ-साथ थोड़ा-सा पोटैशयुत उर्वरक दे देने से अच्छी पैदावार प्राप्त की जा सकती है। आलू में नोषजन की मात्रा कम ही होती है, और इसके लिए उसे पूर्ण रूप से खाद पर ही निर्भर रहना पड़ता है, कारण कि इस फसल के पौधों में सीधे मिट्टी में से नोषजन ग्रहण करने की क्षमता नहीं है। आवश्यकता से अधिक नोषजन मिल जाने पर इस फसल को लाभ के बदले हानि ही पहुँचती है—विशेषकर उस अवस्था में, जब प्राप्य पोटैश की मात्रा कम होती है। यदि काफी मात्रा में गोबर-घूरे की खाद दे दी जाय तो नोषजनयुत खाद देना व्यर्थ-सा ही है।

यदि नोषजन, फासफरिक एसिड और पोटैश के उर्वरक समुचित अनुपात में मिलाकर दिये जायँ, तो गोबर-घूरे की खाद दिये बिना भी आलू की अच्छी पैदावार प्राप्त की जा सकती है। किंतु जमीन की उत्पादन-क्षमता को उसके सामान्य-स्तर पर बनाये रखने के हेतु गोबर-घूरे की खाद देना आवश्यक ही है। जुताई करने से पहले खाद को खेत में फैलाकर तुरंत ही जुताई कर दी जानी चाहिए। किंतु गोबर-घूरे की खाद काफी मात्रा में नहीं मिलती है। इसलिए तीनों मुख्य भोज्य-पदार्थ-युत उर्वरकों को समुचित अनुपात में मिलाकर देने से फसल की आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है। आलू को तो अधिक मात्रा में पोटैश की जरूरत होती है।

दलहन की फसलों में, भोज्य-पदार्थों को ग्रहण करने की क्षमता, जड़वाली फसलों की क्षमता की अपेक्षा कुछ अधिक और नाज और घास की फसलों की अपेक्षा कुछ कम ही होती है। दलहन-फसलों को फासफेटिक और पोटैश-युत उर्वरकों की अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है। इनको गोबर-घूरे की खाद देने की उतनी आवश्यकता नहीं है। इनमें नोषजन अधिक मात्रा में रहता है, अतएव इस तत्व को खाद के रूप में देने की आवश्यकता ही नहीं है। किंतु इसका कारण दूसरा ही है। मिट्टी में आवश्यक जीवाणु विद्यमान होने पर दलहन की फसलें वातावरण में से नोषजन ग्रहण करके अपनी आवश्यकता की पूर्ति कर लेती हैं, और इस सीमा तक उन्हें नोषजन के लिए मिट्टी में के नोषजनीय यौगिकों पर निर्भर नहीं रहना पड़ता है। यदि

ज़मीन में नोषजन की कमी जान पड़े तो थोड़ी मात्रा में नोषजनयुत खाद दे देना लाभदायक ही है।

यही सिद्धांत बागवानी की फसलों पर भी लागू होता है। मटर, सेम आदि कुछ फसलों के सिवा, बागवानी की अन्य फसलें 'दाना' प्राप्त करने के लिए नहीं बोई जाती हैं। बागवानी की फसलें तो मुख्यतः फूल, फल और साग-सब्जी की ही फसलें हैं ,इन फसलों के बोने में फसल बोने के क्रम का भी ध्यान नहीं रखा जाता है। कभी-कभी एक ही खेत में लगातार कई वर्ष तक एक ही फसल बोई जाती है। बागवानी का क्षेत्रफल अन्य फसलों के क्षेत्र-फल की अपेक्षा कम ही होता है। बागवानी की जमीनें खूब अच्छी तरह से जोती जाती या हाथ से खोदकर तैयार की जाती हैं और इनमें खाद भी बहुत ज्यादा दी जाती है।

फसलों की पैदावार जल्दी-से-जल्दी प्राप्त करने के लिए जमीन को,जहाँ-तक संभव होता है, गरमी पहुंचानेवाली खादें ही दी जाती हैं। यदि ऐसा किया जा सका तो कुछ और करने की आवश्यकता ही नहीं रह जाती है।

माली लोग रासायनिक खाद या उर्वरक देना पसंद नहीं करते हैं। गोबर-घूरे की खाद के स्थान पर उर्वरकों का उपयोग करना वे हानिकारक समझते हैं। कई कारणों से बागवानी की जमीनों को जैव तत्व से भरी-पूरी रखना अनिवार्य है। उर्वरक जैव तत्व की मात्रा बढ़ाने का कार्य नहीं कर सकते हैं। इनको देने से तो उलटा ही असर पड़ता है। फिर भी यदि मिट्टी में गरमी बढ़ानेवाली खादों की कमी हो तो बहुत ही थोड़ी मात्रा में उर्वरक दिये जा सकते हैं। ऐसा करके खर्च भी कुछ कम किया जा सकता है।

उर्वरक की किस्म और उसकी मात्रा, जमीन की किस्म और उगाई जानेवाली फसल पर ही निर्भर करती है। यह तो एक सीमा तक जमीन में दिये गये गोबर-घूरे की खाद की मात्रा पर ही निर्भर करता है।

यदि जमीन में चूने का अंश पर्याप्त मात्रा में हो तो बागवानी की फसलों को गोबर-घूरे की खाद के साथ ही थोड़ी मात्रा में सुपरफासफेट देना हितकर ही है। प्रति वर्गफुट जमीन में अधिक-से-अधिक आधा पौंड सुपरफासफेट दिया जा सकता है। किंतु साधारणतः चार औंस ही दिया जाना चाहिए। गोबर-घूरे की खाद थोड़ी मात्रा में देने के बाद नोषजन-

युत उर्वरक और पोटैश के लवण देने से लाभ ही होता है। हरसोंठ देना लाभदायक नहीं है।

गाजर, चुकंदर, मूली और इसी वर्ग की अन्य फसलों को मुख्यतः फासफेट, अधिक मात्रा में पोटैश और थोड़े-से नोषजन की आवश्यकता होती है।

आलू, प्याज और इन्हीं के किस्म की दूसरी फसलों को, मुख्यतः, पोटैश की ही जरूरत होती है। मामूली मात्रा में फासफेट और थोड़ी मात्रा में नोषजन दिया जाना चाहिए।

गोबी, फूलगोभी, आदि को नोषजन के साथ-ही-साथ अधिक मात्रा में फासफेट दिया जाना चाहिए। थोड़ी मात्रा में पोटैश देना काफी होगा।

मटर, सेम, तरबूज, कद्दू, टमाटर आदि फसलों को नोषजन बहुत ही कम मात्रा में और पोटैश तथा फासफेट थोड़ी अधिक मात्रा में दिया जाना चाहिए। मटर-सेम की अपेक्षा कद्दू, ककड़ी, टमाटर आदि को नोषजन कुछ ज्यादा मिकदार में आवश्यक होता है।

खाद की मिकदार तो ज्यादातर जमीन की किस्म और उसके उपजाऊ-पन पर ही निर्भर करती है और किस किस्म की फसल को किस किस्म की खाद किस मात्रा में दी जानी चाहिए, इस संबंध में बागवान एकमत नहीं हैं। फल-झाड़ों को दिये जानेवाले खाद के संबंध में भी विशेषज्ञों में मतभेद है। कुछ विशेषज्ञों का मत है कि फल-झाड़ों को खाद देना व्यर्थ-सा ही है। कुछ अन्य सज्जनों का मत है कि फल-झाड़ों पर फल आना इसलिए बंद हो जाता है कि उनकी जड़ों के आस-पास की जमीन में उत्पादक तत्वों की कमी हो गई है और इसलिए हर साल फल बहार लेते रहने के लिए खाद देना परमा-वश्यक है। अधिकांश फल-झाड़ों को खाद देने से लाभ ही होता है। सामा-न्यतः, इतना कहा जा सकता है कि फल-झाड़ों को फासफेट और पोटैश ही दिये जाने चाहिए। नोषजन तो कम मात्रा में ही दिया जाना चाहिए। अधिक अवस्था के या पुराने झाड़ों को खाद की जितनी मात्रा दी जाती है, उतनी ही खाद की मात्रा नई उम्र के पौधों को हानि पहुँचाती है। अतएव, नई उम्र के पौधों को खाद की आधी मात्रा ही दी जानी चाहिए और उम्र बढ़ने के साथ-ही-साथ खाद की मात्रा में भी धीरे-धीरे वृद्धि की जानी चाहिए।

फूल-झाड़ों की आवश्यकता तो उनकी किस्म के अनुसार विभिन्न होती है। किंतु सामान्यतः इन्हें फल-झाड़ों को दी जानेवाली खाद ही दी जानी चाहिए। थोड़ी मात्रा में नोषजन, और पोटैश तथा फासफेट कुछ अधिक मात्रा में देना आवश्यक है।

खादों का वर्गीकरण

रासायनिक पद्धति से तैयार किये गये खाद को 'कृत्रिम खाद' या उर्वरक कहते हैं। पैदावार बढ़ाने के लिए ही इनका उपयोग किया जाता है। अन्य पदार्थ, जो खाद के काम में लिये जाते हैं, उन्हें 'साधारण खाद' कहते हैं।

खाद दो प्रकार की होती है—साधारण और विशेष। साधारण खाद में पौधे के मुख्य तीन भोज्य पदार्थ—नोषजन, फासफरिक एसिड और पोटैश मौजूद रहते हैं। ये कभी-कभी जमीन की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिए भी दिये जाते हैं। किंतु ये मुख्यतः जमीन की उर्वरा शक्ति को स्थिर रखने के लिए ही दिये जाते हैं। नैसर्गिक खाद के नाम से पहचाने जाने-वाले पदार्थ 'साधारण खाद' ही हैं। ये प्राणियों या वनस्पतियों से या इन दोनों के संयोग से तैयार किये जाते हैं। कुछ खादें खनिजों से भी प्राप्त होती हैं।

विशेष खाद या उर्वरक अपने-आप में परिपूर्ण नहीं होते हैं। इनमें एक या एक से अधिक तत्व अधिक मात्रा में विद्यमान रहते हैं। दो या दो से अधिक उर्वरकों को मिलाकर परिपूर्ण खाद का मिश्रण तैयार किया जाता है और तब यह मिश्रण 'साधारण खाद' का रूप ग्रहण कर लेता है। किसी एक या एक से अधिक भोज्य पदार्थों की पूर्ति करने के लिए ही उर्वरक दिये जाते हैं। जैव पदार्थों या खनिजों से भी 'उर्वरक खाद' तैयार किये जाते हैं। ये बाजार में तैयार मिलते हैं।

खादों का वर्गीकरण नीचे दिया गया है।

(अ) साधारण खाद या सजीव खाद

१. प्राणियों से मिलनेवाली खादें—नोषजनमय ग्वानो, मूत्र, सूएज, आदि।

२. वनस्पति से प्राप्त खादें—हरी खाद, हरे पत्तों की खाद, सूखे पत्ते, भूसा आदि पौधों के अवशेषों से बनाई गई खाद, खली, जलज वनस्पतियों की खाद, आदि ।

३. मिश्र खाद—(प्राणियों और वनस्पतियों से प्राप्त पदार्थों से बनी खाद)—गोबर-घूरे की खाद, खली, मल-मूत्र की खाद, आदि ।

(ब) *विशेष खाद या उर्वरक*

१. नोषजनयुत खाद—नोषजनवाले जैव पदार्थों से तैयार की गई खाद, अमोनिया के लवण, नत्रेत आदि ।

२. फासफेटयुत खाद—खनिज फासफेट, फासफेटयुत ग्वानो, अन्य फासफेटयुत खाद आदि ।

३. फासफेट-नोषजनवाली खाद—हड्डी, गोश्त का चूर्ण, मछली का ग्वानो आदि ।

४. पोटैशयुत खाद—पोटैशयुत खनिज पदार्थ, पोटैशियम के लवण, लकड़ी की राख आदि ।

५. अन्य खाद—खाने का नमक, सोडियम सिलिकेट, हरसोंठ (जिपसम) ।

६. मैगनेशियम के लवण, आयरन सलफेट आदि ।

: ४ :

साधारण या सजीव खाद

१—गोबर की खाद

जिसे गोबर की खाद कहा जाता है, वह वास्तव में एक मात्र गोबर की ही खाद नहीं है। इसमें कूड़ा-कचरा, राख, मकानों की झाड़न-बुहारन, निरुपयोगी पदार्थ, पशुओं के नीचे बिछाया गया भूसा, पयाल आदि मिले रहते हैं। कई कारणों से गोबर या घूरे की खाद अन्य सभी खादों से कुछ विशेषताएं रखती है। यह खाद खेती का धंधा करनेवाले किसानों के घरों में अपना धंधा करते हुए ही प्राप्त होती है। यह एक ऐसा साधन है, जिसके द्वारा खेत की मिट्टी में से फसलों द्वारा ग्रहण कर लिये गये भोज्य पदार्थ जमीन को वापस किये जा सकते हैं और अधिकांश किसान इसी रूप में वापस करते भी हैं। इस खाद के देने से जमीन की उर्वरा शक्ति उस के साधारण स्तर पर स्थिर रखी जा सकती है। किंतु उर्वरा शक्ति को इस साधारण स्तर से अधिक बढ़ाने की सामर्थ्य इस खाद में नहीं है। फसल-चक्र का अवलंबन करने से एक एकड़ जमीन में से जितने भोज्य पदार्थ जिस परिमाण में ग्रहण कर लिये जाते हैं, वे सब इस खाद में एकत्रित हो जाते हैं और यह खाद फसलों की आवश्यकता पूर्ति के लिए अधिक मात्रा में दी जा सकती है। इस खाद की उत्पादन शक्ति से भारतीय किसान भली प्रकार परिचित हैं : रासायनिक या कृत्रिम खाद का आविष्कार होने से पहले, किसी एक खेत की उत्पादन शक्ति बढ़ाने के लिए उसमें इस खाद को अधिक मात्रा में देने का परिणाम होता था दूसरे खेतों की उत्पादन शक्ति कम करना।

गोबर या घूरे की खाद के लिए काम में आनेवाले पदार्थ सदा बदलते

रहते हैं। गोबर या घूरे की खाद के गुण-धर्म, खाद के ढेर पर डाले जानेवाले पशुओं के मल-मूत्र की मात्रा, पशुओं की अवस्था, उनसे लिये जानेवाले श्रम, उनके भोजन में सम्मिलित पदार्थ, खाद के ढेर पर फेंके जानेवाले पदार्थ, खाद के ढेर में पदार्थों के सड़ने में होनेवाली प्रक्रियाएं, खाद बनाने की रीति आदि पर निर्भर करते हैं। इस खाद में बहुत बड़ा अंश गोबर का ही रहता है, इसलिए इसे 'गोबर की खाद' कहा जाता है।

गोबर—देश में गोबर या पशु-मल ही एक मात्र पदार्थ है, जिससे अधिक मात्रा में खाद बनाई जाती है। इसमें पशुओं द्वारा भोजन के रूप में ग्रहण किये गये पदार्थों का वह भाग, जो हजम नहीं किया जा सका है, मौजूद रहता है। जिस पशु का मल काम में लिया जाता है, उसके अनुरूप ही खाद का दर्जा होता है। घोड़े-गधे आदि कुछ पशुओं के मल में जल का अंश बहुत ही कम होता है, इसलिए वह बहुत ही जल्दी सड़ जाता है। भारत में भिन्न-भिन्न पशुओं का मल अलग-अलग नहीं रखा जाता है। गोबर, लीद, भेड़-बकरी की लेंडी या मेंगनी, सूअर का मल आदि सभी एक ही ढेर में डाले जाते हैं और यही कारण है कि खाद के गुण-धर्म इन पदार्थों के मिश्रण के अनुपात पर निर्भर करते हैं।

पशु-मल के गुण-धर्म अधिकांश में उसको खिलाये जानेवाले पदार्थों, पशुओं से लिये जानेवाले काम, पशु की अवस्था आदि पर ही अवलंबित रहते हैं। यह एक सर्वमान्य बात है कि जिन पशुओं को दाना, खली, आदि अधिक नोषजनीय पदार्थ खिलाये जाते हैं, उनका मल भी उसी अनुपात में, खाद की दृष्टि से, अधिक मूल्यवान होता है। कड़वी, भूसा, घास आदि सूखे निसत्व पदार्थ खानेवाले पशुओं का मल नीचे दर्जे का ही होता है।

पशु-मूत्र—पशु को खिलाये जानेवाले पदार्थों पर ही उनके मूत्र में पाये जानेवाले तत्वों के गुण-धर्म निर्भर करते हैं। भोज्य पदार्थों में का नोषजन और राख का बहुत ही थोड़ा अंश शरीर के पोषण में व्यय होता है और इनका अधिकांश भाग पेशाब के साथ शरीर से बाहर निकल आता है। कम उमर के पशु, जिनके शरीर की बाढ जारी होती है, दुधारू पशु, और श्रम करनेवाले पशुओं के शरीर में, भोज्य पदार्थों में के तत्वों का एक बड़ा अंश अंदर ही रह जाता है। दूध, ऊन, गोश्त आदि के रूप में,

मनुष्य आदि के उपयोग में आनेवाले पदार्थों के रूप में प्राप्त ये चीजें, खाद के तत्वों की दृष्टि से नष्ट ही हो जाती है।

विशेषज्ञों का अनुमान है कि भोजन में के नोषजनीय पदार्थो का ६० से ८० प्रतिशत तक भाग पेशाब के रूप में और २० से ३० प्रतिशत तक भाग मल के रूप में शरीर से बाहर फेंक दिया जाता है। शरीर से बाहर फेंके गये पदार्थो के साथ ७५ से ९० प्रतिशत नोषजनीय पदार्थ और ९० से ९८ प्रतिशत राख मल-मूत्र के रूप में प्राप्त हो जाते हैं। फासफरिक एसिड का अधिकांश भाग शरीर के निर्माण और पोषण में व्यय हो जाता है। पोटैश का कुछ भाग पसीने के साथ निकलकर नष्ट हो जाता है। भेड़ के बालों—ऊन में, पोटैश कुछ अधिक मात्रा में पाया जाता है। पोटैश का अधिकांश भाग पेशाब में घुलकर निकल जाता है। मल की अपेक्षा पेशाब ही खाद की दृष्टि से अधिक मूल्यवान है। पेशाब में पौधे के भोज्य पदार्थ घुलनशील अवस्था में रहते है और तुरंत ही जड़ों द्वारा ग्रहण कर लिये जाते हैं। मल में ये पदार्थ अघुलनशील अवस्था में रहते हैं और जैव पदार्थों के सड़ जाने के बाद ही जड़ों द्वारा ग्रहण किये जाने योग्य अवस्था को प्राप्त होते हैं।

पेशाब में का पानी का अंश पशु द्वारा पीये गये पानी और भोजन के साथ प्राप्त द्रव पदार्थों पर निर्भर करता है। पेशाब में जल का प्रतिशत परिमाण न्यूनाधिक ही होता है। पीये गये पानी व द्रव पदार्थों का कुछ अंश पसीने के रूप में नष्ट हो जाता है। गाय-भैस आदि की अपेक्षा घोड़े-भेड़ आदि की पेशाब कुछ अधिक गाढ़ी होती है। यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि पशु-मल के ही समान पशु-मूत्र में के वनस्पति-पोषक पदार्थों की प्रतिशत मात्रा उनके भोजन, अवस्था आदि पर निर्भर करती है।

मवेशी के भोजन में पाये जानेवाले नोषजन, फासफरिक एसिड, और पोटैश पर पाचन-क्रिया के कारण क्या असर पड़ता है, यह जान लेना भी आवश्यक है। पूर्ण बाढ़ को पहुंचे हुए पशु और मिहनत करनेवाले पशु का वजन बढ़ता नहीं है। इनके मल-मूत्र में वनस्पति-पोषक-तत्व पूरे-के-पूरे मौजूद रहते हैं। भोजन में का स्नेह (fat) और कार्बोज

(carbohydrates) गैस के रूप में बाहर निकल जाता है। भोजन में के प्रोटीन का कुछ अंश परिवर्तित नहीं होता है और मल के रूप में बाहर निकल आता है। भोजन का कुछ अंश खून में जा मिलता है और तब यूरिया (urea), यूरिक एसिड या मूत्राम्ल (uric acid) आदि के रूप में पेशाब में आ जाता है। पशु के मूत्र में के यूरिया, यूरिक एसिड, घुलनशील फासफेट, और पोटैश के लवण, पौधे की जड़ों द्वारा सोखे जाने योग्य अवस्था में ही होते हैं। किंतु पशुओं के मल में, घुलनशील अवस्था प्राप्त होने तक कई परिवर्तन होते हैं।

पशु के नीचे बिछाये गये पदार्थ—घास-भूसा, पयाल, छिलके आदि, मल के पतले अंश और मूत्र को सोख लेते है, जिससे वे नष्ट नहीं हो पाते हैं और खाद में जैव पदार्थ और नोषजन की मात्रा भी बढ़ जाती है। नाज की फसलों के भूसे में औसतमान से प्रतिशत ०·४ नोषजन, ०·२ फासफरिक एसिड और १·०० पोटैश रहता है। भूसा अपने वजन से तीन गुना तक पानी सोख सकता है। जुदी-जुदी किस्म की फसलों के भूसे आदि में पौधे के भोज्य पदार्थ भिन्न-भिन्न मात्रा में पाये जाते हैं और भूसा की पानी सोखने की शक्ति भी न्यूनाधिक होती है।

घास-फूस आदि—पशुओं को खिलाये जानेवाले चारा-चंदी, और बिछाने के लिए काम में लिये जानेवाले घास-भूसा, कचरा, छिलके, पयाल, पत्ते आदि, पेशाब व मल के द्रव अंश को सोखकर संग्रहीत रखने और सड़ने की क्रिया पर भी खाद का दर्जा निर्भर करता है।

भूसा—गेहूं आदि के भूसे में प्रतिशत ०·३ से ०·७ तक नोषजन, ०·१ से ०·२५ तक फासफरिक एसिड और ०·७५ से १·५ तक पोटैश रहता है। ज्यादातर घास, पयाल, और गेहूं का भूसा ही बिछावन के काम में लिया जाता है। जौ का भूसा कई कारणों से इस काम के लिए पसंद नहीं किया जाता है। मटर, अरहर, मूंग, चना आदि का भूसा तो पशुओं को ही खिलाया जाता है और अवश्य ही खिलाया भी जाना चाहिए। सूखे भूसे में प्रतिशत १५ तक नमी, ५ तक राख, और ८० तक जैव तत्व मौजूद रहते हैं। जैव तत्व में तंतुमय भाग, छिद्रोज की ही प्रधानता रहती है। अतएव यह जल्दी सड़ता नहीं है। किंतु यह अत्यधिक परिमाण में

द्रव पदार्थ सोख लेने की क्षमता रखता है। सूखे पत्तों में यह क्षमता उतनी नहीं होती है। मिट्टी इस काम के लिए उत्तम है; किंतु इसे हटाने और उसके स्थान पर नई मिट्टी लाकर डालने या गीली मिट्टी को सुखाकर फिर से काम में लाने में ज्यादा मिहनत करनी पड़ती है।

पशु के मल-मूत्र, भूसा आदि को संग्रहीत करके सड़ाने को ही 'खाद बनाना' या 'खाद तैयार करना' कहते हैं। जीवाणुओं द्वारा ही यह क्रिया संपन्न की जाती है। सड़न-क्रिया में खाद के ढेर के अन्दर कई प्रकार के रासायनिक परिवर्तन होते रहते हैं। जैव पदार्थों को सड़ानेवाले जीवाणु एक विशेष प्रकार के होते हैं। रासायनिक परिवर्तनों के कारण जैव पदार्थों में का २५ प्रतिशत भाग गैस का रूप धारण करके हवा में उड़ जाता है और ढेर में उष्णता बढ़ जाती है। सड़न-क्रिया की गति के अनुसार ही ढेर का तापमान न्यूनाधिक होता है। गति तेज हुई तो तापमान काफी बढ़ जाता है।

गोबर की खाद में गोबर, राख, भूसा, पेशाब आदि मिले रहते हैं। ताजे पशु-मल जैसे अनोषजनीय पदार्थों में, मुख्यतः, छिद्रोज और अन्य कार्बोजमय पदार्थ रहते हैं, जो वायु के मौजूद रहने पर ओषदीकरण की क्रिया द्वारा परिवर्तित होकर, अंत में, कर्बन-द्वि-ओषिद और जल का रूप ग्रहण कर लेते हैं। यदि ढेर में का ओषजन अतिशीघ्र काम में आ जाता है, तो यह परिवर्तन एक सीमा तक ही हो पाता है। वायु के अभाव में कर्बन-द्वि-ओषिद और जल के साथ-ही-साथ कुछ क्षार (acids) भी अस्तित्व में आ जाते हैं और तब जैव तत्व ही शेष रह जाता है। धीरे-धीरे घुलनशील यौगिकों का निर्माण हो जाता है, जिससे खाद के ढेर से टपका हुआ द्रव पदार्थ काले से भूरे रंग का दिखाई देने लगता है। इस परिवर्तन से उत्पादन-शक्ति बढ़ानेवाले तत्वों की हानि नहीं होती है, प्रत्युत सूखे पदार्थों का परिमाण घट जाता और शेष रहे खाद में उत्पादक तत्वों की मात्रा बढ़ जाती है।

खाद में के पदार्थों का कुछ भाग पशुओं के पैरों से कुचल जाता है। कीटाणु के कारण भी इनमें कुछ परिवर्तन होता है। दो समूह के कीटाणु इनपर क्रिया करते हैं। एक समूह भूसे में के तुलीन या छिद्रोज (Gellulose)

पर और दूसरे समूह के कीटाणु जैव-यौगिक या कार्बनिक यौगिक पर क्रिया करते हैं। वे नोषजन के यौगिकों पर जुट पड़ते हैं। नोषजनीय पदार्थों पर क्रिया करनेवाले कीटाणुओं में वे कीटाणु या शाकाणु अधिक महत्व के हैं, जो पेशाब में के यूरिया पर क्रिया करके "कार्बोनेट ऑफ अमोनिया" को जन्म देते हैं। यह पदार्थ गैस का रूप धारण करके वातावरण में मिल जाता है। यह क्रिया संपन्न करनेवाले कीटाणु हवा और धूल में रहते हैं, तथा पशुशाला--गोठे में ये ज्यादा पाये जाते हैं। यही कारण है कि पशुशाला में प्रवेश करने पर अकसर अमोनिया की गंध आने लगती है। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक है कि अमोनियम कार्बोनेट को उड़कर वातावरण में मिल जाने से रोका जाय, ताकि नोषजन नष्ट न होने पाये। खाद के ढेर का जितना भी अधिक भाग खुला रहेगा, और तापमान ऊंचा होगा, उसी मान से अमोनिया गैस के रूप में उड़ जायगा।

अमोनियम कार्बोनेट भी परिवर्तित होता है और भाप बनकर उड़ जाने के अलावा दूसरे रूप में भी नष्ट हो जाता है। खाद के ढेर में अन्य भी कई किस्म के कीटाणु या शाकाणु रहते हैं, जो अमोनिया को मुक्त नोषजनीय गैस (Free nitrogen gas) और पानी में बदलते हैं। इन्हीं कारणों से खुली जगह पर पड़े हुए खाद में का नोषजन बहुत बड़ी मात्रा में नष्ट हो जाता है।

कीटाणुओं या शाकाणुओं का एक समूह और है, जो ताजे गोबर में मिलता है। इनको सड़ानेवाले कीटाणु (Putrifective) कहते हैं, जो प्रोटीन को अमोनिया में बदलते हैं। इस समूह के कुछ जीव, शाकाहारी प्राणियों की बड़ी आंत में रहते है। गोबर के शरीर से बाहर फेंक दिये जाने पर भी ये कीटाणु उसके अन्दर अपना काम करते रहते हैं। ये गोबर में के भूसे में स्थित अघुलनशील नोषजनीय पदार्थों को अमोनिया जैसे घुलनशील पदार्थ के रूप में बदलते रहते हैं, ताकि पौधे उनको ग्रहण कर सकें। इस क्रिया के साथ-ही-साथ कीटाणुओं की वंश-वृद्धि भी होती रहती है और नोषजन के घुलनशील रूप को ग्रहण कर अपने शरीर में अघुलनशील प्रोटीन में बदलते रहते हैं। गोबर में के भूसे आदि सेंद्रिय पदार्थों को जैव तत्व में परिवर्तित करने की क्रिया भी जारी रहती है।

सेंद्रिय-पदार्थों को जैव तत्व का रूप ग्रहण कर लेने पर पहचान लेना असंभव ही है। इनके रूप-गुण ही पूर्णतया बदल जाते हैं।

वातावरण और धूल में कई किस्म के कीटाणु रहते हैं, जो भूसे आदि में के कर्बोज पर हमला करते हैं और ओषजन के मौजूद रहने पर तोड़-फोड़कर उसे कर्बन-द्वि-ओषिद, पानी और अजैव राख (Inorganic ash) में बदल देते हैं। किंतु ये अधिक समय तक काम नहीं कर पाते हैं, कारण कि ओषजन शीघ्र ही बाहर निकल जाता है। अतएव, ओषजन के अभाव में इन कीटाणुओं द्वारा अधूरा छोड़ा गया काम दूसरे कीटाणुओं को पूरा करना पड़ता है।

ताजे भूसा आदि पदार्थों पर एक प्रकार की सड़न-क्रिया प्रारंभ हो जाती है, जिससे उज्जन और कार्बन-द्वि-ओषिद बनते हैं। यदि खाद का ढेर ज्यादा सूखा होता है, और हवा उसके भीतर प्रवेश पा जाती है, तो केवल कार्बन-द्वि-ओषिद ही बनता है और इसकी मात्रा कम होने के कारण अमोनिया, गैस का रूप धारण करके, उड़ जाता है। खाद के ढेर को खूब दबा देने और उस पर पानी छिड़क देने से सड़न-क्रिया जल्द ही शुरू हो जाती है, जिससे कर्बन-द्वि-ओषिद की मात्रा काफी बढ़ जाती है एवं अमोनिया का उड़ना रुक जाता है।

गोबर-घूरे की खाद तैयार करने और उसमें के उपयोगी तत्वों को सुरक्षित बनाये रखने के कार्य में कीटाणु भिन्न-भिन्न रूप से सहायक होते हैं। खाद के ढेर में मौजूद आर्द्रता, वायु आदि पर ही यह बात निर्भर करती है कि किस समूह के कीटाणु अपना काम तेजी से करते हैं और किस समूह के कीटाणु सुस्त ही बने रहते हैं। सड़न-क्रिया करनेवाले कीटाणु (putrifactive bacteria) प्रोटीन को नोषजन के यौगिक में बदल कर अमोनिया को जन्म देते हैं। ओषदीकरण करनेवाले कीटाणु (Oxidisng or denitrifying bacteria) नोषजन को मुक्त करते हैं और साथ ही छिद्रोज को परिवर्तित करनेवाले और जैव तत्व का निर्माण करनेवाले कीटाणु, प्रोटीन या उसी के समान दूसरी चीजें तैयार करते रहते हैं।

बहुत ही पोले और सूखे हुए खाद के ढेर पर गोमज (फंगस) पनपने लगते हैं, जिससे वह सफेद धूल-सी दिखाई देती है। ऐसी खाद

बेकार-सी ही होती है। इसे खेत में डालने से फसल को कुछ भी लाभ नहीं पहुंचता है।

खाद की कितनी ही हिफाजत क्यों न की जाय, पशुओं को खुराक के रूप मे दिये गये नोषजन का प्रतिशत १३ खाद तैयार करते समय ही नष्ट हो जाता है और लगभग ६ प्रतिशत नोपजन पशु के शरीर की वृद्धि में खप जाता है। सभी तरह से परिस्थिति अनुकूल होने पर तो यह क्षति प्रतिशत ४० तक पहुँच जाती है।

गोबर-घूरे की एक टन (२८ मन) खाद में १५ पौंड नोषजन, ५ पौंड फासफरिक एसिड और ७ पौंड पोटैश रहता है। भिन्न-भिन्न ढेरों में की खाद में यह मात्रा न्यूनाधिक होती है। जिन मवेशियों को खली खिलाई जाती है, उनके मल-मूत्र की खाद ज्यादा कीमती होती है और पैदावार भी सवाई के लगभग आती है।

खाद जितनी ही पुरानी होती है, उसमें पौधे के भोज्य पदार्थ उतनी ही ज्यादा मात्रा मे मौजूद रहते है। खाद के सड़ने के दिनों में बहुत-सा नोपजन नष्ट हो जाता है और अनोषजनीय सेंद्रिय पदार्थों की मात्रा भी बहुत ही कम हो जाती है, जिससे खाद में नोपजन, फासफरिक एसिड और पोटैश बहुत अधिक मात्रा मे मौजूद रहते है। ज्यों-ज्यों खाद घटता जाता है, अमोनियम कार्बोनिट-जैसे पदार्थ कम होते जाते हैं, कारण कि वे धीरे-धीरे प्रोटीन-जैसे अघुलनशील पदार्थों में परिवर्तित होकर कीटाणुओं के शरीर का निर्माण करते रहते है। ये कीटाणु समय पाकर मर जाते है और सड़कर खाद में मिल जाते है, और तब फिर से घुलनशील नोषजनीय यौगिक अस्तित्व में आ जाते हैं। ज्यों-ज्यों खाद अधिकाधिक पुरानी होती जाती है, ज्यों-त्यों उसमें के अमोनिया और उसी प्रकार के दूसरे पदार्थो की मात्रा घटती जाती है।

खाद में के प्रमुख तत्वों का एक बड़ा अंश द्रव रूप में ही रहता है। इसलिए खाद के पतले अंश को बचाये रखने की पूरी-पूरी कोशिश की जानी चाहिए। सार या गोठे का फर्श ऐसा बनाया जाना चाहिए कि पतली खाद नष्ट न होने पाये। फर्श पर महीन सूखी मिट्टी बिछा देना ज्यादा फायदेमंद है। आसपास की जमीन से गोठे या सार का फर्श कुछ नीचा ही रखा जाना

चाहिए, ताकि पेशाब बहकर न निकल जाय। पशुशाला में वर्षा का पानी भी नहीं गिरने दिया जाना चाहिए। पशुओं के नीचे बिछाली भी अवश्य ही बिछाई जानी चाहिए ।

गोबर की खाद का फसल पर प्रभाव—भारत के अधिकांश राज्यों में एक मात्र गोबर-घूरे की खाद ही काम में ली जाती है। इसलिए इस खाद को बहुत ज्यादा हिफाजत से रखना बहुत ही जरूरी है। इसमें पौधे के सभी भोज्य पदार्थ उचित अनुपात में मौजूद रहते हैं। इस खाद का असर कई साल तक बना रहता है, जिससे जमीन ताकतवर बनी रहती, फसल तंदुरुस्त बनी रहती और पैदावार भी ज्यादा आती है। गोबर की खाद देने के लिए किया गया खर्च जल्द वसूल नही होता है, कारण कि यह खाद धीरे-धीरे गलती और कई सालों तक फसल को फायदा पहुंचाती रहती है। मिट्टी में काफी नोषजन होने पर भी फसल अपनी नोपजन की आवश्यकता की पूर्ति नहीं कर पाती है। इसलिए यदि इसमें कृत्रिम या रासायनिक खाद मिला दी जाया करे, तो पैदावार अच्छी आती है।

यदि खूब अच्छी तरह से गलाई गई खाद काम में नही ली गई, तो खेतों में खर-पतवार बढ़ जाता है और कुछ किस्म के गोमज (फंगस) भी फैल जाते तथा दीमक लग जाती है। इस खाद से फसल को नोषजन तो मिलता ही है, साथ ही सभी किस्म की जमीन का पोत सुधर जाता है और मिट्टी की पानी सोखकर सुरक्षित रखने की क्षमता भी बढ़ जाती है। इस खाद से रेतीली जमीन के बालू के कण एक दूसरे से चिपक जाने की शक्ति पाते हैं, जिससे धीरे-धीरे बलुआर जमीन में पानी सोखने और उसे सुरक्षित रखने का गुण आ जाता है और जैव तत्व की मात्रा बढ़ जाने से जमीन ज्यादा उपजाऊ हो जाती है। गोबर-घूरे की खाद दिये गये खेत में बोई गई फसल पर वर्षा या पानी की कमी का कम असर पड़ता है, कारण कि गोबर की खाद मिली हुई मिट्टी, वर्षा के पानी को बहुत ज्यादा मात्रा में सोख लेती और एक लंबी अवधि तक धारण किये रहती है। इन जमीनों में पानी बहुत ही धीमी गति से नीचे की सतह की ओर उतरता है, जिससे वह एक लंबे समय तक पौधों की जड़ों की पहुंच के बाहर हो नहीं पाता है। कहा जाता है कि गोबर-घूरे की खाद देने से पानी का ऊपर की सतह की

ओर का खिंचाव (surface tension) कम हो जाता है, जिससे झांखरा जड़वाली फसलों को जरूरत के लायक पानी नहीं मिल पाता है। किंतु अभी तक यह बात निश्चित नहीं हो पायी है।

अकसर यह सवाल उठाया जाता है कि एक मन खाद कितने रुपये में पड़ती है ? किंतु यह सवाल उठाना ही व्यर्थ है। गोबर-घूरे की खाद खेती के धंधे की गौण उपज है। खेती के काम के लिए बैल-भैंसे, ऊँट आदि पाले जाते हैं। किसान और घी-दूध का धंधा करनेवाले गाय-भैंस, बकरियाँ आदि पालते हैं। ऊन के लिए भेंड़ें पाली जाती हैं और अण्डे आदि का व्यवसाय करनेवाले मुर्गी-मुर्गे, बत्तख आदि पालते है। इन व्यवसायियों को पशु-पक्षियों का मल-मूत्र, किसी प्रकार का विशेष व्यय किये बिना ही प्राप्त होता है। इनसे खाद बनाकर, बेचकर या खेतों में डालकर मुनाफा कमाया जा सकता है। पशु-पक्षियों की संतानें बेचकर कुछ-न-कुछ कमा ही लिया जाता है। किसान या धंधा करनेवाले को तो घास-कचरा तथा मल-मूत्र से खाद तैयार करने के लिए मिहनत ही करनी पड़ती है। इसलिए कार्य-कुशलता या परिश्रम द्वारा इन पदार्थों से जितना फायदा कमाया जा सके, उतना कमा लेना ही समझदारी का काम है और इसी वजह से इस खाद के सस्ते या महंगे पड़ने का सवाल उठाने की जरूरत ही नहीं है। किसान यदि खरीदकर इस खाद को काम में लाता हो, तभी कीमत पर विचार किया जाना उचित है। इसके अलावा प्रति पौंड नोषजन के आधार पर भी इसकी कीमत नहीं आंकी जानी चाहिए, कारण कि इस खाद से जमीन का पोत सुधरता और मिट्टी में जैव तत्व का संग्रह बढ़ता है। इसलिए कीमत पर विचार करते समय इन दो प्रकार के लाभों को ध्यान में रखना कदापि नहीं भूलना चाहिए।

अकसर गोबर-घूरे की खाद की उर्वरक से तुलना की जाती है। इस खाद का महत्व तो इसके द्वारा मिट्टी पर होनेवाले भौतिक प्रभाव और इसमें पाये जानेवाले वनस्पति-पोषक-पदार्थों के परिमाण पर ही निर्भर करता है। इस खाद से मिट्टी का पोत सुधरता है तथा काली-चिकनी मिट्टी भुरभुरी हो जाती है और बलुआर तथा कनिष्ठ दरजे की जमीन की पानी सोखकर सुरक्षित रखने की क्षमता बढ़ती है। अतएव इस खाद

का बहिष्कार करना संभव ही नहीं है। इस खाद की कमी हो तो हरी खाद दी जानी, और आवश्यक भोज्य पदार्थों की पूर्ति के हेतु उर्वरक से सहायता ली जानी चाहिए।

यह एक साधारण खाद है। सौ टन खाद देने से फसल को १०० पौंड नोषजन, १०० पौंड पोटैश और ६० पौड फासफरिक एसिड प्राप्त हो जाता है। यही भोज्य पदार्थ उर्वरक के रूप में दिये जायं तो, ९ हंडरवेट नाइट्रेट ऑफ सोडा, ८ हंडरवेट केनाइट और पांच हंडरवेट सुपरफासफेट खेत में डालना पड़ेगा।

गोबर-घूरे की खाद अधिक परिमाण में देने पर भी फसल को किसी प्रकार की हानि नही पहुंचती है और भोज्य पदार्थों के नष्ट हो जाने की भी उतनी संभावना नहीं रहती है। इस खाद में नोषजन एक से अधिक रूपों में मौजूद रहता है। घुलनशील भाग तुरंत ही जड़ों द्वारा ग्रहण कर लिया जाता है। खाद में के भोज्य पदार्थों का एक बडा भाग धीरे-धीरे घुलनशील अवस्था को प्राप्त होता रहता है। यही कारण है कि यह खाद एक लंबी अवधि तक फसल को लाभ पहुँचाती रहती है।

गोठे से हटाते समय ताजे मल-मूत्र में पानी का अंश बहुत ही अधिक होता है। सड़न-क्रिया द्वारा भी कुछ पानी बनता है और इस जल को सोख-कर सुरक्षित रखनेवाले जैव तत्व की मात्रा कम हो जाती है। इसके अलावा खाद का ढेर खुला पड़ा रहता है और वर्षा का पानी इसमें भरता रहता है। यह पानी धीरे-धीरे नीचे उतर जाता है और यदि इस पानी को बह जाने दिया गया तो, उसमें घुले हुए अमूल्य पोषक-तत्व या तुरंत लाभ पहुँचाने-वाले खाद के तत्व, नष्ट हो जाते हैं। अतएव खाद का ढेर ढलुवां जमीन पर कदापि नही लगाया जाना चाहिए। मतलब यह कि खाद का ढेर ऐसे स्थान पर कदापि नहीं लगाया जाना चाहिए कि ऐसा पानी, जिसमें खाद के तत्व घुले रहते हैं, बहकर बाहर चला जाय।

वनस्पति-पोषक तत्वों के भाप बनकर उड़ जाने से भी क्षति उठानी पड़ती है। अतएव, ढेर या गढ़े में के खाद को खूब दबा देना चाहिए। इस संबंध में आगे चलकर कुछ विस्तारपूर्वक लिखा गया है।

हाथी, घोड़ा, ऊंट, गधा, खच्चर आदि की विष्ठा की अपेक्षा गोबर-

घूरे की खाद अधिक लाभदायक होती है। गोबर न पतला ही होता है और न एकदम गाढ़ा ही। यह धूप से जल्दी सूखता भी नहीं है। पूर्ण बाढ़ को पहुंचे हुए प्राणी अपने भोजन का एक बड़ा भाग पचा ही नहीं पाते हैं। भोजन का यही बिना पचा हुआ अंश मल-मूत्र के साथ बाहर निकल आता है। कम अवस्था के पशु का शरीर कद में बढ़ता है और वह मोटा भी होता है। दुधारू पशु और मिहनत करनेवाले पशु अपने शरीर की छीज के लिए भोजन का एक बड़ा भाग हजम कर लेते हैं। यही कारण है कि इनके मल-मूत्र में वनस्पति-पोषक-तत्व बहुत कम मात्रा में पाये जाते है।

बिनौला, खली, चूनी आदि पौष्टिक भोजन पानेवाले पशुओं के मल-मूत्र की खाद, सूखा घास-कड़वी, हरा चारा आदि खानेवाले पशुओं के मल-मूत्र की खाद की अपेक्षा अधिक मूल्यवान होती है। जुदी-जुदी किस्म की खुराक खानेवाले पशुओं के मल-मूत्र से बनाई एक टन खाद का मूल्य नीचे दिया गया है :—

नाम खूराक	*कीमत प्रति टन (रुपयों में)*
छिलके निकाले हुए बिनौले	९५
सरसों की खली	७५
बिनौले छिलके सहित	६०
गुवार, उर्द आदि	५५
अलसी	५०
मक्का	२२
गेहूं का दलिया	४०
जौ	२५
गाजर	३

वर्षा और शीतकाल में मवेशी गोठों में बांधे जाते हैं और गरमी के दिनों में बाड़ों या खलों में। गरमी और ठंड के मौसम में दिन को बैल बाड़ों, खलों या खेत में बांधे जाते हैं। मवेशी को खुली जगह में बांधने से मल-मूत्र में के वनस्पति-पोषक तत्व हवा में उड़कर नष्ट हो जाते हैं। ज्यादातर

बरसात के दिनों का गोबर ही खाद के काम में लिया जाता है। दूसरे मौसम में गोबर से उपले या गोईठे बनाये जाते हैं। देश के अधिकाश प्रदेशों में ईंधन का अकाल-सा ही है। जबतक ईंधन के लिए जलाऊ लकड़ी मिल जाने का समुचित प्रबंध नहीं हो जाता है, उपले बनाना बंद होना संभव नहीं है। बनसटी, सनेटी, तिलौंजा, तूर-सांठी, ज्वार आदि के डंठल आदि से सालभर तक ईंधन का काम चला लेना भी संभव नहीं है, कारण कि किसान इनसे मकान-झोंपड़ों के छप्पर आदि बनाते हैं और गन्ने की खोई रस पकाने के काम में ली जाती है।

पशुशाला में खाद बनाना

प्रथम प्रणाली—हरेक किसान अपने मवेशी एक विशेष और निश्चित स्थान पर ही बांधता है। जिस जगह हमेशा मवेशी बांधे जाते हैं, उस जगह की जमीन को करीब एक हाथ गहरी खोदकर मिट्टी ढीली कर दी जाय और तब उसे एक-सा फैला दिया जाय। यदि यह मिट्टी, गीला मल और पेशाब सोखे हुए हो, तो इसे हटाकर खेत या खाद के गढ़े में डाल देना चाहिए। आसपास की जमीन से गोठे का फर्श लगभग एक बालिश्त नीचा होना जरूरी है। मालदार किसान इस फर्श को चूना-कंकरीट या ईंट से पक्का भी बनवा सकते हैं, दूसरे लोग कड़ा मुरुम-रेती बिछाकर दुर्मट से पिटवाकर पक्का करवा सकते हैं, जिससे पेशाब जमीन के अंदर प्रवेश न पा सके। इस फर्श पर सूखे पत्ते, भूसा, बेकार घास, मूंगफली के छिलके, तिलौंजा-सनेटी आदि के छोटे-छोटे टुकड़े फैला दिये जायं। ये मवेशी के बिछौने का काम देंगे और पतले गोबर व पेशाब को भी सोख लेंगे। मवेशी को गोठे से बाहर निकाल लेने के बाद गोबर व घास आदि को फर्श पर चारों ओर फैला-कर उस पर राख, घास-भूसा, छिलके आदि फैला दिये जायं। मवेशी के पैरों से गढे हो जायं तो उन्हें सूखी मिट्टी, राख आदि डालकर भर दिया जाय। इस प्रकार आवश्यकतानुसार प्रतिदिन या दूसरे-तीसरे दिन किया जाता रहे। आसपास की जमीन के बराबर तक भर जाने पर खाद को हटाकर खेत में पहुंचा दिया जाय। मवेशी के उठने-बैठने और पैरों से कुचला जाने के कारण भूसा-कचरा आदि का हो जाता है और लगभग तीन

मास में उत्तम खाद तैयार हो जाती है। इस खाद में के वनस्पति-पोषक-तत्वों का नुकसान नहीं हो पाता है। खाद तैयार करने की इस रीति को 'बॉक्स-सिस्टम' (गोठा-पद्धति) कहते हैं। इस प्रकार तैयार की गई खाद बहुत ही लाभकारी और उत्तम होती है।

गोबर-कचरा आदि गोठे के फर्श पर फैला देने के बाद प्रतिदिन बिछावन फैलाते रहना आवश्यक है। पशुओं के पैरों से दबकर सब पदार्थ वहीं पड़े रह कर सड़ते रहेंगे। इसे खोदकर ढीला-पोला कदापि नहीं करना चाहिए। इस रीति का अवलंबन करने से प्रतिशत १३ से २० तक नोषजन उड़ जाता है। ढेर में रखे गये खाद में यह हानि प्रतिशत ४० से ५० तक पहुंच जाती है।

द्वितीय प्रणाली—पशुशाला के फर्श की मिट्टी लगभग साढ़े तीन फुट की गहराई तक खोदकर ढीली-पोली करके हटा दी जाय। गढ़े की तली को पानी से तर करके पीटकर कड़ा कर दिया जाय। इसपर तब सूखी मिट्टी और राख का ६ इंच मोटा पर्त दे दिया जाय। इसपर घास-फूस, छिलका आदि बिछा दिये जायं। इसी पर मवेशी को बांधा जाय। दूसरे रोज सवेरे मवेशी को हटाकर गोबर को चारों ओर फैलाकर उस पर घास-फूस, छिलके आदि का दो इंच मोटा पर्त दे दिया जाय। जमीन की सतह के बराबर भरा जाने तक प्रतिदिन इसी प्रकार किया जाता रहे। बरसात से पहले ऊपर का ६ इंच का पर्त हटाकर खाद के गढ़े या ढेर में डाल दिया जाय और इससे नीचे की खाद खेत में पहुंचा दी जाय। बरसात के चार महीनों में भी ऐसा ही किया जाता रहे। मवेशी के पैरों से गढ़े हो जायं, तो उन्हें सूखी मिट्टी, राख आदि से भर दिया जाय। घर में से निकलने-वाले कूड़ा-कचरा, तरकारी के छिलके, पत्ते, सड़ी-बासी साग, राख आदि सभी बेकार चीजें भी इसी पर फैला दी जाती रहें। इस तरीके को काम में लाने से एक जोड़ी बैल से लगभग २५० मन खाद मिल सकती है।

कानपुर के कृषि-विद्यालय के प्रिंसिपल महोदय का कहना है कि जहांतक हो सके मवेशियों को रात के वक्त भी खेतों में ही बांधना चाहिए। किंतु उन प्रांतों में जहां चोरों का आतंक छाया रहता है, ऐसा करना चोरों के हाथ में खजाने की चाबी देने के समान ही है। अकसर देखा गया है कि दिन

के वक्त भी बैल-नारे आदि को खेत में बांधा नहीं जाता है । ऐसा करना हानिकारक है । बैल-नारे आदि को दिन में खेत में ही बांधा जाय और आठ-दस दिन बाद जगह बदल दी जाया करे ।

गढ़े में खाद बनाना—हर किसान किसी नियत जगह पर ही खाद डालता है । किन्तु खाद के ढेर खुले रखे जाते हैं और खाद गढ़े में नहीं डाली जाती है । गढ़े में खाद बनाना ही लाभदायक है ।

बारह महीने या छः महीने का गोबर-कचरा आदि आ सके इतनी लंबाई-चौड़ाई और गहराई के तीन गढ़े खोदे जायं । गढ़े की दीवारें गोबर से लीप दी जायं । चूने का प्लास्टर कर दिया जाय, तो और भी अच्छा है । एक गढ़े में गोबर, राख, सड़ी-गली तरकारी, कचरा-कूड़ा, घास-पात आदि सभी निरुपयोगी पदार्थ प्रतिदिन डाले जाते रहें । इन पदार्थों पर बीच-बीच में पानी, पेशाब, या मोरी-पनारे का गंदा पानी भी छिड़कते रहना चाहिए । खाद का गढ़ा जलाशय के पास बनाया जाय तो और भी अच्छा है । ऐसा करने से पानी छिड़कने में ज्यादा आसानी रहती है और परिश्रम व व्यय भी कम पड़ता है । गढ़ा पूरा भर जाने पर सूखी मिट्टी और राख की चार इंच मोटी तह डालकर गढ़े का मुंह बंद कर दिया जाय । एक गढ़ा भर जाने पर दूसरा गढ़ा भरना शुरू किया जाय, दूसरे के बाद तीसरा । तीसरे गढ़े में गोबर आदि डालना शुरू करने पर पहले गढ़े का खाद निकालकर काम में लिया जाय । इस क्रम से प्रति छठे या बारहवें मास उत्तम प्रकार की खाद मिलती रहेगी । गढ़े में डाले गये पदार्थों पर काफी पानी नहीं छिड़का जायगा तो घास-फूस, छिलके आदि ठीक तरह से सड़ने नहीं पायंगे । छह मास तक गढ़े का मुंह बंद रखने के बाद हर दूसरे माह खूब पानी छिड़ककर खाद की उलट-पुलट भी करते रहना चाहिए । काफी तरी मिल जाने से खाद ठीक तरह से सड़ जायगी ।

गढ़ों के चारों ओर लगभग तीन फुट ऊंची दीवार बना दी जानी चाहिए, जिससे वर्षा का पानी भीतर न जा सके । गढ़े पर छाया भी कर देनी चाहिए । ऐसा न करने से खाद में के उपयोगी तत्व वर्षा के पानी में घुलकर जमीन के अन्दर उतरकर जड़ों की पहुंच के बाहर चले जायंगे या भाप बनकर हवा में उड़ जायंगे, जिससे खाद निस्सत्व हो जायगी ।

तीसरी प्रणाली—पशुओं की संख्या के अनुसार आवश्यक लंबा-चौड़ा और गहरा गढ़ा बना लिया जाय। एक जोड़ी बैल के लिए दस फुट लंबा, दस फुट चौड़ा और तीन फुट गहरा गढ़ा काफी है। इस गढ़े में घास-पात, पशुशाला का गोबर-कचरा आदि निरर्थक समझे जानेवाले सभी पदार्थ डाले जा सकते हैं। गढे की तली में डेढ़ फुट तह कूड़ा-कचरा आदि की दी जाय। इसको पानी से खूब तर-ब-तर करके दूसरी तह दी जाय। इसको भी पानी से तर-ब-तर करके तीसरी तह दी जाय। गढ़ा भर जाने तक तह-पर-तह दी जाती रहे। गढा भर जाने पर सभी पदार्थों को पांवों से अच्छी तरह से कुचलकर खूब दवा दिया जाय और तब सूखी मिट्टी की चार इंच मोटी तहों से गढ़े का मुह बंद कर दिया जाय। करीब छह महीनें में खाद सड़कर तैयार हो जायगी।

पहले लिखा जा चुका है कि खाद का ढेर पोला होने से उसमें ज्यादा हवा प्रवेश कर जाती है, जिससे खाद सूख जाता, पदार्थ पूरी तरह सड़ नहीं पाते और उपयोगी तत्व हवा में उड़ जाते है। इसलिए यह आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है कि खाद को खूब दबा दिया जाय। ऐसा करने से हवा की मात्रा कम हो जायगी और तापमान भी घट जायगा। खेत में डालने का समय आने तक खाद को इसी अवस्था में पड़े रहने देना चाहिए। यदि इसे उलट-पुलट किया जायगा, तो नोषजन की हानि होगी।

अमोनिया का गैस रूप में उड़ जाना रोकने के लिए खाद के ढेर में भिन्न-भिन्न पदार्थ मिलाकर प्रयोग किये गये हैं। भारत के किसानों के लिए इनका अनुकरण करना वर्तमान अवस्था में संभव नहीं है और न हितकर ही है। विदेशों में जिपसम (हरसोंठ), सलफेट ऑफ मैगनेशिया, सलफेट ऑफ आयरन, सोडियम-बाय-सलफेट, सुपरफासफेट आदि मिलाकर जांच-पड़ताल की गई है। भारत में सुपरफासफेट मिलाया जा सकता है। इस देश की मिट्टी में फासफरिक एसिड की कमी है। गोवर-घूरे की खाद में सुपर-फासफेट मिलाकर इस कमी की पूर्ति की जा सकती है। इस खाद में मिलाया गया सुपरफासफेट एक ऐसी अवस्था में आ जाता है, जिसके कारण वह मिट्टी में पूर्ण-रूपेण एक जीव होता नहीं है। धीरे-धीरे यह यौगिक घुलनशील अवस्था में आ जाता है और तब जड़ों द्वारा शीघ्रता

से ग्रहण कर लिया जाता है। भारतीय किसानों के लिए तो खेत की मिट्टी मिलाना ही हितकर है। गोठे में मिट्टी बिछाने में मिहनत ही पड़ती है, खर्च तो नाममात्र ही बैठता है। मिट्टी मिलाने से खाद के ढेर में के पदार्थों के सड़ने की क्रिया में रुकावट नहीं पड़ती है और न किसी प्रकार की हानि ही होती है। मिट्टी मिला देने से अमोनिया के गैस रूप में उड़ जाने के मार्ग में भी काफी रुकावट पड़ती है।

भारत के अधिकांश प्रदेशों में ऊपर दी गई रीति से गहरे गढ़ों में खाद बनाने का रिवाज ही नहीं है। गांव के आसपास, घरों के नजदीक, समतल जमीन पर ही खाद के ढेर लगा दिये जाते हैं। इस रीति से बनाई गई खाद बेकार-सी ही होती है; कारण कि वर्षा के पानी और धूप से खाद में के उपयोगी तत्व घुलकर नष्ट हो जाते हैं। इस क्षति से बचने के लिए खाद का ढेर लगाने के लिए पहले एक छिछला गढ़ा खोद लिया जाना चाहिए। यह गढ़ा कम गहरा और चाय पीने की 'बशी' के आकार का हो। इसकी तली ईंट-चूने से पक्की बनवा दी जानी चाहिए, ताकि खाद का द्रव अंश जमीन के अंदर प्रवेश न कर सके। गढ़े की दीवारें इस ढंग से बनाई जानी चाहिए कि खाद में का सब पानी रिस-रिसकर गढ़े की तली में भरता रहे। तली में का यह पानी तब पक्की नाली द्वारा एक पक्के हौज में एकत्रित कर लिया जाय। इस गढ़े में भरा हुआ पानी समय-समय पर खाद के ढेर पर छिड़का जाता रहे। गढ़े के चारों ओर एक इतनी ऊंची पाल-सी बना दी जाय कि बाहर का पानी बहकर गढ़े में न भरने पाये। गढ़े की तली में लगभग एक फुट मोटी तह मिट्टी की दे दी जाय और तब इस पर गोबर-कचरा आदि डालना शुरू किया जाय। गढ़े में डाले जानेवाले पदार्थ इस रीति से डाले जायं कि ढेर का बीच का भाग काफी ऊंचा उठा हुआ और चारों ओर ढलवां रहे। घास-फूस का छप्पर डालकर ढेर पर छाया भी अवश्य ही कर दी जानी चाहिए ताकि बरसात का पानी खाद के ढेर में प्रवेश न कर सके। ऐसा करने से गरमी के मौसम में भी खाद में के तत्व भाप बनकर उड़ नहीं पायंगे। यदि गढ़े की तली ईंट-चूने से पक्की बनाना संभव न हो तो, पत्थर-कंकर-रेत, ईंटों के टुकड़े आदि भरकर खूब पीटकर इतना पक्का बना दिया जाय कि पानी जमीन में उतरने न पाये। रिस-रिसकर

पानी के जमीन में गहरा उतर जाने या बहकर बाहर निकल जाने से केवल नोषजन ही नहीं अन्य घुलनशील भोज्य-पदार्थ भी नष्ट हो जाते हैं।

उपले या गोईंठे बनाने से हानि—उपले बनाने से पेशाब-जैसे कीमती खाद से कुछ भी लाभ नहीं उठाया जा सकता है। जलाने से गोबर में के लाभदायक पदार्थ नष्ट हो जाते हैं। राख बहुत ही कम मात्रा में खाद के काम में ली जाती है। राख खाद के ढेर या खेत में डाली जाती है, जो हवा से उड़ जाती या वर्षा के जल से घुलकर बह जाती है।

पचास मन उपले या कंडे जलाने पर करीब डेढ़ गाड़ी राख मिलती है। पचहत्तर मन गीले गोबर से लगभग पचास मन सूखे उपले बनते हैं और इतने ही गोबर से लगभग छह गाड़ी उत्तम प्रकार की खाद तैयार की जा सकती है। डेढ़ गाड़ी राख की खाद देने से जितनी पैदावार आती है, उससे लगभग चार गुनी अधिक पैदावार छह गाड़ी गोबर की खाद देने से प्राप्त होती है। इसके अलावा गोबर की खाद का असर लंबे समय तक बना रहता है। अनुमान लगाया गया है कि गोबर जलाने से भारत को प्रति वर्ष लगभग दो अरब रुपयों की हानि उठानी पड़ती है। खाद के रूप में एक मन गोबर का मूल्य लगभग बारह आना होता है और ईंधन के रूप में केवल चार आना।

मि० डब्लू० बर्न का अनुमान है कि भारत को प्रतिवर्ष २६ लाख टन नोषजन की आवश्यकता है। यदि भारत के सभी मवेशियों के मल की खाद बनाई जाने लगे, तो लगभग आठ लाख टन की ही पूर्ति की जा सकेगी, कारण कि खाद तैयार करने के बेढंगे तरीके के और लापरवाही के कारण शेष नोषजन नष्ट ही हो जायगा। मि० जे० रसेल का मत है कि भारत में जितना पशु-मल प्राप्त होता है, उसके ४० प्रतिशत से उपले बनाये जाते हैं, प्रतिशत २० अन्य तरीके से नष्ट हो जाता है और केवल ४० प्रतिशत से ही खाद तैयार की जाती है।

रसेल और रिचार्ड्स द्वारा इंगलैंड की रॉथमस्टेड कृषि-प्रयोगशाला में किये गये प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि पशु-मल, कचरा-कूड़ा आदि को पशु-शाला में ही पशुओं के पैरों के नीचे तब तक पड़ा रहने देना चाहिए जब तक कि हटाकर खेत में डालना आवश्यक न हो। जहाँतक संभव हो, इसी तरीके

पर अमल किया जाना चाहिए। खाद को गढ़े में डालकर सड़ाने की क्रिया में कितनी ही सावधानी क्यों न बरती जाय और कितनी ही ज्यादा हिफाजत क्यों न की जाय, नोषजन नष्ट होता ही है। जिस स्थान में पानी प्रवेश न कर सके, उस स्थान पर खाद बनाने से नोषजन की हानि नहीं हो पाती है। खाद इस रीति से तैयार की जानी चाहिए कि नोषजन की कम-से-कम हानि हो। पदार्थों को एकत्रित करके गढ़े में डालने और उन्हें अच्छी तरह से सड़ाकर खेत में डालने योग्य अवस्था में ला देने की क्रिया विशेष सावधानी और क्रमानुसार ही की जानी चाहिए। स्मरण रखना चाहिए कि पूरी तरह सड़ा हुआ पशु-मल ही अधिक मूल्यवान होता है और अधिक शीघ्रतापूर्वक वह पौधों के काम भी आ जाता है। अतएव एक बार खाद के गढ़े में का ढेर खोलने पर उसे तुरंत ही खेत में फैलाकर जुताई करके मिट्टी में मिला देना चाहिए।

प्रयोग के लिए दो बैल-जोड़ी चुनी गई थीं। दोनों को एक ही तरह की खूराक तौलकर बराबर-बराबर दी जाती थी। दोनों बैल-जोड़ियों का वजन भी समान था। इनसे दिन में खेतों में काम लिया जाता था और रात को गोठे में बाँधा जाता था। घास-भूसा और खली खिलाई जाती थी।

दिन को तापमान ९५° (फा०) से १०५° (फा०) तक रहता था। प्रयोग चल रहा था। उन दिनों ९३ सेंट वर्षा भी हुई थी। दोनों जोड़ी छाया में ही रखी गई थीं। एक बैल-जोड़ी के गोबर से बनाये गये उपलों का वजन साढ़े चार मन हुआ। दूसरी बैल-जोड़ी का गोबर-घास-कचरा आदि हटाकर गढ़े में डाला जाता रहा। बैलों के नीचे बिछाये गये घास-भूसा में पेशाब भी समाती रहती थी। यह भी हटाकर खाद के ढेर में ही डाला जाता था। इस सब का वजन साढ़े चौदह मन बैठा। यदि बैलों को हरी घास खिलाई जाती, तो खाद का वजन और भी ज्यादा बैठता। यह प्रयोग गरमी के मौसम में ही किया गया था। यदि किसी दूसरे मौसम में किया जाता, तो वजन कुछ और भी बढ़ जाता। यह प्रयोग दो माह तक जारी रखा गया था।

सालभर में एक मवेशी औसतन कितना गोबर देता है, इस बात की

भी जाँच की जा चुकी है। किये गये कुछ प्रयोगों के परिणाम नीचे दिये गये हैं—

(१) पचास मवेशियों का गोबर एकत्रित करके तौला गया, तो पाया गया कि एक पशु एक दिन में लगभग १६·८० पौंड गोबर देता है। एक पशु के वर्षभर के गोबर का वजन लगभग ६१३२ पौंड आता है।

(२) ४९ मवेशियों के एक साल के गोबर का वजन प्रति मवेशी ५००० पौंड बैठा।

(३) ४३ मवेशियों का गोबर तौलकर औसत निकाली गई, तो एक मवेशी के एक साल के गोबर का औसत वजन ३९७६ पौंड हुआ।

(४) २५ मवेशियों का गोबर तौलने पर एक मवेशी का एक दिन का गोबर १५·८८ पौंड और सालभर का ५७७० पौंड हुआ।

इन सभी प्रयोगों से पाया गया कि एक मवेशी एक साल में औसतन ५२२० पौड गोबर देता है। इन सभी मवेशियों को दिन में जंगल में चराया जाता था और रात को गोठे में बाँधकर घास डाली जाती थी। इनमें गाय, बैल और बछड़े शामिल थे। खेतों मे काम करनेवाले बैल शामिल नहीं किये गये थे।

कानपुर में सत्रह मास तक की गई जाँच से पाया गया कि काम करने-वाले एक बैल का एक साल का गोबर ४०४८ पौंड होता है और बिछावन और पेशाब का वजन फी बैल १६८७ पौंड पड़ता है।

बर्दवान में दस मास तक ६ बैलों का गोबर हर रोज तौला गया। फी बैल औसतन ३७३१ पौंड सालाना आया। नागपुर में यह सालाना औसत ११६३० पौंड और पूना में ६४०१ पौंड आई थी। तत्कालीन बड़ौदा राज्य के एक पूरे गाँव के सभी मवेशियों का गोबर तौला गया, जो फी मवेशी सालाना साढ़े तीन टन (९८ मन) पड़ा। सभी जगह की गई जांच से पाया गया कि जंगल में चरनेवाले मवेशी का सिर्फ रात का गोबर सालाना अढ़ाई टन और खेतों में काम करनेवाले बैलों का सालाना दो टन प्रति पशु बैठता है। प्रयोगों से यह भी ज्ञात हुआ है कि गोबर की खाद देने से गरमी के दिनों में खेत में उतनी नमी रहती है, जितनी लगभग डेढ़ इंच पानी बरसने से रहती है।

गोबर की खाद की उपयोगिता—गोबर की खाद कितनी ही अधिक मात्रा में क्यों न दी जाय, इससे फसल को किसी प्रकार की हानि नहीं पहुंचती है। ताजा गोबर खेत में कदापि नहीं डाला जाना चाहिए। इससे दीमक लग जाती है। प्रति एकड़ कम-से-कम दस गाड़ी खाद अवश्य ही दी जानी चाहिए। प्रति एकड़ सौ गाड़ी तक दी जा सकती है। खरीफ की फसल को प्रति एकड़ दस से बीस गाड़ी और सिंचाई की फसलों को प्रति एकड़ ५० गाड़ी तक दी जाना आवश्यक है। ईख को प्रति एकड़ सौ से दो सौ गाड़ी तक खाद दी जा सकती है। अनुभव से पाया गया है कि प्रति तीसरे साल एक टन (२८ मन) खाद देना लाभदायक है। एक टन खाद में १३ पौंड नोषजन, ५ पौंड फासफरिक एसिड और १८ पौंड पोटैश मौजूद रहता है।

खाद को वर्षा प्रारंभ होने से पहले ही खेत में फैलाकर तुरंत ही मिट्टी में मिला देना चाहिए। खाद के ढेलों को तोड़कर चूरा कर देना लाभदायक है। अकसर देखा गया है कि खाद के छोटे-छोटे ढेर कई दिनों तक खेत में बिना बिखेरे ही पड़े रहने दिये जाते हैं। इससे नोषजन के हवा में उड़ जाने की क्रिया में सहायता मिलती है। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है कि खाद को तुरंत ही खेत में फैलाकर जुताई करके मिट्टी में मिला दिया जाय। बारानी फसलों को—बिना सिंचाई की फसलों को, प्रति पांचवें वर्ष खाद अवश्य ही दी जानी चाहिए। यह खाद सभी प्रकार की फसलों को दी जा सकती है। फूल के पौधों और फल-झाड़ों को इस खाद का घोल देना लाभदायक है। जड़ें खोलकर घोल सींचकर मिट्टी ढंक दी जाय। घोल देने के बाद खूब सिंचाई कर दी जानी चाहिए। ताजे गोबर का घोल देने से गुलाब के पौधे में बड़े फूल आते हैं।

जोत की जमीन को तीन या चार हिस्सों में बाँट करके हरसाल एक हिस्से में खाद देना चाहिए। ऐसा करने से जोत की कुल जमीन को खाद मिलती रहेगी।

गोबर से निकलनेवाली गैस को ईंधन की तरह काम में लेने के लिए एक 'डायजेस्टर' बनाया गया है। पूना के 'कृषि महाविद्यालय' की पत्रिका में 'गृहलक्ष्मी' नामक पत्रिका के एक लेख का उद्धरण देते हुए लिखा है कि

पशु द्वारा उत्सर्ग किये जाने के तुरन्त बाद से ही पशु-मल में से नोषजन का अनिवार्य रूप से नाश होना प्रारंभ हो जाता है। प्रयोगों से पाया गया है कि खाद के गढ़े में से जितना नोषजन हवा में उड़कर नष्ट हो जाता है उससे बहुत ही कम नोषजन मेथैन गैस (methane) तैयार करने की क्रिया में नष्ट होता है। गोबर आदि में से निकलनेवाली गैस का उपयोग कर लेने के बाद बचे हुए पदार्थ, पानी निचोड़कर सुखा लेने के बाद उत्तम प्रकार की खाद का काम देते हैं। इसमें नोषजन का परिमाण उतना ही रहता है, जितना अन्य रीति से तैयार की गई इस प्रकार की खाद में पाया जाता है। इस खाद से गेहूं की पैदावार ज्यादा आती है। पूना में किये गये प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि प्रति दो सौ पौंड गोबर की खाद में १ या २ पौंड सुपरफासफेट मिला देने से ७२ प्रतिशत नोषजन सुरक्षित रह जाता है, और नोषजन की मात्रा एक से तीन गुनी तक बढ़ जाती है।

कृत्रिम गोबर की खाद

गोबर के उपले जलाये जाने के कारण भारत के अधिकांश प्रदेशों में खाद का अभाव-सा ही बना रहता है। गोबर से खाद बनाने की रीति ही ऐसी है कि तैयार की गई खाद बहुत ही घटिया दरजे की होती है। जबतक किसानों को सस्ता और पर्याप्त ईंधन प्राप्त करने की सुविधा नहीं मिल पाती है, गोबर का जलाया जाना बंद होना असंभव है। इसलिए यह जरूरी है कि खाद बनाने के दूसरे तरीके अपनाये जायं और सभी प्रकार की निरुपयोगी वस्तुओं से खाद बनाया जाय। शहर और गांव की सड़कों की झाड़न-बुहारन और खेत-खलिहान से निकलनेवाले बेकार पदार्थों से उत्तम प्रकार की खाद बनाई जा सकती है। यह खाद गोबर की खाद के समान ही लाभदायक होती है। संगठित रूप से प्रयत्न किया जाय तो प्रत्येक गांव की आवश्यकता कुछ अंश में सहज ही पूरी की जा सकती है।

खेतों में के खर-पतवार, फसलों और अन्य पौधों के हरे-सूखे पत्ते, बनसटी, सनेटी, तिलौंजा, तूर-सांटी, पशुओं के खाने के काम में न आने लायक घास-भूसा, कड़बी आदि पदार्थ काफी मात्रा में मिल सकते हैं। इन पदार्थों को गाड़ी-मवेशी आदि के आने-जाने के रास्तों पर फैला दिया जाय,

ताकि पैरों से कुचलकर छोटे-छोटे टुकड़े हो जायं। कड़बी काटने की मशीन से भी छोटे-छोटे टुकड़े किये जा सकते हैं। मोटे और बड़े टुकड़े जल्दी सड़ते नहीं हैं। छोटे टुकड़ों से थोड़े समय में अच्छी खाद तैयार हो जाती है।

दस फुट लंबा, दस फुट चौड़ा और एक फुट गहरा गढ़ा बना लिया जाय। इसमें एक फुट मोटी तह कचरा-कूड़ा आदि की लगा दी जाय। इसपर गोबर का गाढ़ा घोल इतना छिड़का जाय कि कचरा-कूड़ा आदि अच्छी तरह तर-ब-तर हो जाय। इसपर फिर एक फुट मोटी तह कचरा-भूसा आदि की फैला दी जाय। इसको भी गोबर के गाढ़े घोल से अच्छी तरह से तर-ब-तर कर दिया जाय। तब इसे काली मिट्टी की तीन इंच मोटी तह से ढक दिया जाय। इस मिट्टी में सन के बीज बोकर पानी सींच दिया जाय। पानी इतना दिया जाय कि मिट्टी तर हो जाय। मिट्टी गीली बनाये रखने के लिए प्रति सातवें-आठवें दिन पानी सींचा जाता रहे। सन के पौधों की उम्र लगभग दो मास की हो जाने के बाद ढेर को फावड़ों से अच्छी तरह से नीचे ऊपर कर दिया जाय। ढेर पर इतना पानी छिड़कते रहना चाहिए कि खाद सूखने न पाय। गीलेपन के कारण ढेर में के सभी पदार्थ पूरी तरह से सड़ जायंगे। छह माह में ऊंचे दरजे की खाद तैयार हो जायगी। धूप और वर्षा से खाद को बचाये रखना चाहिए। ढेर में के पदार्थ को हाथ में लेकर मसलने पर यदि महीन चूरा हो जाय, तो समझ लेना चाहिए कि वह काम में लाने लायक हो गया है। घास-फूस, भूसा आदि के साथ राख, भाड़-भट्टी की राख आदि पदार्थ भी गढ़े में डाले जायं तो खाद में दूसरे भोज्य पदार्थों की मात्रा भी बढ़ जायगी। अधिक लाभ-कारी और उत्तम प्रकार की खाद बनाने के लिए नीचे लिखी रीति का अवलंबन किया जाना चाहिए।

अमोनियम सलफेट १० सेर, चूना २० सेर और हड्डी का महीन चूरा या सुपरफासफेट ८ सेर को मिलाकर चार बराबर भाग कर लिये जायं। ऊपर लिखे अनुसार कचरे-कूड़े-भूसे आदि की तह बिछाने के बाद इस मिश्रण की तह दी जाय और तब गोबर का गाढ़ा घोल छिड़का जाय। इस प्रकार एक के बाद दूसरी तह दिया जाता रहे और तब मिट्टी बिछाकर सन बो दिया जाय।

अनुभव से यह बहुत ही अच्छी खाद साबित हुई है। यह खाद हलकी और भारी दोनों ही किस्म की जमीन की उत्पादन शक्ति बढ़ाने की अच्छी क्षमता रखती है। इस खाद से चिकनी मिट्टीवाली जमीन भुरभुरी हो जाती है।

२—मिश्र खाद या कम्पोस्ट

उष्ण कटिबंध के देशों की जमीनों में कार्बनयुत पदार्थों की कमी रहती है। समतल प्रदेशों में यह पदार्थ दो प्रतिशत से ज्यादा शायद ही रहता है। उपजाऊपन की दृष्टि से जमीन में इन पदार्थों का एक निश्चित परिमाण में रहना अत्यावश्यक है। मल-मूत्र, गोबर-कचरा-कूड़ा, कांप (कलई) आदि को मिलाकर चीन में खाद तैयार की जाती है। भारत मे भी इसे तैयार करने का प्रयत्न किया गया है। 'एग्रिकलचरल रिसर्च इंस्टीट्यूट' द्वारा प्रचारित 'हॉट फरमेंटेशन प्रोसेस' से बड़ौदा, मैसूर, हैदराबाद, पंजाब, बंबई, आदि राज्यों में कम्पोस्ट खाद तैयार किया जाने लगा है। ग्राम-पंचायतें और नगरपालिकाएँ इस रीति से खाद तैयार करके काफी फायदा उठा सकती हैं। सोनखाद या पुडरेट का उपयोग बहुत ही कम लोग करते हैं और देहातों में तो विष्ठा से खाद बनाई ही नहीं जाती है। मल-मूत्र पर रासायनिक क्रियाएं भी पूर्ण रूप से हो नहीं पाती है। तापमान कम होने के कारण कई प्रकार के हानिकारक कीटाणु और कीड़े मरते ही नहीं हैं, जिससे नाना प्रकार के कीड़ों और मक्खियों का उपद्रव बहुत बढ़ जाता है। इसलिए "हॉट फरमेंटेशन पद्धति" को अपनाना ही हितकर है।

खाद बनाने की रीति

पहली विधि—बीस फुट लंबा, छह फुट चौड़ा, और तीन फुट गहरा गढ़ा खोदा जाय। कूड़ा-कचरा और मल-मूत्र की मात्रा समान रखी जाय। कूड़ा-कचरा कुछ कम रहा, तो भी हर्ज नहीं। कचरा-कूड़ा, मल-मूत्र और मिल सके तो कसाईखाने से प्राप्त होनेवाले निरुपयोगी पदार्थों की तह एक के ऊपर एक दिये जायं। गढ़ा भर जाने पर दो इंच मोटी मिट्टी की तह देकर मुंह बंद कर दिया जाय। तीन-चार दिन में खाद के गढ़े में ६५ अंश

से ७० अंश (फा०) ताप पैदा हो जायगा, जिससे सभी कीड़े मर जायंगे। सड़ने की क्रिया भी तेजी से होने लगेगी। लगभग ६ मास में सड़कर खाद तैयार हो जायगी।

करीब १० हजार की आबादीवाले गांव की नगरपालिका एक वर्ष में लगभग पांच हजार मन खाद तैयार कर सकती है। यह खाद तीन रुपया फी टन पड़ती है। अमोनियम सलफेट देने से एक पौंड नोषजन नौ आने में और मूंगफली की खली की खाद से एक पौंड नोषजन लगभग सात आने में पड़ता है। इस खाद से नोषजन के अलावा फासफरिक एसिड और पोटैश भी मिलता है। किसान अपने खेत में ही खाद तैयार करें तो कम्पोस्ट खाद बनाने में एक रुपया टन से ज्यादा खर्च नहीं बैठता है।

दूसरी विधि—घास-फूस, कूड़ा-कचरा, बनसाटी, सनेटी, तिलौंजा, आदि को चूरा करके पशुओं के नीचे बिछावन की तरह बिछा दिया जाता है। पेशाब और पतला गोबर ये चीजें सोख लेंगी। तीस फुट लंबा, चौदह फुट चौड़ा, और तीन फुट गहरा गढ़ा बना लिया जाय, जिसकी दीवारें तली की ओर को ढालू हों। पशुओं के पेशाब से भीगी हुई मिट्टी, राख, कचरा, खर-पतवार, हरे-सूखे पत्ते आदि पदार्थ इस गढ़े में डाले जायं। गढ़ा आधा भर जाने पर खाद पर खूब पानी छिड़का जाय। इसपर फिर उक्त पदार्थ डाले जायं। गढ़ा पूरा भर जाने पर खूब पानी छिड़ककर खाद को तर-ब-तर कर दिया जाय और मिट्टी की दो इंच मोटी तह से गढ़ा ढक दिया जाय। लगभग ६ मास में उत्तम खाद बन जायगी। गढ़े का मुंह बंद कर देने के बाद भी महीन छेद के झारे से महीने में दो-तीन बार काफी पानी छिड़का जाना चाहिए।

तीसरी विधि—आवश्यकतानुसार लंबा-चौड़ा और गहरा गढ़ा बनवा लिया जाय। इस गढ़े की तली में डेढ़ बालिश्त मोटी तह, सूखे पत्ते, कचरा-कूड़ा, आदि की दी जाय। इनपर नीचे बतलाये अनुसार तैयार किया गया मिश्रण पानी में घोलकर छिड़क दिया जाय। इसके बाद नौ इंच मोटी तह कचरा-कूड़ा, घास-फूस आदि की फैलाकर यही घोल फिर छिड़क दिया जाय। गढ़ा भरने तक ऐसा किया जाता रहे। गढ़े का मुंह मिट्टी की एक बालिश्त मोटी तह से बंद कर दिया जाय। खाद को गीला बनाये रखने

के लिए बीच-बीच में पानी छिड़का जाता रहे। करीब दो मास में सब पदार्थ सड़ जायंगे। खाद पर छाया कर देनी जरूरी है। दो मास बाद ऊपर की मिट्टी हटाकर खाद को फावड़े से ऊपर-नीचे करके अच्छी तरह से मिला दिया जाय। एक मन पदार्थों से लगभग तीन मन गीली खाद तैयार होगी।

अमोनियम सलफेट ३० सेर, चूना ३० सेर, और सुपरफासफेट १५ सेर को काफी पानी में डालकर घोल तैयार कर लिया जाय। लगभग ३० टन घास-फूस, कचरा-कूड़ा आदि पदार्थों के लिए यह मिश्रण काफी है। अमोनियम सलफेट और चूने के बदले में कैलशियम सायनामाइड काम में लिया जा सकता है।

कम्पोस्ट खाद में मुख्य पदार्थ हैं—गाँव का कचरा, पत्ते, पौधों के पत्ते-टहनी, घास-भूसा, हरे पत्ते, हरा खर-पतवार, सड़े-गले पदार्थ आदि। भारत की जमीनों में सेंद्रिय-पदार्थ और नोषजन की अत्यंत कमी है। इस खाद से मिट्टी को ये पदार्थ मिल जाते हैं। वनस्पति में कार्बन और नोषजन एक विशेष अनुपात में मौजूद रहते हैं। नीचे कुछ पदार्थों के कार्बन और नोषजन का अनुपात दिया गया है :—

नाम पदार्थ	*कार्बन प्रतिशत*	*नोषजन प्रतिशत*	*अनुपात*
ईख के चिपाटे	३६·४	०·३५	१२६·६ :: १
चावल के डंठल (पयाल)	४०·८	०·४६	८८·७ :: १
बनसटी	४४·६	०·६२	७०·९ :: १
कड़बी (ज्वार आदि के डंठल)	४२·२	०·६२	७४·४ :: १
सनेटी	४१·२	०·८६	३१·६ :: १
पत्ते आदि	२७·२	०·८६	३१·० :: १
गांव का कचरा-कूड़ा	२०·०	०·७०	२८·६ :: १

प्रारंभ में कार्बन और नोषजन का अनुपात ३० :: १ के लगभग हो तो, सड़ने की क्रिया बहुत तेजी से चलती है। यह अनुपात बढ़ जाने पर सड़ने की गति शिथिल हो जाती है और पदार्थ देरी से सड़ते हैं। हरी खाद देने में भी यही सिद्धान्त काम करता है। विष्ठा, मूत्र, गोबर आदि कुछ पदार्थों के कार्बन और नोषजन का अनुपात नीचे दिया जाता है—

नाम पदार्थ		कार्बन प्रतिशत		नोषजन प्रतिशत		अनुपात
गोबर	...	३७·००	...	१·४०	...	२६·४ :: १
विष्ठा	...	४७·७	...	६·१६	...	७·७ :: १
सुवेज (सूखा)	...	३०·००	...	८·५०	...	३·५ :: १
मल-मूत्र (सूखा)	...	६०·००	...	२०·००	...	३·० :: १
रक्त (सूखा)	...	५०·००	...	१४·००	...	३·६ :: १

इनमें जीवाणु या शाकाणु (बैक्टीरिया) भी मौजूद रहते हैं, जो पदार्थों को सड़ाने में सहायता पहुंचाते हैं। इनमें अमोनियम सलफेट, कैलशियम सायनामाइड जैसे नोषजनयुत पदार्थ मिलाने से भी सड़ने की क्रिया में काफी सहायता मिलती है। किसी पदार्थ को सड़ाने के लिए तरी की आवश्यकता रहती है। ५० प्रतिशत नमी होने पर सड़ने की क्रिया सरलता से चलती रहती है। इससे ज्यादा नमी होने पर सड़ने के काम में रुकावट पड़ती है। पदार्थों के सड़ने से उष्णता पैदा होती है, जिससे रोग पैदा करने-वाले कीड़ों का नाश हो जाता है।

प्राप्त होने वाले कचरा-कूड़ा आदि पदार्थों के अनुसार ही गढ़े की लंबाई-चौड़ाई होनी चाहिए। पशुओं की संख्या के मान से गढ़ों की लंबाई-चौड़ाई नीचे दी जाती है।

मवेशी की संख्या	*लंबाई-चौड़ाई (फुटों में)*
२ से ४ तक	२२×४½
५ से १० तक	२५×५
११ से २० तक	३०×६
२० से ऊपर	३५×६

वर्षा के दिनों में गढ़े में पानी नहीं भरा रहना चाहिए। इसलिए गढ़े की तली में से एक नाली निकाल दी जानी चाहिए, ताकि पानी बहकर निकल जाय। दो गढ़ों या नालियों के बीच में ६ फुट का अंतर रखा जाना चाहिए। खोदी हुई मिट्टी नाली की लंबाई की बाजू पर दोनों ओर डाली जानी चाहिए। चौड़ाई की बाजू खुली ही रखी जानी चाहिए। दो कतारों के बीच में गाड़ी आड़ी-खड़ी आ जाय इतनी जगह रास्ते के लिए खुली रखी

जानी चाहिए। साधारणतः, दो कतारों में लगभग सोलह फुट का अंतर रखा जा सकता है। गढ़े में बरसात का पानी बहकर न जाने दिया जाय तो और भी अच्छा है।

पेशाब और गोबर के पतले भाग को सोखने के लिए पशुशाला या गोठे में बिछावन डालने की बात ऊपर कह आये हैं। मवेशी, गाड़ी आदि के आने-जाने के रास्ते में बनसटी, सनेटी, तिलौंजा आदि डाल देने से छोटे-छोटे टुकड़े हो जायँगे। कड़बी काटने की मशीन या गंड़ासे से भी टुकड़े किये जा सकते हैं। गोठे की जमीन बाहर की ओर को ढालू हो। फर्श-बंदी न हो, तो कड़ा मुरुम बिछाकर दुर्मट से खूब पीट देना चाहिए। गोठे से बहकर आनेवाली पेशाब एक पक्के हौज में जमा की जाय। गोठे की जमीन पर सूखी मिट्टी की तीन इंच मोटी तह हमेशा रखी रहनी चाहिए। पेशाब से भीगी हुई मिट्टी को खुरचकर खाद के गढ़े पर फेंक देना चाहिए और हौज में जमा की गई पेशाब भी खाद पर छिड़क दी जानी चाहिए।

एक घनफुट गढ़े में लगभग ग्यारह सेर कचरा आता है। एक गैलन मूत्र या विष्ठा का वजन लगभग दस सेर होता है। २० फुट लंबे, ६ फुट चौड़े और ३ फुट गहरे गढ़े में ३ इंच जगह पर करीब ३० घनफुट कचरा अमाता है।

गोठे का इंतजाम न हो सके और गांव की झाड़न-बुहारन मिल सकना भी संभव न हो तो एक दूसरी रीति से भी खाद बनाई जा सकती है। गढ़े में कचरे की तह पर गोबर को पानी में मिलाकर बनाया गया गाढ़ा घोल छिड़का जाय। पेशाब में गोबर घोलकर तैयार किया गया मिश्रण अधिक लाभदायक होता है। कचरे को ऊपर-नीचे करके घोल छिड़ककर पूरी तरह से तर कर दिया जाय। इसपर पतली तह सूखी मिट्टी या राख की फैलाकर विष्टा की पतली तह दे दी जाय। करीब डेढ़ फुट मोटी तह हो जाने पर आधा इंच मोटी तह पेशाब सोखी हुई मिट्टी या राख या सूखी मिट्टी की फैला दी जाय। कचरा जमीन से एक फुट ऊपर तक आ जाने पर तीन इंच मोटी मिट्टी की तह से खाद ढंक दिया जाय।

बीस फुट लंबे, छह फुट चौड़े और तीन फुट गहरे गढ़े में जितना कचरा भरेगा, उतने ही कचरे से बारह फुट लंबा, बारह फुट चौड़ा और लगभग

तीन फुट ऊंचा ढेर बनेगा। जमीन को एक फुट गहरी खोदकर गढ़े के चारों ओर यह मिट्टी डाल दी जाय। कचरा, पत्ते आदि इस ढेर पर डाले जायं। ढेर इस ढंग से बनाया जाय कि बीच में सबसे ऊंचा और बाजुओं की ओर ढालू हो। खाद को पानी से तर-ब-तर करके मिट्टी की दो इंच मोटी तह से ढक दिया जाय।

पंजाब में २५ फुट लंबी, ७-८ फुट चौड़ी और ३ फुट गहरी नालियों में खाद बनाई जाती है। उत्तर प्रदेश में १२½′×८′×३′ की नालियां खोदी जाती हैं। पंजाब के ढंग की नालियां एक कुटुब का सालभर का कूड़ा-कचरा डालने के लिए काफी हैं। उत्तर प्रदेश के ढंग के ३-४ गढ़े बनाने पड़ेंगे। गढ़े छोटे होने के कारण अधिक घने भूभागों में आसानी से बनाये जा सकते हैं। मवेशी के नीचे बिछाये गये घास-भूसा आदि पदार्थ राख, गोबर, छिलके, जूटन आदि चौड़ाई में भरे जाते हैं। सभी पशुओं का मल इसमें ही डाला जाता है। चार-छः रोज तक डाले गये पदार्थों का ढेर जमीन से डेढ़ फुट ऊंचा हो जाने पर मिट्टी डालकर थोप दिया जाता है और गोबर और मिट्टी बराबर-बराबर मिलाकर लीप दिया जाता है। ऐसा करने से हानिकारक कीड़े भीतर प्रवेश नहीं कर पाते हैं, उसमें मक्खियों का भरण-पोषण नहीं हो पाता है और नोषजन भी नष्ट नहीं होता है। इस प्रकार बंद किये गये गढ़े की खाद छह मास में सड़कर तैयार हो जाती है। इसमें २ प्रतिशत तक नोषजन होता है। इस रीति से देहातों में खाद बनाई जा सकती है।

चीन में सभी पदार्थ, जो मनुष्य और पालतू जानवरों के खाने के काम में आते हैं, प्राणियों को ही खिलाये जाते हैं और जो खाये नहीं जा सकते हैं, वे जला दिये जाते हैं। प्राणियों का मल-मूत्र, फटे-बेकार चीथड़े, रद्दी कागज, राख, सड़े-गले पदार्थ खाद के गढ़े में ही स्थान पाते हैं।

कम्पोस्ट बनाने की इंदौर-पद्धति—मध्यप्रदेश के इंदौर नगर में 'इंस्टीट्यूट ऑफ प्लांट इंडस्ट्री' नामक संस्था खेती-संबंधी अनुसंधान-कार्य कर रही है। इस संस्था ने कम्पोस्ट खाद बनाने की एक नई रीति अपनाने की सिफारिश की है। देश के कई भागों में इस रीति से खाद तैयार करने के प्रयोग किये गये हैं। किन्तु खुद खेती करनेवाले किसानों ने

इस रीति को अपनाया नहीं है। एक उत्साही समझदार किसान ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि इस रीति से खाद तैयार करने में परिश्रम और समय ज्यादा खर्च करना पड़ता है। इसके अलावा उन प्रदेशों में, जहां गांवों के आसपास पर्याप्त पानी नहीं मिलता है, इस रीति से खाद बनाना बहुत कठिन काम है, कारण कि कुओं से पानी खींचकर खाद बनाने में बहुत ज्यादा खर्च बैठता है। इसलिए इस रीति के संबंध में यहां कुछ नहीं लिखा गया है।

'किसान-कम्पोस्ट-विधि'—महात्मा गांधी की शिष्या मीराबहन अपने किसान-आश्रम में नीचे लिखे तरीके से कम्पोस्ट खाद तैयार करती हैं। इस तरीके को अपनाकर तैयार की गई खाद को मीराबहन ने 'किसान-कम्पोस्ट' नाम दिया है।

१० फुट चौड़ा, २० फुट लंबा और ३ फुट गहरा गढ़ा खोद लिया जाय। खलिहान, रास्ते और घर की झाड़न-बुहारन आदि के कचरे-कूड़े का ढेर प्रतिदिन गढ़े के पास लगाया जाय। गोठे से या रास्तों से एकत्रित किये गये गोबर का ढेर भी कचरे के ढेर के पास लगा दिया जाय। सब गोबर और कचरा इकट्ठा हो जाने पर गढ़े की लंबाई की ४ फुट जगह खाली छोड़ कर शेष जगह पर तली में लगभग तीन इंच मोटी तह कचरा-भूसा आदि की दी जाय और इसपर एक इंच मोटी तह गोबर की फैला दी जाय और इसे ३ इंच मोटी कचरे की तह से ढक दिया जाय। इस प्रकार तह-पर-तह दी जाय। कचरे की चार तहों के बीच में तीन तहें गोबर की दबी रहेंगी। हर तीसरे दिन इन पदार्थों को पानी से अच्छी तरह से भिगो दिया जाता रहे। आधी ऊंचाई तक गढ़ा भर जाने पर तीन-चार इंच मोटी मिट्टी की तह से खाद ढक दिया जाय और सात-आठ सप्ताह तक वैसा ही पड़ा रहने दिया जाय। पहला गढ़ा भर जाने पर दूसरा और दूसरे के बाद तीसरा गढ़ा भरा जाय। मिट्टी से ढक देने के सात-आठ सप्ताह बाद पहले गढ़े की चार फुट खाली जगह पर खड़े होकर फावड़े से काट-काटकर कचरे और गोबर को अच्छी तरह से मिलाते हुए खाली भाग में भर दिया जाय। इसके बाद सब पदार्थों को पानी से अच्छी तरह से तर-ब-तर करके मिट्टी से ढंक दिया जाय। इस तरह वह हिस्सा खुल जायगा, जिसमें खाद भरी

गई थी। इसे सात-आठ सप्ताह तक वैसा ही पड़ा रहने दिया जाय। यह खाद अच्छी तरह मिली हुई और पूरी तरह सड़ी हुई होगी।

इस तरीके पर बनाई गई खाद केवल एक ही बार पलटनी पड़ती है और लगभग चार मास में तैयार हो जाती है। गढ़े में कचरा की तह देते समय थोड़ा-थोड़ा पुराना कम्पोस्ट-खाद भी फैला दिया जाय तो खाद जल्दी सड़ती है। थोड़ी राख भी डाल दी जाय तो और भी अच्छा है। खाद को धूप और हवा से बचाने के लिए मिट्टी से ढंक देना आवश्यक है। गढ़ों की लंबाई-चौड़ाई आवश्यकतानुसार घटाई-बढ़ाई जा सकती है।

भारत-सरकार द्वारा अनुमोदित विधि—डॉ० सी० एन० आचार्य द्वारा लिखित एक पुस्तिका गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया प्रेस, नई दिल्ली, से प्रकाशित हुई है। इसी पुस्तिका के आधार पर पुनरुक्ति करते हुए भारत-सरकार द्वारा अनुमोदित 'कम्पोस्ट' खाद बनाने की रीति नीचे दी जाती है।

आजकल ग्रामों में जिस प्रकार की खाद तैयार की जाती है, उसमें $\frac{१}{२}$ प्रतिशत तक नोषजन होता है और प्रति पशु ४०-५० घनफुट याने एक-दो गाड़ी खाद ही बनता है।

कचरा-कूड़ा, खर-पतवार, सूखे-हरे पत्ते, छिलके, सड़े-गले पदार्थ आदि से ही कम्पोस्ट बनाई जाती है। पशु-मल के अलावा मूत्र भी इसी में मिलाया जाना चाहिए। पेशाब में नोषजन की मात्रा अधिक होती है और यह सभी पदार्थों को आसानी से अच्छी किस्म के कम्पोस्ट में बदल देता है। झाड़-झंखाड़, घास-फूस, सूखे हरे पत्ते, छिलके आदि गोठे के पास ही एकत्रित करके ढेर लगा दिया जाय और प्रतिदिन शाम को प्रति पशु पांच सेर के हिसाब से जानवरों के पांवों के नीचे, जहां पेशाब गिरती हो, फैला दिया जाय। दूसरे दिन सवेरे पशुओं को गोठे से बाहर निकाल देने के बाद, पेशाब से भीगा हुआ कचरा आदि हटाकर पशु-मल में मिलाकर, नीचे लिखी रीति से खाई में भर दिया जाय।

खाई में खाद बनाने की रीति—गरमियों में खाइयों में ही खाद बनाने से नमी और नोषजन की रक्षा भली-भांति हो जाती है। जमीन में पानी की सतह ऊंची हो, या वर्षा में खाइयां काम न दे सकें, तो ढेर में ही खाद बनाई जाय।

खाइयां ऐसे नाप की बनाई जायं कि गोठे से निकलनेवाले तीन माह के घास-फूस आदि पदार्थ, जो प्रतिदिन जमा किये जाते हैं, आ जायं। खाई का सही-सही नाप तो पशुओं की संख्या, खराब किये गये तथा बिछाये गये पदार्थ, खेत-खलिहान से प्राप्त फालतू पदार्थ आदि की मात्रा पर ही अवलंबित रहती है। इन सब बातों को ध्यान में रखकर ही नालियां खोदी जानी चाहिए। पशुओं की संख्यानुसार खाइयों का नाप नीचे दिया जाता है:—

पशुओं की संख्या	*लंबाई-चौड़ाई-गहराई (फुटों में)*
२ से ५ तक	१५ × ४ × २½
६ से १० तक	२० × ५ × ३
११ से २० तक	२५ × ६ × ३½
२० से ऊपर	३० × ७ × ३½

नालियों की बाजुएं एकदम सीधी न हों; भीतर की ओर, ऊपर से नीचे की तरफ, ६ इंच का ढलाव दिया जाय। खाई की तली को भी एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक फुट का ढलाव दिया जाय, जिससे वर्षा का जल गहरे भाग में इकट्ठा होकर बाहर निकल जाय और नाली में के खाद को खराब न करे। गोठे के पास ही, ऊंचे स्थान पर, नालियां बनाना सुविधाजनक है। खाई की बाजुओं पर चारों तरफ मिट्टी डाल दी जाय, ताकि वर्षा का पानी भीतर प्रवेश न कर सके। यदि मिट्टी कड़ी हो, तो तली में ईंटों की जुड़ाई करने की आवश्यकता नहीं है। हरेक किसान तीन नालियां बनायें। तीसरी नाली पूरी भरने तक पहली नाली में की खाद गल-पककर तैयार हो जायगी।

प्रति पशु सात से दस सेर तक गोबर और पांच से सात सेर तक पेशाब इकट्ठी हो जाती है। बिना खाया चारा-भूसा, खराब घास आदि तीन सेर तक एकत्रित होगा। गन्ने की फसल निकाल लेने के बाद खेत में लगभग चार टन कचरा मिल सकता है, जो पशुओं को खिलाने लायक नहीं होता है। अरहर, जुवार, बाजरा, मक्का, कपास, तिल, अंडी आदि के डंठल एक टन के लगभग प्राप्त होंगे। गेहूं, चावल आदि के खेतों से भी निरुपयोगी पदार्थ मिल सकते हैं। इनको छोटे-छोटे टुकड़े करके ही पशुओं के नीचे बिछाना

चाहिए। इस प्रकार एकत्रित किये गये सभी पदार्थ लगभग एक साल तक पशुओं के बिछौना का काम दे सकेंगे।

पशुओं के नीचे प्रतिदिन, बिछाली बिछाई जाय। पशुओं के पैरों से गढ़े हो जायं, तो उन्हें, खपरैल-ईंट आदि के टुकड़े भरकर कूट-पीटकर कड़ा कर दिया जाय। गोठे का फर्श आसपास की जमीन से एक-डेढ़ इंच नीचा रखा जाय। इसमें प्रतिदिन भूसा, राख, छिलके, सूखी मिट्टी आदि फैलाये जाते रहें और इन्हीं पर बिछौना लगाया जाय।

दूसरे दिन, जानवरों के बाहर जाने पर मूत्र-गोबर से सने हुए पदार्थ, पांव के स्थान के गढ़े में व नाली में भरी मिट्टी आदि खुरचकर अन्य सब पदार्थों में अच्छी तरह से मिला दिये जायं। मिलाते समय थोड़ा पानी भी छिड़का जाय। पानी इतना ही छिड़का जाय कि सब पदार्थ पूरी तरह से गीले हो जायं, किंतु फर्श गीला न होने पाय।

नाली भरना—नाली के कम गहरे हिस्से की ओर से तीन फुट लंबाई तक के भाग में ही भराई की जाय। सनेटी, बनसटी आदि की टट्टी खड़ी करके भरा जानेवाला भाग अलग कर दिया जाय। दिनभर का कचरा, गोबर आदि भर देने के बाद इन पदार्थों को हलके-हलके दबा दिया जाय और तब मिट्टी की आध इंच मोटी तह से ढक दिया जाय। गढ़े में भरते समय यदि इसमें हड्डी का महीन चूरा या राख मिला दी जाय तो खाद अधिक लाभदायक हो जायगी। दूसरे दिन भी पहले दिन की तरह ही कचरा आदि भरकर मिट्टी से ढक दिया जाय। जब तक ढेर जमीन की सतह से दो फुट ऊंचा न हो जाय, प्रतिदिन कचरा आदि भरा जाता रहे। इसके बाद ढेर को गुंबददार बनाकर मिट्टी की एक इंच मोटी तह देकर दाब दिया जाय। ऐसा करने से नमी और नोषजन सुरक्षित रहेंगे और मक्खियां भी नहीं होंगी। कुछ दिन बाद छबाई में दरारें पड़ जायं, तो उन्हें गोबर-मिट्टी से बंद कर दिया जाय। पहला तीन फुट लंबाई तक का हिस्सा भर जाने पर दूसरा तीन फुट लंबाई तक का भाग भरा जाय। इस खाद को ढंक देने के बाद तीसरा भाग भरना शुरू किया जाय। खाई पूरी भरकर बंद कर देने के चार मास बाद खाद पूरी तरह से सड़कर तैयार हो जायगी। खाद का ढेर वजन से दबकर नीचे बैठ जाय, तो उस भाग में कचरा आदि भरकर

छाब दिया जाय। इस बात का ध्यान रखा जाय कि वर्षा का जल नाली में प्रवेश न करने पाये।

जमीन पर ढेर लगाकर खाद बनाना—दस फुट लंबी-चौड़ी जमीन पर ईंट-पत्थर-रोड़े आदि बिछाकर छह इंच के लगभग ऊंचा चौतरा-सा बना लिया जाय। रोज-रोज निकलनेवाला कचरा आदि इसीपर डाला जाता रहे। जमीन से चार फुट ऊंचा हो जाने पर ढेर के पदार्थों को थोड़ा-सा दबाकर गोबर-मिट्टी से छाबकर बंद कर दिया जाय। यह तरीका तभी अपनाया जाना चाहिए जबकि प्रतिदिन गोबर-कचरा आदि की छह इंच मोटी तह दी जा सके, कारण कि ढेर में की तरी बहुत ही तेजी से उड़ती है, जिससे पदार्थ सूख जाते हैं।

गन्ने के पत्तों का कम्पोस्ट—गन्ना काटने के बाद छीला जाता है और उसका शिरोभाग भी काटकर अलग कर दिया जाता है। इस प्रकार प्रति एकड़ दो टन पदार्थ मिल जाते हैं, जो खेत में ही आग लगाकर जला दिये जाते हैं। रस निकालने के बाद बची हुई खोई रस उबालने के लिए भट्टी में झोंकी जाती है। अनुमान लगाया गया है कि सारे भारत में लगभग एक करोड़ टन पत्ते आदि प्राप्त हो सकते हैं, जिनसे खाद बनाकर लाभ उठाया जा सकता है।

खेत में ही पानी की नाली के पास १५ फुट लंबा, ८ फुट चौड़ा और २ फुट गहरा गढ़ा बना लिया जाय। इसमें एक फुट तक गन्ने के पत्ते आदि भरकर गोबर का गाढ़ा घोल छिड़क दिया जाय। इस प्रकार जमीन की सतह से तीन फुट ऊंचा होने तक भरा जाता रहे और तब गोबर-मिट्टी से छाबकर इन्हें ढक दिया जाय। नाली में पानी बहता रहने से सीलन से ये पदार्थ गीले बने रहेंगे, जिससे सड़ने में सहायता मिलेगी। गन्ने की सूखी पत्तियों की दो तहों के बीच में एक तह हरी पत्तियों की दे दी जाय तो खाद और भी ऊंचे दरजे की बनेगी। पत्ते आदि को बिछाली के काम में लिया जाय और पशुओं के पैरों से कुचले जाकर गोबर-पेशाब सन जाने के बाद खाद बनाना भी अच्छा है।

खाद का उपयोग—फसल बोने से लगभग एक मास पहले ही खाद खेत में फैलाकर पहली बार जुताई की जानी चाहिए, ताकि बीज के अंकुरित

होने तक भोज्य पदार्थ जड़ों द्वारा ग्रहण कर लिये जाने की अवस्था में आ जायं।

प्रति एकड़ कितनी खाद दी जानी चाहिए, यह बात खेत में से साल-भर में ली जानेवाली फसलों की किस्म आदि पर निर्भर करती है। गन्ना, आलू, धान आदि सिंचाई की फसलों को प्रति एकड़ दस से बीस गाड़ी (५ से १० टन) खाद दी जाती है। बीस इंच से पचास इंच वर्षामानवाले प्रदेशों में ४ से ८ गाड़ी (२ से ४ टन) और २० इंच से कम वर्षावाले प्रदेशों में प्रति एकड़ दो-तीन गाड़ी खाद काफी है। यह राय उत्तर प्रदेश के एक प्रसिद्ध कृषक श्री गुरुचरणसिंह की है।

यह खाद धीरे-धीरे गलकर ही पौधों के काम आती है, और इसका असर दो-तीन साल तक बना रहता है। इसलिए सागभाजी की फसलों के अलावा दूसरी फसलों को प्रति दूसरे-तीसरे वर्ष ही खाद दी जानी चाहिए।

इस खाद में फासफरिक एसिड का अंश कम होता है। फार्म कम्पोस्ट में प्रतिशत ०·०५ से ०·०६ नोषजन, ०·०६ से ०·०७ पोटैश और ०·२ फास्फरिक एसिड होता है। इसलिए एक टन कम्पोस्ट के साथ ½ से १ मन के लगभग सुपरफासफेट या बोनमील देना आवश्यक है। यदि खली या अमोनियम सलफेट भी दे दिया जाय तो और भी अच्छा है—खासकर साग-तरकारी, आलू, गन्ना, धान आदि फसलों को।

कम्पोस्ट खाद और लोक-मत

कम्पोस्ट बनाना किसान इसलिए पसंद नहीं करते हैं कि इसे तैयार करने में ज्यादा मिहनत पड़ती है और अकसर खर्च भी ज्यादा करना पड़ता है। चौबीस परगना (पश्चिमी बंगाल) के श्री एस० सी० पाल का कहना है कि प्रति एकड़ १२० मन गोवर की खाद देना अच्छा है। किसान कम्पोस्ट इसलिए नहीं बनाते हैं कि ज्यादा खर्च और मिहनत करना उनके लिए संभव नहीं है। किंतु श्री जे० आर० घोष कम्पोस्ट तैयार करके काम में लेते हैं। बंबई राज्य के श्री शेम्बेकर १०० गाड़ी कम्पोस्ट बनाते हैं। कान-पुर के श्री राय बिसन मानसिंह का मत है कि कम्पोस्ट गोबर की अपेक्षा अच्छा नहीं है। इनाम या सबसीडी के लालच से ही किसान इस ओर

चुके हैं। इनके बंद होते ही कम्पोस्ट बनाना भी बंद हो जायगा। पश्चिमी बंगाल और आसाम में कई जगह ऐसा ही हुआ है। किंतु बंबई राज्य के लोग उत्साहपूर्वक कम्पोस्ट तैयार करने में जुटे हुए हैं। अनुमान है कि ३० इंच से अधिक वर्षामानवाले प्रदेशों में किसान स्वयं कम्पोस्ट बनाना पसंद करते हैं। सोलापुर के श्री बखारिया का मत है कि मूगफली के छिलकों और गन्ने के पत्तों से बना कम्पोस्ट बहुत अच्छा होता है। इनका विश्वास है कि कम्पोस्ट-खाद बनाने की गति को तेजी देने का काम हाथ में लेने के बाद से सभी राज्यों में कम्पोस्ट बनाने का कार्य बहुत ही कम आगे बढ़ पाया है। सोलापुर के श्री होतगी का कथन है कि कम्पोस्ट बनाने के स्थान पर आठ आना टन कम्पोस्ट प्राप्त होने पर भी उन्हें तीन रुपया टन देना पड़ता है। पंढरपुर के श्री पाठक पांच रुपया टन देते हैं। कानपुर के श्री राय बिसन मानसिंह कम्पोस्ट न बनाकर कचरा सीधा खेतों में डालते हैं। शहरों में बने कम्पोस्ट में कीलें, लोहे के टुकड़े, कांच आदि मिले रहते हैं, जिससे काम करनेवालों और बैलों को जख्म हो जाते हैं। चौबीस परगना के श्री एस० सी० पाल तालाबों की तली में की मिट्टी ले जाकर खेतों में डालना पसंद करते हैं, कारण कि इसका उपज पर अच्छा असर पड़ता है।

अमेरिका की मोनसेंटो केमिकल कंपनी के वैज्ञानिकों ने 'क्रीलियम' नामक एक रासायनिक पदार्थ तैयार किया है। यह रासायनिक पदार्थ जमीन का पोत सुधारने की दृष्टि से कम्पोस्ट आदि जैव खादों की अपेक्षा हजार गुना अधिक गुणकारी है। यह पदार्थ नैसर्गिक जैव तत्व का स्थान बाखूबी ग्रहण कर सकता है। उर्वरा-भूमि और बंजड़ जमीन में नैसर्गिक जैव तत्व प्रचुर मात्रा में मौजूद रहता है किंतु हलकी किस्म की मटियार जमीन में इसका अभाव-सा ही होता है। दावा किया जाता है कि यह पदार्थ डालने से गैर उपजाऊ और हलकी किस्म की जमीन भी अच्छी उपज देने लगती है। खाद्यान्नों की कमीवाले देशों के लिए यह पदार्थ वरदान साबित हो सकता है।

अमेरिका में एक और पदार्थ तैयार किया गया है, जिसे बहुत ही कम मात्रा में पानी में घोलकर घास-भूसे आदि पर छिड़कने से कम्पोस्ट खाद में के पदार्थ बहुत ही जल्दी सड़ जाते हैं। भारत में इसका उपयोग करके प्रयोग

किये जा रहे हैं। इंदौर के 'प्लांट इंडस्ट्री' नामक संस्था के एक अनुसंधान-कर्ता का मत है कि इस पदार्थ को मिलाने से अढ़ाई-तीन मास में ही खाद सड़कर तैयार हो जाती है।

३—विष्टा की खाद (सोन खाद)

मि० फाउलर ने अपनी 'संपत्ति और अपव्यय' (Wealth and Waste) नामक पुस्तक में लिखा है कि मनुष्य का मैला ठीक तरह से ठिकाने लगाया जाय, तो प्रति मनुष्य दो रुपया वार्षिक आय हो सकती है। इसी पुस्तक में एक जगह प्रोफेसर ब्रुलटीनी के ग्रंथ 'अनुपयोगी पदार्थों का उपयोग' (the use of waste material) का एक उद्धरण दिया गया है, जिसमें लिखा है, "दिल्ली में रहनेवाले दो लाख बयासी हजार मनुष्यों के मल से प्राप्त नोषजन से कम-से-कम दस हजार और अधिक-से-अधिक ९५ हजार एकड़ जमीन में पर्याप्त खाद दी जा सकती है।"

मनुष्य और पशु की पाचन-क्रिया एक-सी ही है। पूर्ण बाढ़ को पहुंचे हुए मनुष्य को भोजन में जितना नोषजन, फासफरिक एसिड और पोटैश मिलता है, वह सब-का-सब मल-मूत्र के रूप में शरीर से बाहर निकल आता है। भारत में इससे खाद बनाने की ओर बहुत ही कम ध्यान दिया जाता है

पूर्ण बाढ़ को पहुंचा हुआ एक व्यक्ति एक वर्ष में छः सेर नोषजन, साढ़े तीन सेर फासफरिक एसिड और अढ़ाई सेर पोटैश शरीर से बाहर फेंकता है। अनुमान लगाया गया है कि मल-मूत्र से खाद तैयार न करनेवाला पांच लाख आबादी का एक शहर प्रतिदिन २३६०० रुपयों का अमोनिया, १००० रुपये की कीमत का फासफरिक एसिड, १४६० रुपये के मूल्य का सोडियम क्लोराइड (नमक), २५०० रुपयों का पोटैश, १९०० रुपयों का चूना-मैगनेशियम और ५८० रुपये के मूल्य का सलफुरिक एसिड नष्ट करता है। इस प्रकार झूठी धार्मिक धारणाओं और विचारों के कारण कितनी अमूल्य निधि धूल में मिला दी जाती है। मि० डब्ल्यू० राबर्टसन का मत है कि भारत में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन लगभग तीन रुपया मूल्य के वनस्पति-पोषक-तत्व नष्ट होते हैं। यदि मल-मूत्र को खाद की तरह काम में लाया जाय तो एक अरब से भी कुछ अधिक रुपयों की बचत हो सकती है।

चीन में ताजी विष्ठा खेतों में डाली जाती है। फ्रांस में विष्टा को हौजों में सड़ा लेने के बाद खाद की तरह काम में लेते हैं। उत्तम रीति तो यह है कि पाखाने साफ करते समय ही महीन सूखी मिट्टी या राख मिलाकर बंद डब्बों में भरकर हटाया जाय। कहीं-कहीं ताजी विष्टा को उसके वास्तविक रूप में ही हटाकर कृत्रिम उपायों से सुखा लिया जाता है, ताकि यूरिया (urea) में का अमोनिया नष्ट न होने पाये। कुछ स्थानों पर पाखाने ही ऐसे बनाये जाते हैं कि मल धुलकर हौज में एकत्रित होता रहता है। यह पानी खेतों में सींचा जाता है। इस पानी के प्रति एक लाख भाग में दो प्रतिशत से कुछ अधिक नोषजन रहता है। यह खाद उसी जमीन की फसलों को सींची जाती है, जिसमें पानी कुछ तेज गति से जमीन के अंदर उतर जाता है।

'सिवेज' में अत्यधिक पानी में बहुत थोड़ी मात्रा में मनुष्य का मल मिला रहता है। प्रति मनुष्य प्रतिदिन २५ पौंड 'सिवेज' प्राप्त हो जाता है। इसमें प्रति गैलन लगभग ७ ग्रेन नोषजन, ३ ग्रेन फासफरिक एसिड और ४ ग्रेन पोटैश रहता है। इस प्रकार प्रति मनुष्य प्रतिवर्ष ४५ टन पानी में ४ पौंड नोषजन, २ पौंड फासफरिक एसिड और २$\frac{1}{2}$ पौंड पोटैश प्राप्त होता है। इसपर से अनुमान लगाया जा सकता है कि देश का कितना अधिक, बहुमूल्य खाद बेकार खो दिया जाता है। किंतु ये उपयोगी पदार्थ बहुत अधिक पानी में घुले-मिले रहते हैं। इतने अधिक पानी का खाद की तरह उपयोग करना असंभव-सा ही है और इस दृष्टि से ऐसा करना लाभ-दायक भी नहीं है। नगरपालिकाएं इस पानी को सिंचाई के लिए उपलब्ध करके अवश्य ही फायदा उठा सकती हैं। रेतीली और बेकार जमींनों में इस पानी से सिंचाई करके साग-भाजी की फसलें ली जा सकती हैं। इस पानी को सींचने से पैदावार भी ज्यादा आती है।

सिवेज (sewage) को सुखाकर 'सिवेज स्लज', (sewage sludge) नामक पदार्थ प्राप्त किया जाता है। इसमें पौधों के भोज्य पदार्थ कुछ अधिक मात्रा में मौजूद रहते हैं। सिवेज में कुछ अन्य पदार्थ मिलाकर पक्के हौजों में भरकर पड़ा रहने देते हैं, जिससे जड़ पदार्थ धीरे-धीरे तली में जमते रहते हैं। ऐसा करने पर भी पानी में घुले हुए नोषजन का एक

बड़ा भाग प्राप्त नहीं किया जा सकता है। पदार्थों के तली में जम जाने के बाद बिना हिलाये पानी धीमी गति से निकाल दिया जाता है। हौज की तली में जमे हुए पदार्थ का खाद के रूप में मूल्य कई बातों पर निर्भर करता है। अनुसंधानकर्ताओं का अनुमान है कि लगभग एक करोड़ गैलन सिवेज से लगभग साढ़े चार टन स्लज प्राप्त होता है, जिसमें प्रतिशत २$\frac{1}{2}$ नोषजन और ३$\frac{1}{2}$ फासफरिक एसिड रहता है। ये दोनों ही पदार्थ अति शीघ्र पानी में घुल जाने की अवस्था में ही होते हैं। इसलिए इसकी कीमत भी ज्यादा आती है।

पाश्चात्य देशों में 'सिवेज स्लज' बनाया जाता है, जो कहीं-कहीं 'नेटिव ग्वानों' के नाम से बेचा जाता है। किंतु इसमें वनस्पति पोषक पदार्थ इतनी कम मात्रा में होते हैं कि खाद के रूप में यह लगभग बेकार-सा ही होता है।

सभी प्रकार के भोज्य पदार्थ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जमीन से ही प्राप्त किये जाते हैं। प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये की कीमत के वनस्पति पोषक पदार्थ पौधों और प्राणियों द्वारा जमीन में से ग्रहण किये जाते हैं जिससे जमीन के भंडार में इतनी कमी हो जाती है।

'सिवेज डिसपोजल कमीशन' के केमिस्ट डाक्टर मैकगोवेन का मत है कि एक पुरुष के एक दिन के मूत्र में नोषजन १६ ग्राम, स्त्री के एक दिन के मूत्र में १३ ग्राम नोषजन, और बालक-बालिका के मूत्र में ८ ग्राम रहता है और विष्ठा में लगभग २ ग्राम। इस प्रकार एक लाख आबादी के शहर से प्रतिदिन मूत्र से १·२ टन और मल से ०·२ टन नोषजन मिल सकता है। प्रोफेसर नाइट का मत है कि प्रति मनुष्य प्रति वर्ष १० पौंड नोषजन प्राप्त हो सकता है।

विष्टा से खाद बनाने की रीति

फ्रांस के कृषि-विशेषज्ञ श्री फेमिलमेन का कथन है कि अठारह फुट लंबा, अठारह फुट चौड़ा और एक फुट गहरा गढ़ा बनाया जाय, जिसकी तली में ईंटें जमा दी जायं। ईंटों पर एक इंच मोटी तह कूड़ा-कचरा, राख, सूखी मिट्टी आदि की डाली जाय। इस पर चार इंच मोटी

तह विष्टा की दी जाय। विष्टा पर एक इंच मोटी तह कचरा-कूड़ा, राख, सूखी मिट्टी आदि की फैला दिया जाय। गढ़ा पूरा भरने तक तह-पर-तह दी जाती रहे। भर जाने पर २४ घंटे तक खुला रखने के बाद सूखी मिट्टी डालकर गढ़ा बंद कर दिया जाय। खाद को गीला बनाये रखने के लिए कभी-कभी पानी छिड़का जाता रहे। लगभग छह मास में उत्तम खाद तैयार हो जायगी।

चीन मे विष्टा में तीन भाग चूना मिलाकर उपले-से बना लिये जाते हैं, जिससे दुर्गंध बिल्कुल ही नहीं निकलती है। ये उपले बेचे भी जाते हैं। जापान में एक विशेष प्रकार के बरतन में मल-मूत्र को एकत्रित करके पानी मिलाकर खूब चलाते और तब धूप से सुखा लेते है। लगभग चार सप्ताह बाद यह खाद के काम में लिया जाता है।

फ्रांस में मल-मूत्र को एकत्रित करके उसमें गंधक की तेजाब मिलाई जाती है, जिससे बदबू उड़ जाती है। इसे धूप में खुला रखकर सुखा लिया जाता है। इस सूखे चूर्ण को 'पुडरेट' कहते है। कहीं-कहीं पाखानों का संबंध गदे नालों से नहीं जोड़ा गया है। गढ़ों में मल-मूत्र एकत्रित करके बेचा जाता है। इंगलैण्ड में मल-मूत्र को सुखाकर, दुर्गंध निकल जाने के बाद, ग्वानों मिलाकर काम में लाते हैं। पाखानों का संबंध गंदे नालों से जोड़ दिया गया है और इन गंदे नालों का पानी तरकारी की फसलों को सींचा जाता है।

विश्लेषण से पाया गया है कि शाकाहारी मनुष्यों के मल-मूत्र की अपेक्षा मांसाहारी मनुष्यों के मल-मूत्र में वनस्पति पोषक तत्व अधिक मात्रा में रहते हैं। सौ भाग विष्टा में ७५ भाग पानी और २५ भाग वनस्पति पोषक तत्व मौजूद रहते हैं। पचीस भाग वनस्पति पोषक तत्वों में लगभग १½ भाग नोषजन और एक भाग फासफरिक एसिड पाया जाता है। ये अत्यंत ही उपयोगी पदार्थ हैं। विष्टा की अपेक्षा मूत्र ज्यादा कीमती खाद है। इसमें नोषजन और फासफरिक एसिड अधिक मात्रा में रहता है। एक मनुष्य चौबीस घंटों में लगभग १¼ पौंड विष्ठा त्याग करता है। एक साल में ९० पौंड विष्ठा होती है, जिससे २३ पौंड वनस्पति पोषक तत्व प्राप्त होते हैं।

उत्तर प्रदेश के दुआबा क्षेत्र में काछी लोग साग-भाजी पैदा करके बेचने का धंधा करते हैं। ये लोग अपने धंधे में कुशल और परिश्रमी हैं। एक साल में तीन फसलें बोई जाती हैं। गरमी में मक्का बोने के बाद वर्षा में इसी जमीन में आलू की फसल ली जाती है और आलू निकालने के बाद शीतकाल में तमाखू बोई जाती है। प्रति वर्ष एक ही खेत में लगातार तीन फसलें ली जाने के कारण खेत में के वनस्पति पोषक तत्व अत्यधिक मात्रा में खर्च हो जाते हैं। इस कमी को पूरा करने के लिए प्रति वर्ष बहुत अधिक खाद देनी पड़ती है।

आवश्यकतानुसार ग्राम या नगर को एक से अधिक भागों में विभाजित करके प्रत्येक भाग के लिए आवश्यक संख्या में मेहतर नियुक्त कर दिये जाते हैं। ये एक चौधरी या मेठ की निगरानी में काम करते हैं। मेहतर अपने-अपने महल्लों के पाखाने और सड़कें साफ करके विष्टा कचरा आदि एक निश्चित स्थान पर गढ़ों में एकत्रित करते हैं। आलू बोने का समय आने पर काछी लोग इस खाद को खरीद लेते हैं। कुछ स्थानों पर मेहतर ही अपना खाद तैयार करने-बेचने का धंधा करते हैं। उत्तर प्रदेश में इस खाद की बहुत ज्यादा मांग है।

कानपुर के पास के भू-भाग में मेहतर लोग निश्चित किये गये स्थान पर नालियों में खाद जमा करते हैं। एक-एक फुट के अंतर पर एक फुट चौड़ी और नौ इंच गहरी खाइयां या नालियां बनाई जाती हैं। पाखानों से हटाई गई विष्टा इन नालियों में भर कर सूखी मिट्टी या राख से इन्हें बंद कर दिया जाता है। यही जमीन तब किसानों को वार्षिक लगान पर फसलें बोने के लिए दी जाती है। वर्षा काल में पांच फुट लंबे, पांच फुट चौड़े और पांच फुट गहरे गढ़ों में विष्टा भरी जाती है और सूखी मिट्टी या राख से गढ़ों का मुह बंद कर दिया जाता है। वर्षा के अलावा अन्य मौसम में नालियों में ही विष्टा डाली जाती है। अनुमान लगाया गया है कि गांव से डेढ़ मील की दूरी पर अवस्थित भूमि में खाद डालने के लिए तीन-चार गाड़ियां काफी हैं। एक गाड़ी प्रतिदिन तीन बार खाद पहुंचा सकती है। इस प्रकार एक मास में २७० गाड़ी विष्ठा हटाई जा सकती है। इसी काम के लिए बनाई गई गाड़ी में लगभग आठ घनफुट विष्टा आ जाती

है। इस गाड़ी और मजदूरी के लिए प्रति एकड़ लगभग १०० रुपया खर्च बैठता है। यह जमीन बहुत ऊंचे लगान पर उठाई जा सकती है या खाद बचा कर काफी मुनाफा कमाया जा सकता है। यह खाद सिंचाई की फसलों को ही अधिक लाभ पहुंचा सकती है। इस खाद से शहर के नजदीक की जमीनों में प्रति एकड़ काफी मुनाफा मिल सकता है। साग-सब्जी की खेती करनेवालों में इस खाद की बहुत मांग है। पंजाब के कई नगरों में इस रीति का अवलंबन किया जाता रहा है।

फिरोजपुर में खेतों में लंबी नालियां खुदवा ली जाती हैं। घास-फूस की टट्टियों से आड़ करके लोगों के पाखाने बैठने की व्यवस्था कर दी जाती है। आदमी के पाखाना फिर कर उठ आने पर इसी काम के लिए नियुक्त मेहतर उसपर सूखी मिट्टी या राख डाल देता है। एक नाली भर जाने पर दूसरी नाली पर टट्टे लगा दिये जाते हैं। ये नालियां किसानों के खेतों में ही बनाई जाती हैं। मुलतान में १५ फुट चौड़ी और आवश्यकतानुसार लंबी नाली में विष्टा की चार-पांच इंच मोटी तह बिछाकर उसे सूखी राख या मिट्टी से ढक देते हैं। इस तरह नाली भर जाने तक तह-पर-तह देते चले जाते हैं और तब कुछ दिनों तक इसे सूखने देते है। सूख जाने पर इसको हटाकर धूप में अच्छी तरह सुखा लेते हैं। खूब अच्छी तरह सूखा हुआ पदार्थ ही खाद की तरह काम में लिया जाता है।

पूना की ओर शहरों के कचरे-कूड़े को जलाकर राख बना ली जाती है। चौबीस फुट लंबे, चौबीस फुट चौड़े और एक फुट गहरे पक्के हौज बना लिये जाते हैं। हौज की तली में सूखी राख की एक इंच मोटी तह डाली जाती है, जिसपर चार इंच मोटी तह विष्टा की दी जाती है। इसपर एक इंच मोटी तह राख की फैलाकर उसपर चार इंच मोटी तह विष्टा की फैला दी जाती है। वर्षा के अलावा इसे चौबीस घंटे तक खुला रहने दिया जाता है। इसके बाद फावड़ों से राख और विष्टा को अच्छी तरह मिला दिया जाता है। इसपर फिर एक इंच मोटी तह राख की दी जाती है। तीन दिन बाद खाद को फावड़ों से काटकर अच्छी तरह से उलट-पुलट करके मिला देते हैं। वर्षा-काल में यह क्रिया दस दिन बाद की जाती है। इसके बाद गढ़े से निकालकर खाद सुखा लिया जाता है। अनुभव से पाया गया

है कि-विष्टा में समान भाग राख मिलाने से दुर्गंध नष्ट हो जाती है। दुर्गंध नामशेष करने के लिए राख मिलाना अनिवार्य है। वैसे तो सूखी मिट्टी भी मिलाई जा सकती है। इसे 'पुडरेट' कहते हैं। पुडरेट खाद देने से गन्ने में शक्कर का अंश बहुत हीं बढ़ जाता है। इस खाद से गन्ना और मक्का की उपज बहुत ज्यादा बढ़ जाती है।

पूना में तैयार चिये गये पुडरेट में १५ प्रतिशत से २० तक तरी और ०·९ से १·१ तक नोषजन रहता है। कानपुर की ओर बनाये गये पुडरेट में मिट्टी ज्यादा मिली रहती है, जिससे इसमें ३ से ६ प्रतिशत तरी और ०·४ से ०·७ प्रतिशत तक नोषजन होता है। फासफरिक एसिड की प्रतिशत मात्रा विष्टा में मिलाई गई राख की मात्रा पर निर्भर करती है। मध्य प्रदेश के काछी लोग दस फुट लंबे, चार फुट चौड़े, और चार फुट गहरे गढ़े बनाते हैं। इन गढ़ों में एक तह विष्टा की और एक तह मिट्टी की, गढ़ा भरने तक, बारी-बारी से दी जाती है। गंदे नालों का पानी भी गढ़ों में पहुंचाया जाता है, जिससे खाद जल्दी सड़ती है। छः महीने में खाद सड़कर काम में लेने लायक हो जाती है।

चार सौ घनफुट विष्टा में १४० घनफुट कूड़ा-कचरा, भूसा मिलाकर गढ़े में भर दिया जाता है। इससे २१८ घनफुट (६२०० पौड) अच्छे दर्जे की पुडरेट खाद बन जाती है। इसका द्रव भाग गढ़े की तली से नीचे की जमीन में उतर जाता है। काछी लोग प्रति एकड़ ४३ टन खाद देते है। पूना में इतनी खाद गन्ने को दी जाती है। मेरठ में प्रति एकड़ दौ सौ टन खाद दी जाती है, जो बहुत ही ज्यादा है।

इलाहाबाद में छिछली नालियों में विष्टा डालकर खाद बनाते हैं। नौ वर्गगज जमीन में सत्तर गैलन विष्टा डाली जाती है, जो प्रति एकड़ १६८ टन के बराबर होती है। किंतु यह खाद हर दसवें वर्ष ही दी जानी चाहिए। घास-चारा पैदा करनेवाली जमीन में १४० गाड़ी विष्टा (१ गाड़ी =७० गैलन) और ७० गाड़ी कूड़ा-कचरा (१ गाड़ी=१ टन) मिलाकर हर रोज खेत में फैलाया जाता है। इस रीति से एक वर्ष में दो सौ एकड़ जमीन में खाद दी जाती है। प्रति दसवें वर्ष खाद दी जाती है जो प्रति

एकड़ प्रति वर्ष १७ टन के लगभग पड़ती है। विष्टा की खाद देने से घास-चारे की पैदावार बहुत अधिक आती है।

नगरपालिका द्वारा विष्टा की खाद बनाना—(१) जिस जमीन पर विष्टा की खाद बनाई जाने को हो, वह कुछ ऊंचाई पर होनी चाहिए, ताकि वर्षा का पानी बहकर गढ़े में न जा सके।

(२) एक हजार जनसंख्या की विष्टा को नालियों में भरने के लिए एक एकड़ जमीन काफी है।

(३) जनसंख्या के मान से, जितनी जमीन की आवश्यकता हो, उसे तीन समान भागों में बांट लिया जाय। प्रत्येक भाग में एक वर्ष तक विष्टा भरी जा सके, इतनी नालियां खोद ली जायं। एक भाग में खाद भरी जाती रहे और शेष दो भागों में फसल बोई जाय। ऐसा प्रबंध करना चाहिए कि जिस जमीन में प्रथम वर्ष खाद भरी गई हो, उसमें चौथे वर्ष फिर खाद भरी जानी चाहिए।

(४) नालियों में भरी गई विष्टा तीन-चार मास तक ऐसी ही पड़ी रहने देना चाहिए।

(५) पाटा-सरावन फिराकर जमीन को समतल करने के बाद ही नालियां खोदी जायं। जमीन की पूरी लंबाई भर लंबी नालियां ही बनाई जायं। नालियां एक फुट गहरी और डेढ़ फुट चौड़ी हों। दो नालियों में एक फुट का अंतर रखा जाय। एक नाली पूरी भर जाने को हो, तभी दूसरी नाली खोदी जाय।

(६) विष्टा पर सूखी मिट्टी या राख डालना अनिवार्य है। नाली भर जाने पर मल को सूखी मिट्टी से अच्छी तरह से ढक दिया जाय।

(७) वर्षा में नालियों में विष्टा न डाली जाय। पांच फुट लंबे, पांच फुट चौड़े और पांच फुट गहरे गढ़ों में ही खाद भरा जाय। सूखी मिट्टी न मिलने पर राख का उपयोग किया जाय।

(८) आम, नारियल, नारंगी, नीबू, जामफल, केला आदि फल-झाड़ों को स्थायी स्थान पर लगाने के लिए जो गढ़े खोदे जाते हैं, उनमें विष्टा

की खाद भरकर एक साल तक सड़ने दिया जाय। इसके बाद गढ़े में पौधे लगाये जायं।

देहातों में विष्टा की खाद बनाना—देहातों में पाखाने बनाने का रिवाज नहीं है। लोग गांव के आस-पास चारों तरफ पाखाना फिरते हैं। गांव के पास लंबी नालियां या गढ़े बनाकर लोगों के पाखाने फिरने का इंत-जाम कर दिया जाय, तो गंदगी सहज ही दूर की जा सकती है। उस स्थान को घास-फूस या बांस के टट्टों की आड़ लगाई जा सकती है। टट्टी फिरने-वाले के उठ जाने पर मेहतर विष्टा पर सूखी मिट्टी या राख डाल दिया करें। एक गढ़ा या नाली भर जाने पर दूसरी बना ली जानी चाहिए। मिट्टी मिली हुई खाद बहुत अच्छी होती है, जो साग-भाजी की फसलों के लिए उत्तम प्रति की प्रमाणित हुई है।

गढ़े में खाद बनाना—बस्ती से बाहर उस दिशा में, जिधर से साल भर तक किसी मौसम में गांव की तरफ हवा न बहती हो, पांच-पांच फुट के अंतर पर तीन गढ़े खोदे जायं। गांव की आबादी के अनुसार छः माह की विष्टा समा जाय, इतने लंबे, चौड़े और गहरे गढ़े खोदे जायं। गढ़ों की दीवारें और तली चूना-ईंट से पक्की बनवा दी जायं। इन गढ़ों में विष्टा गांव की झाड़न-बुहारन का कचरा-कूड़ा, भूसा आदि निरुपयोगी समझे जानेवाले पदार्थ डाले जाते रहें। इसके ऊपर सूखी मिट्टी या राख की चार इंच मोटी तह फैला दी जाय। गंदे नालों व पनालों का पानी और पेशाब भी खाद पर छिड़का जाता रहे, जिससे विष्टा और कचरा आदि जल्दी सड़ जायंगे। गढ़े में डाले गये पदार्थों की अक्सर उलट-पुलट भी करते रहना चाहिए, ताकि सब चीजें ठीक तरह से सड़ जायं। गढ़े के चारों ओर दो-तीन फुट ऊंची मिट्टी की दीवारें बना देने से वर्षा का पानी भीतर प्रवेश नहीं कर सकेगा। गढ़े पर फूस का टट्टर डालकर छाया भी कर दी जानी चाहिए। पूरा भर जाने पर मिट्टी या राख डालकर गढ़े का मुंह बंद कर दिया जाय और दूसरे गढ़े में खाद डालना शुरू कर दिया जाय। तीसरा गढ़ा भरना शुरू कर दिया जाने के बाद पहले गढ़े की खाद निकाल कर काम में ली जाय। पानी छिड़के और पदार्थों को उलट-पुलट किये बगैर खाद ठीक तरह से सड़ेगी नहीं। इसलिए दो महीने के बाद खाद को

अवश्य ही उलट-पुलट कर देना चाहिए। खाद तैयार करने की यह उत्तम रीति है।

कुछ प्रदेशों में विष्टा गढ़ों में डाली तो जाती है; किन्तु गढ़े पर छाया नहीं की जाती है। कचरा-भूसा आदि भी इसी गढ़े में डाले जाते हैं, किन्तु इन्हें सड़ाने के लिए इनपर पानी नहीं छिड़का जाता है। यही कारण है कि खाद सूख जाती है और पदार्थ पूरी तरह सड़ते नही हैं। चमड़े के टुकड़े, कांच, कंकर-पत्थर आदि गढ़े में हरगिज न डाले जाने चाहिए। इससे खाद की उपयोगिता घट जाती है और लोगों के जख्मी हो जाने का भी डर रहता है।

खाद का उपयोग—पुडरेट या विष्टा की खाद या सोनखाद ज्वार को १५ गाड़ी, बाजरा को ३० गाड़ी, गेहूं को ४० गाड़ी, देशी साग-भाजी को ५० गाड़ी, नीबू-केला आदि झाड़ों को ६० गाड़ी, विदेशी तरकारियों को ६० गाड़ी और गन्ना को १०० गाड़ी फी एकड़ दी जाती है। फसल बोने से लगभग एक मास पहले खाद को खेत में फैलाकर जुताई करके मिट्टी में मिला दिया जाना चाहिए, जिससे फसल बोई जाने तक उसमें के भोज्य पदार्थ घुलनशील अवस्था में आ जायंगे। एक फल-झाड़ को एक टोकनी सोनखाद और एक टोकनी भट्टी का चूना मिलाकर दिया जाता है। सोनखाद देने से फल ज्यादा मीठे हो जाते हैं। फल-झाड़ों को बरसात से पहले जड़ें खुली करके ही खाद दी जानी चाहिए। खाद देने के बाद तुरंत ही पानी सींच देना नितांत आवश्यक है। प्रतिवर्ष सोनखाद देते रहने से फल ज्यादा मीठे हो जाते हैं। एक टोकनी खाद पानी में घोलकर भी झाड़ों को सींचा जाता है। ताजी विष्टा भी पानी में घोलकर सींची जा सकती है।

पुडरेट—छोटे-छोटे असंख्य गांवों में, आज भी, मनुष्य की विष्टा को ठिकाने लगाने का प्रश्न एक जटिल समस्या बना हुआ है। गहरे गढ़ों में डालने से मल लगभग एक वर्ष में सड़ पाता है। यदि छिछली नालियों में डाला जाय तो बहुत अधिक जमीन की जरूरत होती है। इसके अलावा जनता के स्वास्थ्य पर भी बुरा असर पड़ता है। बंगलोर-पद्धति में ग्राम की झाड़न-बुहारन—कचरा-कूड़ा और विष्टा को तीन फुट गहरे गढ़ों में

भरकर कम्पोस्ट खाद तैयार की जाती है। इससे कचरा-कूड़ा और विष्टा को ठिकाने लगाने का सवाल सहज ही हल हो जाता है और खाद भी मिल जाती है। किन्तु इस पद्धति का अवलंबन उन्हीं स्थानों में किया जा सकता है, जहां विष्टा और कचरे को नियमित रूप से हटाने का समुचित प्रबंध हो। प्रत्येक ग्राम में, जहाँ छः मास तक की विष्टा और कचरा एकत्रित कर रखने की सुविधा हो, इसे अपनाया जा सकता है।

पकी हुई विष्टा में ५० प्रतिशत नमी और एक प्रतिशत नोषजन मौजूद रहता है। गढ़ों में, जहां हवा का अभाव-सा रहता है, खाद अच्छी सड़ती है, किन्तु खाद में दुर्गंध अवश्य आती है। सूखी मिट्टी, चूना आदि मिलाना लाभदायक ही है।

विष्टा में नमी को सोख लेनेवाले वही पदार्थ मिलाना चाहिए, जो पौधों के भोज्य पदार्थों में रासायनिक सड़न पैदा न करें। कम्पोस्ट बनाने में राख-चूना जैसे पदार्थ मिलाने से नोषजन के अमोनिया रूप में उड़ जाने की संभावना रहती है। मिट्टी मिलाने से जैव तत्व और नोषजन खाद में ही हजम हो जाते हैं। लकड़ी का बुरादा या सूखे पत्तों का महीन चूर्ण मिलाने से विष्टा बहुत जल्द ४०-५० प्रतिशत नमीयुत पुडरेट में बदल जाती है। इसे बाद में धूप में सुखा लिया जाता है, जिसमें २ से ३ प्रतिशत तक नोषजन रहता है। यह तुरंत ही खेत में डाला जा सकता है।

आवश्यक लंबाई-चौड़ाई की एक फुट गहरी नालियों की तली में नमी सोखनेवाले पदार्थों की पतली तह देकर उसपर विष्टा फैला दी जाती हैं। इसपर फिर कचरा-कूड़ा आदि नमी सोखनेवाले पदार्थ बिछा दिये जाते हैं। रेक या दंताली से सब पदार्थों को अच्छी तरह से ऊपर-नीचे करके पूरी तरह से मिला लिया जाता है। पदार्थों के सूखे हुए से नजर आने पर ढेर लगा दिया जाता है। सूख जाने पर इसे हटाकर खेत में फैला देते हैं या गोदाम पर रख दिया जाता है।

इस रीति का अवलंबन करने से देहातों की गंदगी मिटाई जा सकती है।

४—पेशाब की खाद

पहले लिखा जा चुका है कि भारत की जमीनों में नोषजन की अत्यंत कमी है, जिसकी वजह से पैदावार कम आती है और जमीन की उर्वरा-शक्ति भी बहुत ही घट गई है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि काफी मात्रा में खाद और उर्वरक देकर किये गये प्रयोगों में पैदावार बहुत अधिक बढ़ गई है। संतुलित भोजन देने से फसल की बाढ़ अच्छी होती है और पैदावार भी ज्यादा आती है। गेहूं पर किये गये प्रयोगों से पाया गया कि एक पौंड नोषजन देने से दस पौड गेहूं ज्यादा आता है और धान की उपज २० से ७० प्रतिशत तक बढ़ जाती है। किन्तु भारत में नोषजनीय खाद की अत्यंत कमी है, जिससे प्रति एकड़ पैदावार बढ़ाने के कार्य में काफी रुकावट पड़ती है। विशेषज्ञों का अनुमान है कि इस देश के लिए प्रतिवर्ष बीस लाख टन नोषजनीय खाद की आवश्यकता है। यदि देश में प्राप्त साधनों का पूरा-पूरा उपयोग किया जाय, तो इस कमी के एक बड़े अंश की पूर्ति सहज ही की जा सकती है।

खेती योग्य जमीनों की उर्वरा शक्ति बनाये रखने के लिए वंश-परंपरा से प्राप्त साधन—खेतों में बोई फसलों के निरुपयोगी अवशेष और प्राणियों का मल-मूत्र, वर्तमान समय में भी, मुख्य स्थान प्राप्त किये हुए हैं।

गोबर की खाद बनाने के काम में आनेवाले पदार्थों में के वनस्पति-पोषक-तत्वों के परिमाण और गुण-धर्म की दृष्टि से पेशाब का अत्यधिक महत्व है। पेशाब में वनस्पति की वृद्धि में उपयोगी पड़नेवाले मुख्य-मुख्य भोज्य पदार्थ और अति ही न्यून मात्रा में लगनेवाले अन्य तत्व विद्यमान रहते हैं। मल में पशु के भोजन के अवशेष एक ऐसी अवस्था में रहते हैं कि रासायनिक क्रियाओं और कीटाणुओं के क्रिया-कलापों द्वारा इनको जड़ों द्वारा ग्रहण किये जाने योग्य अवस्था में परिवर्तित करना बहुत ही कठिन होता है और ये सरलतापूर्वक पौधों को प्राप्त भी नहीं हो सकते हैं। पेशाब में ये पदार्थ घुले-मिले रहते हैं और पशु के शरीर के अंदर ही तोड़-फोड़कर इन्हें सरलता से पानी में घुल जानेवाली उस अवस्था को पहुँचा दिया जाता है, जिसे पौधे सरलता से तुरंत ही ग्रहण कर लेते हैं। संसार

के भिन्न-भिन्न देशों में किये गये अनेकानेक प्रयोगों द्वारा यह बात भली प्रकार प्रमाणित हो चुकी है कि एक मात्र गोबर की खाद देने से पैदावार में नहीं के बराबर ही वृद्धि होती है। लगातार तीन वर्षों तक किये गये प्रयोगों से पाया गया कि फसल गोबर की खाद में के नोषजन का १/३० अंश ही प्रयोग के प्रथम वर्ष में ग्रहण कर सकी और तीन वर्षों में आधा नोषजन ही ग्रहण किया जा सका। गोबर की खाद में पेशाब मिलाकर किये गये प्रयोगों से पता चला कि बिना खाद दिये पैदा की गई फसल की उपज की अपेक्षा गोबर और पेशाब मिलाकर तैयार की गई खाद देने से दूनी उपज प्राप्त हुई और फसल ने खाद में के नोषजन का ६/७ भाग प्रथम वर्ष में ही ग्रहण कर लिया। इन प्रयोगों से यह बात निश्चित हो गई कि मूत्र में के नोषजन के कारण ही पैदावार में वृद्धि हुई है। रसायनशाला में किये गये अनुसंधानों से ज्ञात हुआ कि गोबर में का नोषजन आठ सप्ताह तक नत्रेत में परिवर्तित नहीं होता है, किन्तु इस अवधि में पेशाब में का नोषजन पूरी तरह से नत्रेत में बदल जाता है। इन प्रयोगों ने यह भी सिद्ध कर दिया है कि पेशाब एक ऊंचे दरजे की खाद है।

मिश्रखाद (कम्पोस्ट) और गोबर की खाद में पेशाब मिलाने पर जोर इसलिए दिया जाता है कि इससे खाद की उपयोगिता काफी बढ़ जाती है। किन्तु प्रयोगों से पता चला है कि कम्पोस्ट और गोबर की खाद में पेशाब मिलाने से जैव पदार्थों की सड़ने की क्रिया में नोषजन का एक बड़ा अंश नष्ट हो जाता है। कम्पोस्ट खाद के विशेषज्ञ श्री आचार्य का मत है कि इस क्रिया में ४० से ६० प्रतिशत नोषजन उड़ जाता है। खाद के ढेर को दबाकर रखने पर भी २८ से ५३ प्रतिशत तक नोषजन बाहर निकल जाता है।

कम्पोस्ट और गोबर की खाद में के पदार्थों के सड़ने की क्रिया द्वारा नोषजन एक ऐसी अवस्था में परिवर्तित हो जाता है, जिस रूप में पौधे उसे ग्रहण ही नहीं कर सकते हैं। कुछ विशेषज्ञों का मत है कि भूसा आदि को सड़ाने के लिए खाद में अमोनियम सलफेट, यूरिया, सोडियम नाइट्रेट-जैसे नोषजनीय लवण मिलाने से जैव नोषजन की मात्रा काफी बढ़ जाती है। भूसा आदि पदार्थों का प्रतिशत ०·७ से ०·७५ लवण मिलाया जाना ही काफी है। इससे अधिक मिलाने से यह सब नष्ट हो जाता है। कम्पोस्ट

और गोबर की खाद के सड़ने याने नत्रेत या नोषेत में परिवर्तित होने की क्रिया बहुत ही धीमी गति से होती है। श्री इदवानी का मत है कि कंपोस्ट और गोबर की खाद बहुत ही धीमी गति से असर करती हैं और इनका फसल की पैदावार पर तुरंत ही किसी प्रकार का असर नहीं पड़ता है।

उक्त सब आधारों पर यह माना जा सकता है कि कंपोस्ट और गोबर की खाद में पेशाब मिलाने से पेशाब का खाद के रूप में मूल्य बहुत ही घट जाता है। अतएव यह आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य हो जाता है, कि पेशाब की खाद तैयार करने का दूसरा ही तरीका अपनाया जाना चाहिए, ताकि पेशाब में के पानी में घुलनशील नोषजनीय यौगिकों से पूरा-पूरा लाभ प्राप्त किया जा सके। इसे कचरा-कूड़ा और गोबर से अलग ही तैयार किया जाय। इस लक्ष्य को सामने रखकर पेशाब को सोखकर उसमें के उपयोगी पदार्थों को सुरक्षित रखने की क्षमता रखनेवाले पदार्थों का पता लगाने के लिए कई प्रयोग किये गये हैं।

मिट्टी—मिट्टी एक बार में अपने वजन का आधा पेशाब सोख लेती है, जिसमें ०·३ प्रतिशत नोषजन होता है। पेशाब से भीगी हुई मिट्टी को सुखाकर फिर से काम में लिया जा सकता है। किन्तु गीली हो जाने पर मिट्टी के ढेले बंध जाते हैं। इन्हें तोड़कर महीन करना पड़ता है। यह उतनी उपयुक्त भी नहीं पाई गई है। इसे सुखाकर तुरंत ही खेत में डाल देना लाभदायक है।

बालू या रेती—यह मिट्टी से कुछ कम मात्रा में पेशाब सोखती है। तीन बार पेशाब में तर करके सुखाई हुई बालू में प्रतिशत ०·९ नोषजन रहता है। किन्तु इस पदार्थ को लाने-ले-जाने में खर्च ज्यादा बैठता है।

राख—चूल्हा आदि से या कचरा-कूड़ा आदि बेकार पदार्थों को जलाकर राख प्राप्त की जा सकती है। यह अपने वजन के बराबर से कुछ ज्यादा मात्रा में मूत्र सोख लेती है। इसे हर बार सुखाकर फिर पेशाब सोखने के काम में लिया जा सकता है। राख में पोटाश और फासफेट भी रहता है। अतएव पेशाब सोखी हुई राख का खाद की दृष्टि से अत्यधिक महत्व है, कारण कि यह एक ऊंचे दरजे की परिपूर्ण खाद का रूप ग्रहण कर लेती है। देहातों में उपले जलाये जाते हैं। जलाने से गोबर में का नोषजन

तो नष्ट हो जाता है, किन्तु राख में खनिज तत्व बच रहते हैं। इसलिए इसे पेशाब सोखने के काम में अवश्य ही उपयोग में लाना चाहिए।

कोयले का चूरा—कोयला तैयार करने की भट्टियों पर या शहरों और कसबों में कोयला बेचनेवालों से चूरा प्राप्त किया जा सकता है। यह अपने वजन से दूनी पेशाब सोख सकता है। एक बार भिगोया हुआ चूरा सुखाकर फिर दूसरी बार काम में लिया जा सकता है। इस तरह यह कई बार काम में लिया जा सकता है।

लकड़ी का बुरादा—यह लकड़ी चीरने के कारखानों में मिल जाता है। किन्तु बुरादा सब जगह मिल नहीं सकता है। एक बार भिगोया हुआ बुरादा सुखाकर दुबारा काम में लिया जा सकता है। इस प्रकार एक ही बार प्राप्त किये गये बुरादे को कई बार पेशाब में भिगोकर उत्तम खाद तैयार की जा सकती है। बुरादा द्वारा सोख लिये गये पेशाब में का नोषजन बिल्कुल ही नष्ट नहीं होता है। यह अपने वजन से पांच गुनी पेशाब सोख लेता है। एक बार भिगोये गये बुरादे में चार प्रतिशत नोषजन पाया जाता है।

सूखे पत्ते का महीन चूरा—यह पदार्थ अपने वजन का तीन गुना मूत्र सोख लेता है। इन्हें सुखाकर तुरंत ही काम में ले लेना चाहिए। सुखाकर इसे दुबारा काम में ले सकते हैं

सूखे गोबर का चूरा--सुखे हुए गोबर का बारीक चूरा करके काम में लिया जा सकता है। पेशाब सोखा हुआ गोबर एक उत्तम प्रकार की खाद का काम देता है।

धान का पयाल—धान बोये जानेवाले प्रदेशों में ही इसका उपयोग किया जा सकता है। गंडासे से छोटे ट्कड़े करके ही काम में लिया जाना चाहिए। इसकी राख भी उपयोग में ली जा सकती है।

चाय बनाने के बाद फेंकी जानेवाली बेकार पत्ती अपने वजन से दूनी पेशाब सोख लेती है। रद्दी कागज के छोटें-छोटे टुकड़े भी इस काम में लिये जा सकते हैं। पेशाब सोखा हुआ सुपरफासफेट खाद के काम में लाना अधिक लाभदायक पाया गया है। किन्तु एक से अधिक बार इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है।

जिन पदार्थों में पेशाब सोखी जाती है, उन्हें तुरंत ही धूप में सुखा लेना चाहिए। इन पदार्थों को धीरे-धीरे सूखने देने से नोषजन नष्ट हो जाता है। लकड़ी का बुरादा और सुपरफासफेट ही ऐसे पदार्थ हैं, जिनमें सोखे गये पेशाब का नोषजन नष्ट नहीं हो पाता है। पेशाब में का यूरिया अमोनियम कार्बोनेट के रूप में परिवर्तित होकर हवा में उड़ जाता है। कुछ धातुओं के लवणों द्वारा यह बरबादी रोकी जा सकती है। जांच-पड़ताल से पाया गया है कि मिट्टी, राख, और कोयले के चूरे में १५ प्रतिशत लकड़ी का बुरादा खूब अच्छी तरह से मिला दिया जाय तो नोषजन नष्ट नहीं हो पाता है। पत्तों के चूरे या रद्दी कागज के टुकड़ों में बुरादा मिलाने पर भी यह नाश रोका नहीं जा सकता है।

मनुष्य के पेशाब की खाद देने से फसल की पैदावार १३१ से १४० प्रतिशत तक बढ़ जाती है। परंतु पेशाब को संग्रहीत करके उसमें के नोषजन को सुरक्षित रखने की रीतियों को व्यवहार में लाने में जो दिक्कतें आती हैं, उनके कारण, किसी सरल व्यावहारिक रीति का पता लगाये बिना, पेशाब की खाद बनाने के कार्य में प्रगति की जानी संभव नहीं है।

पशुओं के बिछौले—बिछावन में घास-भूसा के साथ-ही-साथ लकड़ी का बुरादा भी काम में लिया जाता रहे, तो नोषजन को सरलता से सुरक्षित रखा जा सकता है। यदि पशुओं के नीचे बिछाये गये घास-भूसा, पत्ते छिलके आदि दूसरे रोज सवेरे ही गोठे में से हटाकर धूप में सुखा लेने के बाद तुरंत ही खाद के काम में लिये जायं, तो नोषजन का अत्यधिक अंश बचा लिया जा सकता है। इन पदार्थों को खाद के ढेर पर न डालना ही लाभदायक है। पक्के हौज में एकत्रित किया गया पेशाब, लकड़ी का बुरादा, मिट्टी, कोयले का चूरा आदि पदार्थों के ढेर पर प्रतिदिन छिड़ककर इन पदार्थों को तुरंत ही धूप में सुखा लेना अत्यधिक लाभदायक है। इन पदार्थों को, पेशाब से खूब तर-ब-तर करके दिनभर धूप में सुखा लिया जाय और दूसरे दिन फिर पेशाब से तर-ब-तर कर दिया जाय। कुछ रासायनिक पदाथ ऐसे हैं जिन्हें पेशाब के हौज में थोड़ी-सी मात्रा में डाल देने से नोषजन सुरक्षित रहता है। किन्तु देहातों में किसान इनका उपयोग नहीं कर सकते हैं। थोड़ा-सा गंधकाम्ल (सलफुरिक एसिड) डाल देने के बाद पेशाब

में लकड़ी का बुरादा, राख, मिट्टी, कोयला आदि गीले किये जायं, तो इन्हें खेत में डालने के लिए कुछ दिनों तक रख छोड़ने पर भी इनमें का नोषजन नष्ट नहीं होता है। दो-तीन गुना पानी मिलाकर ही पेशाब को खेत में छिड़कना चाहिए। बिना पानी मिली पेशाब छिड़कने से फसल के जल जाने की संभावना रहती है।

पेशाब की खाद कैसे बनायें

पेशाब बहुत ही मूल्यवान खाद है। पशुओं के मूत्र की अपेक्षा मनुष्य का मूत्र, खाद के रूप में, अधिक मूल्यवान होता है। एक हजार रत्तल (पौंड) मूत्र में पानी ९३२ भाग, नोषजन ४९ भाग, और फासफेट ६ भाग विद्यमान रहता है। हाथी, घोड़ा, ऊंट, खच्चर, गधा, गाय, भैंस, भेड़-बकरी आदि पशुओं का मूत्र खाद की तरह काम में लाना अत्यधिक लाभदायक है। पशुओं के मूत्र में फासफरस कुछ कम मात्रा में होता है, अतएव वह मनुष्य के पेशाब से कुछ घटिया दरजे का है।

एक तंदुरुस्त मनुष्य एक वर्ष में लगभग चारसौ सेर पेशाब करता है, जिसमें लगभग २८ सेर वनस्पति पोषक तत्व विद्यमान होते हैं। सौ मनुष्यों के एक साल के पेशाब से १५० एकड़ भूमि में खाद दी जा सकती है। एक मनुष्य की एक वर्ष की पेशाब से करीब सवा एकड़ में खाद दी जा सकती है।

पेशाब एकत्रित करना—(१) घरों में पेशाब-घर बनाकर पक्के हौजों में पेशाब एकत्रित किया जाय। कुटुंब के प्रत्येक व्यक्ति को इसी जगह पेशाब करना चाहिए। हौज में सूखी मिट्टी या राख डलवा दी जाय। मिट्टी या राख के तर-ब-तर हो जाने पर फावड़ों से उलट-पुलट करके हटवाकर खेत में फैला दी जाय।

(२) पक्के हौज में सूखी मिट्टी, राख आदि भरवा दी जाय। रोज का पेशाब यह पदार्थ सोखता रहेगा। नीचे से ऊपर तक पूरी तरह तर-ब-तर हो जाने पर गढ़े में भरे गये पदार्थ को हटाकर खाद के गढ़े में डाल दिया जाय।

(३) छः माह या एक साल का पेशाब आ सके, इतना बड़ा पक्का

हौज बनवा लिया जाय। इस हौज के भर जाने पर पेशाब में चूने का पानी डाल दिया जाय। चूने के पानी के असर से पेशाब में के वनस्पति पोषक पदार्थ हौज की तली में बैठ जायंगे। हलके हाथ से ऊपर का पानी निकाल लिया जाय और तली में जमे हुए पदार्थ हटाकर खाद की तरह काम में ले लिये जायं।

(४) प्रतिदिन जितना मूत्र एकत्रित हो, उसे हटवाकर खाद के गढ़ पर छिड़कवा दिया जाय। इससे खाद में नमी बनी रहेगी, जिससे खाद अच्छी सड़ेगी और खाद भी ऊंचे दरजे की बनेगी।

शाला, महा-विद्यालय, ऑफिस, कारखाने, जेल, शहरों की सड़कों और गांवों की गलियों में पेशाबघर बनाकर मूत्र संग्रहीत किया जा सकता है। परंतु इसके लिए विशेष प्रबंध करने की आवश्यकता है। पेशाब जमा करने के लिए पक्के हौज बनवा देना अच्छा है। बाल्टियों, पीपों या नांदों में जमा करके प्रतिदिन खाद के ढेर पर छिड़कवा देना अधिक लाभदायक है।

शहरों तथा गांवों में भी, जहां पाखाने बनाये गये हों, पेशाब और मैले के लिए अलग-अलग प्रबंध किया जाना चाहिए। पेशाब और पानी को एक नाली द्वारा पक्के हौज, पीपे, बाल्टी या नांद में गिराने का प्रबंध कर दिया जाना चाहिए। इनमें राख या मिट्टी डाल देने से अधिक सुभीता हो सकता है। मैला उठाकर ले जानेवाला मेहतर पेशाब-पानी से भीगी हुई मिट्टी भी उठा ले जाया करेगा। नगरपालिकाएं ऐसा प्रबंध कर दें तो गंदगी भी नहीं फैलने पायगी और खाद बेचकर कुछ कमाया भी जा सकेगा।

एक मन सूखी मिट्टी लगभग दो मन पेशाब सोख सकती है। थोड़ी-थोड़ी मिट्टी प्रति दूसरे-तीसरे दिन हौज आदि में डालते रहना चाहिए। उत्तर प्रदेश के कुछ कारागृहों में ऐसा ही किया जाता है।

पेशाब में वनस्पति पोषक पदार्थ घुलनशील अवस्था में रहते हैं। इसलिए मूत्र की खाद फसल को बहुत जल्दी फायदा पहुंचाती है। प्राणियों के मल में वे सब पदार्थ रहते हैं, जो पेट की रसायनशाला में पचते नहीं हैं। परंतु पेशाब में पचे हुए पदार्थों का अंश ही रहता है। प्राणी मल-मूत्र के साथ जितना नोषजन शरीर से बाहर फेंकता है, उसका आधे से अधिक भाग पेशाब में ही बना रहता है।

देहातों में पेशाबघरों और पाखानों का एकदम अभाव है। लोग गांव के आसपास और आम रास्तों में ही टट्टी बैठते हैं और गांव के गली-कूचों, आम रास्तों तथा मकान के खंडहरों में ही पेशाब करते हैं। इस गंदगी को दूर करना कठिन भी नहीं है। विष्टा की खाद पर विचार करते समय पाखाना फिरने के लिए किये जा सकनेवाले प्रबंध पर लिख आये हैं। गांवों में पेशाबघरों की व्यवस्था बहुत ही कम खर्च में सहज ही की जा सकती है।

गली-कूचों और मकानों में स्थान-स्थान पर मिट्टी की नांदें, मटके, बाल्टियां आदि मिट्टी, राख, कोयले का महीन चूरा, लकड़ी का बुरादा आदि भरकर रख दी जायं, खेत में बीज डालने के लिए नाई या नारी को बांधे जानेवाले नलिये या नलचूड़े के समान मोटे बांस की पोली नलियाँ इन बरतनों में सीधी खड़ी कर दी जायं। नलियों के मिट्टी, राख आदि में दबे रहनेवाले भाग पर पास-पास कई छोटे-छोटे छेद कर दिये जाय। नलियों के ऊपर के सिरे से चार-छः इंच की छेटी पर बेकार लकड़ियां, बांस या लकड़ी के पटिये रखकर बैठने का स्थान बना दिया जाय, जिसके बीच में एक गोल कुछ लंबा-सा बड़ा छेद रखा जाय। नाली के सिरे पर टीन या लकड़ी की, घासलेट तेल भरने की झब्बी के आकार की, एक बड़ी झब्बी रख दी जाय। झब्बी बैठने के लिए बनाई गई जगह में रखे गये छेद से कुछ बड़ी हो। बैठक पर बैठकर किया गया पेशाब इस झब्बी में गिरकर नली में से होकर बरतन में पहुंच जायगा और मिट्टी, राख आदि द्वारा धीरे-धीरे सोख लिया जायगा। बैठने के लिए बनाये गये स्थान के चारों ओर घास-फूस की टट्टी लगाकर आड़ की जा सकती है। मिट्टी, राख आदि के पेशाब से तर-ब-तर हो जाने पर निकालकर सीधे खेत में फेंक दिया जाय। देहातों में, इस काम के लिए, सूखी महीन मिट्टी का उपयोग करना अधिक सुविधाजनक है। पेशाब में भीगी हुए मिट्टी को धूप में सुखाकर फिर से काम में लिया जा सकता है।

खाद का उपयोग—फल-झाड़ों के लिए यह एक अच्छी खाद है। दूसरी फसलों को भी इस खाद से काफी फायदा पहुंचता है। पेशाब की खाद देने से फसल की कीड़ों से रक्षा भी होती है। एक भाग पेशाब में दो

भाग पानी मिलाकर एक झाड़ को लगभग पांच सेर सींच दिया जाय, तो कीड़े नष्ट हो जाते हैं। ज्वार, बाजरा, गेहूं आदि के बीजों को पेशाब में भिगोकर बोया जाय, तो कुछ रोगों से फसल की रक्षा हो जाती है।

एक पशु एक साल में लगभग दोसौ मन पेशाब करता है। इसका $\frac{१}{४}$ भाग उत्तम वनस्पति पोषक तत्व है। इसपर से अनुमान लगाया जा सकता है कि प्रत्येक किसान प्रति वर्ष कितने अधिक अमूल्य पदार्थ नष्ट कर देता है।

५—कूड़े-कचरे की खाद

मकान, तबेला (गोठा), खलिहान आदि झाड़-बुहारकर साफ करने पर निकला हुआ कूड़ा-कचरा बेकार समझकर रास्तों पर या किसी गंदी जगह पर फेंक दिया जाता है। नगरपालिकाएं इस कचरे को गढ़े भरने के काम में लाती है। देहातों में गांव के अंदर या गांव से बाहर कूड़े-कचरे के ढेर पड़े रहते हैं, जो बरसात में सड़कर दुर्गंध और रोग फैलाते हैं। यदि इससे खाद तैयार की जाय, तो गांवों में सफाई रखी जा सकती है और खाद की कमी भी कुछ अंश में दूर की जा सकती है।

जो चीज किसी काम की नहीं समझी जाती है, वह घूरे पर फेंक दी जाती है। राख, सनेटी, कोयला, विष्टा, पत्ते, सड़ी-गली तरकारी, चिंदे कागज, चूहे-छछुंदर आदि गलियों और खंडहरों में फेंक दिये जाते हैं। कुम्हार लोग अवां पकाने के लिए इन चीजों को उठा ले जाते हैं। कई लोग बिना सड़ाये-गलाये ही इन चीजों को खेतों में डाल देते हैं। बिना सड़ी खाद देने से फसल को दीमक लग जाती है और मिट्टी में संचित पानी का अंश भी घट जाता है, कारण कि मिट्टी में की कमी को ग्रहण करके ही कूड़ा-कचरा सड़ता है। परिणाम यह होता है कि फसल मारी जाती है। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है कि अच्छी तरह सड़ा लेने के बाद ही कूड़ा-कचरा खेत में डाला जाय।

गांव से बाहर किसी ऊंचे स्थान पर गढ़ा बनाया जाय। इसमें राख, पत्ते, कूड़ा-कचरा, पाखाना, पेशाब आदि सभी बेकार चीजें और सड़े-गले पदार्थ डाले जाते हैं। कभी-कभी गंदा पानी, पेशाब या तालाब-कुएं का पानी ढेर पर छिड़का जाता रहे। खाद के गढ़े पर छाया कर दी जानी

चाहिए, जिससे खाद में के उपयोगी तत्व भाप बनकर उड़ न सकें। हर दूसरे महीने काफी पानी छिड़ककर खाद को उलट-पुलट कर देना चाहिए। आठ-दस माह में सब पदार्थ सड़कर खाद बन जायंगे।

सभी किस्म का कूड़ा-कचरा और बेकार चीजें इस गढ़े में ही डाली जानी चाहिए। बनसटी, ज्वार-मक्का के डंठल, सनेटी, तिलौंजा आदि को छोटे-छोटे टुकड़े करके ही गढ़े में डालना चाहिए, कारण कि छोटे-छोटे टुकड़े जल्दी सड़ते हैं। इनको जलाकर राख भी गढ़े में डाली जा सकती है।

कूड़े-कचरे की खाद सभी प्रकार की फसल को दी जा सकती है। किन्तु स्मरण रखना चाहिए कि पूरी तरह से सड़ी हुई खाद ही दी जाय। कचरा-पेटियों में नाना तरह के पदार्थ फेंके जाते हैं, इसलिए यह खाद ऊंचे दरजे की नहीं मानी जाती है। डुमरांव में तैयार किये गये खाद में प्रतिशत ०·३ और पूना में तैयार किये गये खाद में प्रतिशत ०·४ नोषजन पाया गया है। कांच के टुकड़े, कंकर आदि चुनकर निकाल लेने के बाद ही कूड़ा-कचरा आदि गढ़े में डाले जाने चाहिए।

कूड़े-कचरे की खाद—बरसात के दिनों में खाद के गढ़े में से बहकर बाहर निकल जाने वाले पानी के साथ भोज्य पदार्थों की निम्नलिखित मात्रा नष्ट हो जाती है।

नाम भोज्य पदार्थ	*जून*	*जुलाई*	*अगस्त*
नोषजन	२०·९०	१·५८	१·२१
फासफरिक एसिड	१·४९	०·७८	०·४८
पोटाश	६१·७६	३·८७	४·६०

उक्त अंक एक लाख भाग पानी में के हैं। माल के सूखे वजन का प्रतिशत ०·१ भाग अमोनियम सलफेट या प्रतिशत ५ चूना डालने से लाभ ही होता है।

६—हरी खाद

किसी फसल को हल आदि चलाकर मिट्टी में दबा देने की क्रिया को 'हरी खाद' देना कहते हैं। भारत, ग्रीस, मिस्र, रोम, चीन, आदि में अति

प्राचीन काल से हरी खाद का उपयोग होता रहा है। 'वाराह-संहिता' में तिल, कुलथी आदि फसलों को फूल आने से पहले खेत की मिट्टी में गाड़ देने का उल्लेख है। वर्तमान काल में हरी खाद देने का रिवाज बहुत ही कम हो गया है। इसका मुख्य कारण है किसानों की गरीबी। कई प्रदेशों में साल में कुछ ही महीनों में वर्षा होती है। साल के बाकी महीनों में सिंचाई से या खेत की मिट्टी में संचित तरी से ही फसलें ली जाती हैं। मार, माल, उपरिहार, आदि नामों से पहचानी जानेवाली जमीनों में वर्ष-भर में एक ही फसल ली जा सकती है। वर्षा में हरी खाद देने पर इन जमीनों में दूसरी फसल बोई ही नहीं जा सकती है। गरीबी के कारण किसान एक साल की पैदावार की हानि सह नहीं सकता है। यह सही है कि एक साल की पैदावार का नुकसान उठा लेने पर भी बाद के सालों में ज्यादा पैदावार प्राप्त हो जाने से नुकसान से कई गुना अधिक फायदा मिल जाता है। किसान यह बात जानते भी हैं। किन्तु दोनों जून भरपेट मोटा अन्न तक न जुटा सकनेवाले किसान के लिए एक साल की पैदावार का नुकसान उठा लेना उसके बूते से बाहर की बात है। फिर भी, किसानों का ध्यान इस ओर खीचना अत्यावश्यक है। हरी खाद का प्रचार बढ़ जाने पर उपले जलने से होनेवाली हानि की कुछ भरपाई अवश्य हो जायगी।

फूल आने तक पौधे के सभी अंग कोमल होते हैं। यदि पौधे को हल चलाकर मिट्टी में दबा दें, तो वे सड़कर उत्तम खाद्य पदार्थ में बदल जाते हैं और इस भोजन को पौधे की जड़ें सुगमता से ग्रहण कर लेती हैं।

द्वि-दल जाति की या फलीदार (छीमीदार) फसलें ही हरी खाद देने के काम में ली जाती हैं। सनई, ढेंचा, वावची, जंगली नील, चंवला, उर्द, मूंग, कुलथी, गुवार, मोठ, मटर, मेथी आदि फसलें हरी खाद देने के लिए बोई जाती हैं। इन फसलों की जड़ों पर छोटी-छोटी गांठें-सी होती हैं, जिनमें जीवाणु या शाकाणु निवास करते हैं। किसान यह बात जानते हैं कि, चना, उर्द, गुबार आदि फसलें काट लेने के बाद बोई गई फसल की उपज अच्छी आती है, किन्तु वे यह नहीं जानते हैं कि ऐसा क्यों होता है।

हरी खाद द्वारा कम खर्च में नोषजन की पूर्ति की जा सकती है। खली, अमोनियम सलफेट आदि द्वारा जितना नोषजन आठ आने में दिया जाता

है, उतना ही नोषजन हरी खाद द्वारा अढ़ाई-तीन आने में दिया जा सकता है।

हरी खाद से लाभ—हरी खाद देने से हल्की किस्म की जमीन सुधर जाती है। मिट्टी में जैव पदार्थ की मात्रा में वृद्धि हो जाने के कारण पैदावार बढ़ जाती है। कमजोर और कम उपजाऊ जमीन ताकतवर और ज्यादा उपजाऊ हो जाती है। हरी खाद के डंठल-पत्ते आदि सड़ने से रासायनिक परिवर्तन होते हैं, जिसका असर मिट्टी पर पड़ता है और चिकनी मिट्टी भुरभुरी हो जाती है। मूसला जड़वाली फसलें अधिक गहराई पर स्थित भोज्य पदार्थों को सतह के पास की मिट्टी में जमा कर देती हैं, जिससे बाद में बोई गई फसल को तैयार भोजन मिल जाता है। हरी खाद की फसलें घनी बोई जाती हैं, जिससे खेत में उगे हुए घास-पात और खर-पतवार को प्रकाश, धूप व हवा नहीं मिल पाती है और वे नष्ट हो ज ते हैं। दूब और कांस को नष्ट करने और नोषजन को नष्ट होने से बचाने में भी इससे सहायता मिलती है।

कहीं-कहीं मूंग, उर्द, चना, मसूर, मटर आदि के पौधे फसल पकने पर उखाड़े जाते हैं। पहले बतला आये हैं कि इन पौधों की जड़ों पर नोषजन संग्रहीत रहता है। नोषजन ही पौधे का मुख्य भोजन है। इसे खेत की मिट्टी में ही बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि ये फसलें काटी जाया करें—जड़ से हरगिज न उखाड़ी जायं।

हरी खाद के लिए चुनी जानेवाली फसल में नीचे लिखे हुए गुण होने चाहिए—

१. पौधे बहुत ज्यादा पत्तेवाले हों;

२. तना और टहनियां रेशे-रहित और कोमल हों;

३. जड़ों पर मसे या छोटी-छोटी गांठें बहुत ज्यादा तादाद में हों; और

४. पौधे बहुत जल्दी बढ़ते हों।

ढेंचा और चंवला हरी खाद के लिए अच्छे हैं। कुलथी और चंवले का तना रेशा-रहित और नरम होता है। ढंचा ज्यादा ऊंचा बढ़ता है। ढेंचा और जंगली नील की जड़ें जमीन में ज्यादा गहरी बैठती हैं। ढेंचा,

नील और सन-सनई की जड़ों पर मसे बहुत ज्यादा होते हैं। सन बहुत जल्दी बढ़ता है। मूंग, उर्द, कुलथी पर बहुत ज्यादा पत्ते आते हैं। सन के बजाय सनई अच्छी समझी जाती है।

हरी खाद के लिए बरसात में वही फसल बोई जानी चाहिए, जो तेजी से बढ़ती हो तथा थोड़ी मिहनत, कम लागत और कम दिनों में जोतकर मिट्टी में मिलाने लायक हो जाय।

बंगाल आदि कुछ राज्यों में निराई करते समय खेतों में से उखाड़ा हुआ खर-पतवार, घास-पात आदि खेतों में ही पड़ा रहने दिया जाता है, जो सड़कर खाद का काम देता है। परन्तु ऐसा करना लाभदायक नहीं है, कारण कि खर-पतवार के ढेरों पर फसल को हानि पहुंचानेवाले कीड़े और रोग वृद्धि पाते हैं, जिसका असर पदावार पर पड़ता है। कहीं-कहीं घास के बीज बोये जाते हैं और पौधे, चार-छः इंच ऊंचे बढ़ जाने पर जुताई करके मिट्टी में मिला दिये जाते हैं।

बंगाल और मद्रास में नील, गुजरात में भिंडी, गुवार और तिल और मध्यप्रदेश में सन और कुलथी हरी खाद देने के लिए बोये जाते है। कहीं-कहीं गुवार को पकने पर काट लिया जाता है और जमीन पर गिरे हुए पत्तों को जुताई करके मिट्टी में मिला दिया जाता है। गुवार को फूल आते ही जुताई करके मिट्टी में मिला देने से आगामी फसल अच्छी आती है। इस खाद से चिकनी मिट्टी भुरभुरी हो जाती है तथा जमीन की उपजाऊ शक्ति भी काफी बढ़ जाती है।

मद्रास आदि कुछ राज्यों में बड़, पीपल, आक, नीम, महुवा आदि के हरे पत्ते और कोमल टहनियां खेत में गाड़कर सड़ाते हैं और तब फसल बोते हैं। कई प्रदेशों में बागीचे के पौधों की कटाई-छटाई में निकले हुए पत्ते-शाखाएं, तरकारी की फसलों के खाने के काम में न आनेवाले पत्ते, घास-पात, सेवार, जलज-वनस्पति आदि को गोबर या विष्टा की खाद के अन्दर दबाकर सड़ाते हैं, जिससे खाद की उपयोगिता और भी बढ़ जाती है।

नील की फसल निकाल लेने के बाद बोई गई फसल की पैदावार ज्यादा आती है। मेथी रबी की फसल है। ईख को मेथी को हरी खाद बहुत कम

दी जाती है, क्योंकि इसे खेत की मिट्टी में मिला देने के बाद ईख बोने से फसल कुछ पिछड़ जाती है ।

हरी खाद को सड़ाने के लिए मिट्टी में काफी तरी का रहना अत्यावश्यक है, इसलिए सिचाई करना संभव न हो, तो जून-जुलाई में वर्षा होते ही हरी खाद की फसल बो दी जानी चाहिए, जिससे खाद देने का समय आने तक पौधे काफी ऊंचे बढ़ जायं ।

फूल आना शुरू होते ही फसल को अच्छी तरह से रौंदकर जुताई करके मिट्टी में दबा देना चाहिए । हरी खाद का पूरी तरह से सड़-गल जाना निहायत जरूरी है, कारण कि पूरी तरह से गली हुई खाद ही फसल को फायदा पहुंचा सकती है । इसलिए आवश्यकतानुसार जोतकर खाद को उलट-पुलट देना चाहिए । फसल को ऐसे समय तोड़कर मिट्टी में मिलाना चाहिए कि इसके बाद दो-तीन अच्छी भन्नें पड़ जायं । खाद को सड़ने के लिए कम-से-कम, चार-पांच सप्ताह का समय मिलना चाहिए ।

हरी खाद देने का तरीका—(१) दूसरे खेतों में बोये गये या जंगल में उगे हुए सन, ढेंचा, जंगली नील, बावची, सावरी आदि उखाड़कर वर्षा-काल में खेत की मिट्टी में गाड़ दिये जाते हैं और सड़ जाने पर खेत में फैलाकर जुताई करके मिट्टी में मिला देते हैं ।

(२) खेत में बोई गई फसल को काटकर जमीन में गाड़ देते हैं और पूरी तरह से सड़ जाने पर जुताई करके मिट्टी में मिला देते हैं ।

(३) सन, कुलथी या कुर्थी आदि की फसल फूल आने पर जोतकर मिट्टी में दबाकर सड़ने दी जाती है ।

(४) हरी खाद के लिए बोई गई फसल को काटकर उसका ढेर लगा देते हैं । पशुओं की पेशाब और गोबर का पतला घोल ढेर पर छिड़ककर ढेर को दो इंच मोटी मिट्टी की तह से ढक दिया जाता है । दो सप्ताह में खाद सड़कर तैयार हो जाती है । दो-अढ़ाई सप्ताह बाद ढेर को फैलाकर खाद को ठंढा होने देते हैं और तब खेत में फैलाते हैं ।

हरी खाद की फसल को हल चला कर मिट्टी में गाड़ देने मात्र से ही काम नहीं चल सकता है । उसको पूरी तरह से सड़ाने की ओर भी काफी ध्यान दिया जाना चाहिए । इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए बार-बार जुताई करना

आवश्यक है। कुलथी, लोबिया, चंवला, मूंग आदि ज्यादा पत्तोंवाली फसलें ही बोई जानी चाहिए। हरी खाद ऐसे समय में मिट्टी में मिलानी चाहिए कि उसके सड़ जाने के बाद भी दूसरी फसल के लिए मिट्टी में काफी तरी बच रहे। अपने निज के अनुभव और स्थानीय परिस्थिति के आधार पर हरी खाद का मिट्टी में गाड़ने का समय निश्चित किया जाना चाहिए। अनुभव से पाया गया है कि जिस फसल को हरी खाद दी गई हो, उसे सुपरफासफेट देने से पैदावार ज्यादा आती है।

एक साल की फसल की पैदावार की हानि होने के कारण ही किसान बिना सिंचाई की जमीन को हरी खाद नहीं देते हैं। दिल्ली की कृषि-अनुसंधानशाला ने इस ओर ध्यान दिया है और कई प्रयोग भी किये गये हैं।

१. हरी खाद का प्रयोग

खाद जो दी गई	पैदावार					
	नाज प्रति एकड़		भूसा प्रति एकड़		सन के रेशे प्रति	
	मन	सेर	मन	सेर	मन	सेर
१३ सप्ताह की उम्र के सन के पौधों के सिरे-पत्ते	६	२८	१४	०	३	३५
१५ सप्ताह के उम्र के पौधों के सिरे	७	६	१३	१३	४	०

२. हरी खाद

खाद जो दी गई	पैदावार प्रति एकड़			
	नाज		भूसा	
	मन	सेर	मन	सेर
१ सन की पूरी फसल	८	२८	१८	३
२ सन के पौधों के केवल सिरे ही	९	२१	१८	२४

ऊपर दी गई सारिणियों से ज्ञात होता है कि सन की पूरी फसल की हरी खाद देने से जितनी उपज आती है, लगभग उतनी ही पैदावार पौधों

के केवल सिरों की ही खाद से प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त सिरो-भाग काट लेने के बाद बचे हुए डंठलों से लगभग चार मन रेशा भी मिल जाता है और १३ या १५ सप्ताह की उम्र के पौधों के केवल सिरो-भाग की ही खाद देने से पैदावार में ज्यादा अंतर नहीं पड़ता है।

चार साल तक किये गये प्रयोगों से पाया गया कि तेरह या चौदह सप्ताह की अवस्था के पौधों के सिरों की खाद देने से पैदावार अच्छी आती है और प्रति एकड़ लगभग चार मन रेशा भी हाथ लग जाता है। पौधों के सिरो-भाग काटकर मिट्टी में गाड़ दिये जाते हैं और तनों को हटाकर रेशा निकाल लिया जाता है। तेरह सप्ताह की अवस्था होने तक रेशों की बाढ़ पूरी हो जाती है और रेशे हल्के दरजे के भी नहीं होते हैं।

मिट्टी में गाड़े गये सिरो-भाग तीन-चार सप्ताह में सड़ जाते हैं। मध्य प्रदेश में अगस्त के दूसरे सप्ताह तक पौधों के सिरों को जमीन में गाड़ देना चाहिए। इस तरीके को अपनाने से खाद की कमी का सवाल बहुत-कुछ हल हो जाता है।

हरी खाद देने से पौधों द्वारा जमीन में से ग्रहण किये गये सभी तत्व मिट्टी को वापस मिल जाते हैं। जमीन की नीचे की सतह में स्थित वनस्पति पोषक तत्व ऊपर की सतह पर आ जाते हैं, जो बाद में बोई गई फसल को काफी लाभ पहुंचाते हैं, और दलहन फसलों से मिट्टी में नोषजन की मात्रा भी बढ़ जाती है। दूसरे खेतों में बोई गई फसल को वहां से काटकर अन्य खेत में गाड़ने से पौधों की जड़ों पर स्थित जीवाणुओं द्वारा एकत्र किये गये नोषजन का लाभ इस फसल को मिल नहीं पाता है।

देश में साल के अधिकांश दिनों में तापमान ऊंचा रहता है, जिससे जैव पदार्थ जल्दी जल जाते हैं और जमीनें कमजोर हो जाती हैं। वैज्ञानिकों का कथन है कि तेज धूप से मिट्टी में का जैव तत्व जल जाता है। मिट्टी में पर्याप्त जैव तत्व का विद्यमान रहना अत्यंत आवश्यक है। जमीन का उपजाऊपन इसीपर निर्भर होता है। जैव तत्व की कमी की पूर्ति के लिए जैव खाद दिये जाते हैं और अवश्य ही दिये जाने चाहिए। इस देश की जमीन में नोषजन की भी कमी है। यह हम पहले भी लिख आये हैं।

सेंद्रिय तत्वों के जल जाने से भारी जमीनें ज्यादा चिकनी हो जाती

हैं और हल्की जमीनें ज्यादा भुरभुरी हो जाती हैं। मिट्टी की पानी सोखकर संग्रहीत रखने की शक्ति कम हो जाती है। ऊंचे तापमान और वर्षा के कारण पड़ती जमीनें तथा खड़ी फसलों में ज्यादा खर-पतवार उग आते हैं। ये मिट्टी में से भोजन ग्रहण करके जमीन को कमजोर बना देते और पैदावार घटा देते हैं तथा मिट्टी में की तरी भी घट जाती है।

हरी खाद इन सभी झंझटों को दूर कर देती है। अनुमान है कि हरी खाद द्वारा जमीन को एक पौंड नोषजन आठ-नौ आना में मिल जाता है। इतना ही नोषजन गोबर की खाद से ११ आना में, खली से १ रुपया ११ आने में और अमोनियम सलफेट से १३ आने ५ पाई में पड़ता है। एक एकड़ की हरी खाद की फसल में लगभग दस टन कोमल रसदार जैव पदार्थ मिल जाते हैं, जो शीघ्र ही सड़कर जैव तत्व में मिल जाते हैं। सेंद्रिय पदार्थों की सड़न-क्रिया से कीटाणुओं की सड़न-क्रिया को गति मिलती है। हरी खाद की फसलें तेजी से ऊंची बढ़ती हैं, जिससे खर-पतवार दम घुटकर निर्जीव हो जाते हैं।

समय-समय पर आवश्यकतानुसार वर्षा होते रहने पर १५ इंच वर्षा होने पर ६०-७५ दिन में एक एकड़ से लगभग १० टन हरी खाद प्राप्त होती है और पदार्थों के पूरी तरह से सड़ जाने पर भी, बाद में बोई जानेवाली फसल के लिए काफी तरी बच रहती है। यदि शीतकाल में माहुट बरस गये, तो रबी फसल को सींचने की भी जरूरत नहीं पड़ती है। हरी खाद के लिए बोई गई फसल को फासफेटयुत खाद दे दी गई तो फसल खूब जोर पकड़ती है और जमीन को नोषजन भी ज्यादा मिलता है। धान, कपास, तमाखू, गन्ना और आलू की उपज १४ से ४० प्रतिशत बढ़ जाती है। एक एकड़ में बोई गई हरी खाद की फसल से प्रति एकड़ ५० पौंड नोषजन प्राप्त होता है, जो १/२ टन अमोनियम सलफेट उर्वरक के बराबर होता है। खेत में पर्याप्त तरी या नमी हुए बिना हरी खाद से किसी प्रकार का लाभ नहीं होता है। हरी खाद देने के बाद भी जमीन में, दूसरी फसल आने तक, काफी नमी रहनी चाहिए।

पौधों के सभी अंग कोमल हों, तभी फसल को जोतकर मिट्टी में गाड़ देना चाहिए। कड़े डंठल बिना सड़े रह जाते हैं, जिससे दीमक का उपद्रव

बढ़-जाता है। यदि सिंचाई करके वर्षा से पहले ही फसल बोई जाय, तो ज्यादा अच्छा है। बारानी जमीन में हरी खाद देने के बाद, वर्षा कम होने पर, दूसरी फसल लेना संभव ही नहीं हो सकता है। इसलिए सिंचाई की सुविधा न होने पर बहुत सोच-समझकर ही हरी खाद दी जानी चाहिए।

खड़ी फसल पर पाटा फेरकर पौधों को जमीन पर गिरा दिया जाय और तब मिट्टी पलटनेवाले लोहे के हल से उन्हें मिट्टी में गाड़ दिया जाय। बाद में एक बार और पाटा या सरावन फेर दी जाय। जो पौधे मिट्टी के अंदर न दबे हों, उन्हें कुदाली से खोदकर मिट्टी में गाड़ दिया जाय। पौधों पर भारी जमीन में कम और हल्की जमीन में ज्यादा मिट्टी ढकी जाय। मतलब यह कि हल्की जमीन में खाद गहराई पर और भारी जमीन में छिछलाई पर गाड़ी जाय। धरातल की मिट्टी के तह में जीवाणु और फंगाई (गोमज जाति के पौधे) रहते हैं, जो खाद को जल्दी सड़ा देते हैं।

सबसे सरल तथा उत्तम और बहुत ही कम खर्च में हरी खाद देने का तरीका यह है, कि जिस खेत में फसल बोई जाय, उसीमें वहीं पौधे गाड़े जायं। एक खेत में फसल बोकर उसे उखाड़कर दूसरे खेत में गाड़कर या कंपोस्ट बनाकर भी हरी खाद दी जा सकती है और कहीं-कहीं दी भी जाती है।

हरी खाद पर लोकमत

सन की अपेक्षा ढेंचा की हरी खाद धान के लिए अच्छी साबित हुई है। पंजाब-जैसे प्रदेशों में ग्वार की खाद देना फायदेमंद है। गन्ना, तमाखू और आलू के लिए सन की खाद ही उत्तम है। उत्तर प्रदेश के सिंचाई-क्षेत्रों में अक्तूबर में बरसीम की फसल बोई जाय और हरा चारा दो बार काट लेने के बाद फरवरी में—तीसरी बार की कटाई की फसल मिट्टी में गाड़ दी जाय। इसके बाद तुरंत ही गन्ना बो दिया जाय। गन्ने के उग आने तक हरे पदार्थ सड़कर जैव तत्व में परिवर्तित हो जायंगे।

पश्चिमी बंगाल में ढेंचा और सन बोया जाता है। असम में हरी खाद देने का रिवाज नहीं के बराबर ही है। बंबई में एक सीमित क्षेत्र में गन्ने और धान को हरी खाद दी जाती है। श्री बखारिया आदि का

कहना है कि सन की हरी खाद देने से पदार्थों के सड़ने में खेत की तरी खर्च हो जाती है और बाद की फसल के लिए मिट्टी में तरी रहती ही नहीं है। श्री शेंबेकर के मत से सिचाई की सुविधा होने पर मई में हरी खाद की फसल बोने से ही लाभ हो सकता है। मध्य प्रदेश में आधे से अधिक क्षेत्र में धान की फसल छिड़कवां बोई जाती है, अतएव हरी खाद देना संभव नहीं है। एलिचपुर में कपास की फसल की कतारों के बीच में सन बोया जाता है और वहीं गाड़ दिया जाता है। बरार में उड़द की हरी खाद दी जाती है। यहाँ के किसानों का कहना है कि सन के सड़ने की क्रिया में ज्यादा तरी खर्च हो जाती है।

उत्तर प्रदेश में मूंग नं० १ का प्रचार बढ़ रहा है। यह ६०-६५ दिन में पक जाती है। पकी हुई फलियाँ तोड़ लेने के बाद ये हल चलाकर पौधों को मिट्टी मे दबा देते है, जिससे हरी खाद मिल जाती है। अठारह-अठारह इंच के फासले पर कतारों में फसल बोई जाती है। दो पौधों में ९ इंच का अंतर रखा जाता है। प्रति एकड़ आठ-दस मन मूंग मिल जाता है। मूंग की हरी खाद देने के बाद अच्छी नस्ल के गेहूं न० ५९१, कानपुर १३, पूसा ५२, या जौ २ या जौ २५१ की पैदावार ज्यादा आती है। चौमस, या अषाढ़ी या पलिहर खेतों में गेहूं या जौ की उपज काफी बढ़ जाती है।

ग्राम ठीकपुरली (कोल्हापुर) के श्री बी० के० पाटिल का अनुभव है कि गोभी के पत्तों से उत्तम खाद तैयार की जा सकती है। हरे पत्तों के वे अवशेष, जो मवेशी खाते नहीं हैं, खाद बनाने के काम में लिये जाते हैं।

किसी सुविधाजनक स्थान पर २०'×५'×३' आकार के गोल गढ़े बनाये जायं। गढ़े की तली में गोभी के पत्ते आदि की ६ इंच मोटी तह देकर पैरों से कुचलकर दबा दिया जाय। इस पर तब मिट्टी, गोबर और राख को पानी में घोलकर छिड़का जाय। एक बाल्टी में जूनी, अच्छी सड़ी हुई खाद और दो छटांक अमोनियम सलफेट पानी में घोलकर छिड़का जाय। इसके बाद पत्तों की दूसरी तह दी जाय। पदार्थों को जल्दी सड़ाने के लिए क्यू० आर० (Quick rotting herbal compost maker) भी मिलाया जा सकता है। पत्तों की दूसरी तह देकर गोबर, राख और मिट्टी का गाढ़ा घोल छिड़का जाय। गढ़ा भरने तक तह-पर-तह दी जाती रहे।

ढेर को बीच में सबसे ऊंचा और बाजुओं को ढलवां रखकर मिट्टी से बंद कर दिया जाय। तीन मास में पदार्थ सड़कर उत्तम हरी खाद में बदल जायंगे।

मामूली हरी खाद की फसल से जमीन को प्रति एकड़ ८ से १० टन तक रसदार व कोमल सेंद्रिय पदार्थ मिल जाते है।

तीन प्रकार की हरी फसल की खाद देने से जमीन को प्रति एकड़ कितने पौंड सेंद्रिय पदार्थ और नोषजन प्राप्त होता है, यह नीचे लिखा गया है।

सन से प्रति एकड़ पच्चीस हजार से तीस हजार पौंड हरा पदार्थ व १०० से १२० पौंड नोषजन मिलता है। उर्द से प्रति एकड़ पद्रह हजार से बीस हजार पौंड तक हरा पदार्थ व ६० से ९० पौंड तक नोषजन प्राप्त होता है और ढेंचा से दस हजार से बारह हजार पौंड तक हरा सेंद्रिय पदार्थ और ४० से ५० पौंड नोषजन मिल जाता है।

मद्रास में किये गये प्रयत्नों से ज्ञात हुआ है कि किसी प्रकार के हरे पत्ते मिट्टी में गाड़कर हरी खाद देने से नोषजन की समान मात्रा की दृष्टि से अमोनियम सलफेट के समान ही फायदा होता है। हरे पत्तों से के सेंद्रिय पदार्थो का मिट्टी के पोल और कणों की रचना पर बहुत ही हितकारी प्रभाव पड़ता है और मिट्टी मे होनेवाले रासायनिक परिवर्तन भी तेज गति से होने लगते हैं। अमोनियम सलफेट और हरे पत्तों का संयोग धान की फसल के लिए बहुत ही लाभदायक साबित हुआ है।

७—खली की खाद

भारत में तिलहन बहुत ज्यादा पैदा होती है और प्रति वर्ष लाखों मन तिलहन विदेशों को भेजी जाती रही है। अर्थशास्त्र की दृष्टि से ऐसा करना अत्यंत हानिकर है। कई किस्म के जंगली पौधों से भी तेल निकाला जा सकता है। किंतु हमारी अकर्मण्यता और नासमझी के कारण कच्चा माल विदेशों को मालामाल करता रहा है। इधर कुछ वर्षों से कच्चे माल से नाना प्रकार की उपयोगी वस्तुएं बनाने की ओर ध्यान दिया जा रहा है। और देश की नव-निर्मित गवेषण-शालाओं में खोज-बीन की जा रही है।

तेल दो रीतियों से निकाला जाता है—(१) देशी कोल्हू से और (२) मशीनों से। देशी कोल्हू की खली में तेल का अंश ज्यादा रहता है और मशीन की खली मे बहुत कम। बीजों को कूट-पीटकर चूरा करके या साबुत बीज मशीनो में दबाकर तेल निकालते है। पेट्रोल आदि कुछ पदार्थ ऐसे हैं, जिनमें बीजों में का तेल घुल जाता है; किंतु दूसरे पदार्थ नहीं घुलने है। बीज का महीन चूरा पेट्रोल में डाल दिया जाता है। तेल घुलकर पेट्रोल में आ जाता है। बाद मे पेट्रोल को भपके से उड़ाकर दूसरे बरतन में निकाल लेते हैं, जिससे केवल तेल ही शेष रह जाता है और पेट्रोल का एक बड़ा भाग भी वापस मिल जाता है।

खली एक उत्तम खाद है, जिसमें पौधे के सभी भोज्य-पदार्थ रहते हैं। गोबर-घूरे की खाद की अपेक्षा खली की खाद बहुत जल्दी असर दिखाती है। इसे 'अर्ध विशेष खाद' कह सकते है। इसमे नोषजन की मात्रा अधिक होती है और नोषजन की पूर्ति करने के लिए ही यह खाद दी जाती है।

फसल उग आने के बाद भी खली की खाद दी जा सकती है। लगभग १५०० सेर गोबर-घूरे की खाद देने से १० सेर नोषजन पहुंचाया जा सकता है। किंतु इतना ही नोषजन १५० से २५० सेर खली की खाद से मिल जाता है। उर्वरक की अपेक्षा खली की खाद ज्यादा सस्ती पड़ती है और काम भी उन्हीं के जैसा देती है। इसलिए खली की खाद देने का रिवाज बढ़ाना अत्यंत आवश्यक है। इस खाद का असर धीरे-धीरे होता है। उर्वरक जिस फसल को दिये जाते है एकमात्र उसीको लाभ पहुंचाते हैं। किंतु उर्वरक से पूरा-पूरा लाभ उठाने के लिए उनके साथ-ही-साथ या कुछ पहले जैव पदार्थ की खाद देना जरूरी है।

तिल, अंडी, सरसों, तीसी (अलसी), कुसुम, मूगफली, पोस्ता, नारियल, रामतिल्ली, महुआ, बिनौला, करंज, नीम आदि की खली ही ज्यादातर काम में आती है। सभी किस्म की खली में प्रतिशत २ से ७ तक नोषजन, १ से १·५ तक फासफेट और ०·५ से १·५ तक पोटाश रहता है। जिन-जिन बीजों से तेल निकलता है, उन सभी की खली खाद के काम में ली जा सकती है।

खली दो प्रकार की होती है—(१) पशुओं को खिलाने लायक और

(२) पशुओं को न खिलाई जा सकनेवाली। सरसों, राई, बिनौला, तिल, तीसी, नारियल, मूंगफली आदि की खली पशुओं को खिलाई जाती है और नीम, महुवा, रेंड़ी आदि की खलियां, जहरीली होने के कारण नहीं खिलाई जा सकती हैं। इनकी खाद बहुत ऊँचे दरजे की होती है।

खिलाई जा सकनेवाली खली तो पशुओं को ही खिलाई जानी चाहिए और पशुओं के मल-मूत्र से खाद तैयार की जानी चाहिए। खली और बिनौला खिलाने से बैल ताकतवर होते हैं; और दुधारू पशुओं के दूध में घी की मात्रा बढ़ जाती है। खली और बिनौला खानेवाले पशुओं का मल-मूत्र खाद की दृष्टि से बहुत ही मूल्यवान होता है, क्योंकि पशुओं के शरीर के पोषण और वृद्धि में खर्च न हुए पदार्थ मल-मूत्र के साथ शरीर से बाहर निकल आते है।

पशुओं को खिलाई न जा सकनेवाली खली अवश्य ही खाद के काम में ली जानी चाहिए। खली का महीन चूरा ही खेत में बिखेरकर मिट्टी में मिलाया जाता है। देशी कोल्हू की खली में तेल का अंश अधिक रहता है। इसलिए इसके महीन चूरे मे २५ प्रतिशत किसी प्रकार का बुझा हुआ चूना मिलाना अत्यावश्यक है। ज्वार, बाजरा, कपास आदि को खली की खाद देनी हो, तो फसल बोने से लगभग २० दिन पहले महीन चूरा खेत में फैलाकर तुरंत ही जुताई कर दी जानी चाहिए। गरमी और हवा के असर से फसल बोने तक खली में के वनस्पति-पोषक-द्रव्य घुलनशील अवस्था में आ जायंगे।

यह खाद फलदार पेड़ों, कीमती तरकारियों और फूल के पौधों को बहुत लाभ पहुंचाती है। आलू, ईख, बैंगन, गोभी आदि को भी इस खाद से काफी लाभ पहुंचता है।

अंडी या रेंडी की खली—यह प्रति वर्ष एक बड़ी मात्रा में खाद की तरह काम में ली जाती है। इसमें प्रतिशत ३·१२ से ८ तक नोषजन रहता है। यह केवल खाद के ही काम में आती है। इसकी खाद सस्ती भी पड़ती है। यह खली सभी प्रकार के खाद्यान्नों की फसलों को दी जा सकती है। फल-झाड़ों के लिए भी यह एक उत्तम खाद है।

बंबई राज्य में गन्ने की फसल को २० गाड़ी गोबर की खाद में

पांच सौ सेर रेंडी की खली मिलाकर देते हैं। दूसरी फसलों को प्रति एकड़ एक हजार सेर दी जाती है। यह पुडरेट या सोनखाद के समान ही गुणकारी है। प्राप्त अनुभव से पता चला है कि १५० मन गोबर की खाद देने से जितना धान पैदा हुआ, लगभग उतना ही धान ६ मन अंडी की खली की खाद से उपजा है।

रेंडी की खली दो प्रकार की होती है—(१) छिल्केसहित बीजों की खली ; और (२) छिल्के निकाले हुए बीजों की खली। छिल्का निकाले हुए बीजों की खली में प्रतिशत ४·५ से ६ तक नोषजन होता है। यह खाद भिन्न-भिन्न रीतियों से दी जाती है। खली के महीन चूरे में २५ प्रतिशत चूना या चाहे जितनी राख मिलाकर पौधों की जड़ों के पास थोड़ी-थोड़ी डालकर डौरे या कुलपे देकर मिट्टी में मिला दिया जाता है। कहीं-कहीं फसल बोने से १५-२० दिन पहले इसे खेत में फैलाकर जुताई कर दी जाती है। यदि फसल बोने के बाद यह खाद खेत में छिड़की जाय, तो तुरंत ही सिंचाई कर दी जानी चाहिए।

इस खाद से पत्तों की खूब वृद्धि होती है। परंतु सिंचाई का समुचित प्रबंध हुए बिना यह खाद कदापि न दी जानी चाहिए। इसे देने से फसल निरोग और हृष्ट-पुष्ट हो जाती है। पत्तों का रंग गहरा हरा हो जाता है। इससे मिट्टी में रहकर फसल को हानि पहुंचानेवाले कीड़े मर जाते हैं और दीमक से भी फसल की रक्षा होती है।

महुवा की खली—विषैली होने के कारण यह खली मवेशियों को नहीं खिलाई जाती है ; खाद के काम में ही ली जाती है। इस खली में प्रतिशत २·५१ नोषजन (भूयाति), ०·८० फासफरिक एसिड (भास्विकाम्ल) और १·८५ पोटाश (सर्जि) विद्यमान है। सेपोनिन (Saponin) नामक विषैले पदार्थ के होने के कारण इसमें नोषजन बहुत ही देरी से पौधों द्वारा ग्रहण किये जाने योग्य अवस्था को प्राप्त होता है। इसलिए फसल बोने से कम-से-कम दो माह पहले ही यह खाद दी जानी चाहिए। इस खली के धुएं से कीड़े और चूहे मर जाते हैं। इस खाद को देने से मिट्टी में के फसल को हानि पहुंचानेवाले कीड़े मर जाते हैं और फसल को दीमक भी नहीं लग पाती है। नीम की खली भी कीट-नाशक है। किंतु यह खाद रेंडी की खली

की खाद के समान लाभदायक नहीं है। कुछ विशेषज्ञ इसका खाद की तरह उपयोग करना हानिकारक समझते है।

राई-सरसों की खली—भारत में खली पशुओं को खिलाई जाती हैं। विदेशों में तो केवल खाद के ही काम में ली जाती है। शुद्ध खली मे ५ प्रतिशत नोषजन है। भारत इस खली का अधिकांश विदेशों को भेजता रहा है। यह खाद बहुत तेज होती है। अतएव पौध-पालन-गृह या नरसरी में कदापि न दी जानी चाहिए, कारण कि इस खाद से नवजात पौधे मर जाते हैं।

बंगाल, बिहार और उड़ीसा में यह खाद की तरह काम में ली जाती है।

तिल की खली—गुजरात, काठियावाड़, मध्यप्रदेश आदि प्रदेशों में तिल कसरत से पैदा होता है। इन प्रदेशों में खली मवेशियों को खिलाई जाती और उनके मल-मूत्र से खाद तैयार की जाती है। इसमें ५·४ प्रतिशत नोषजन है।

कुसुम की खली—छिल्केवाले बीजो की खली में प्रतिशत ३·७ और छिल्केरहित बीजों की खली में प्रतिशत ७·६ तक नोषजन है। पशुओं के लिए यह एक ऊंचे दरजे की खुराक है। ईख के लिए यह खली बहुत ही अच्छी खाद साबित हुई है। दूसरी फसलों के लिए भी यह एक उत्तम खाद है। उन प्रदेशों में, जहाँ इसकी खेती की जाती है, इस खली की खाद अवश्य ही काम में ली जानी चाहिए। रेडी की खली से यह कुछ सस्ती भी पड़ती है।

करंज की खली—इसमें प्रतिशत ३·५ से ४ तक नोषजन है। मध्य प्रदेश, पूना, बंबई आदि में इसे खाद की तरह काम में लेते है। प्रति एकड़ सौ मन पत्ते दूसरी बार जुताई करने के बाद खेत में डालने से पैदावार प्रतिशत २० तक बढ़ जाती है। फूल भी खाद का काम देते हैं। बीज निकालने के बाद बचा हुआ छिल्का भी खाद का काम देता है।

नीम की खली—औषधियां और साबुन बनाने में नीम के तेल का उपयोग किया जाता है। निबौरी या नीमकौड़ी में प्रतिशत ३३ तक तेल निकलता है। नीम की खली में ७ प्रतिशत तक नोषजन रहता है। इस खाद से

आलू की पैदावार काफी बढ़ जाती है। इससे जमीन की उत्पादन-शक्ति बहुत बढ़ जाती है और मिट्टी में रहकर फसल को हानि पहुंचाने वाले कीड़े मर जाते हैं तथा दीमक से भी हानि नहीं हो पाती है। कहीं-कहीं नीमकौड़ी या निबौरी, सड़ाकर और कूट-पीटकर खेतों मे डाली जाती है। प्रति एकड़ १० से २० मन तक खाद दी जाती है।

बिनौले की खली—भारत में बिनौले से तेल निकालने का कार्य नहीं के बराबर ही होता है। बिनौला अधिकतर विदेशों को ही भेजा जाता रहा है। यही कारण है कि देश में बिनौले की खली बहुत ही कम मात्रा में मिलती है। यह खली अधिकतर मवेशियों को ही खिलाई जाती है। यह भी सोनखाद या पुडरेट के समान ही गुणकारी है। पूना की ओर गन्ने को इस खली की खाद दी जाती है। छिलकेवाले बिनौलों की खली में प्रतिशत ३·४ तक और बिना छिल्के की खली में प्रतिशत ७ तक नोषजन रहता है। छिल्केवाले बिनौले की खली की खाद प्रति एकड़ १५ से २५ मन और बिना छिल्केवाले बिनौले की खली की खाद प्रति एकड़ १० से २० मन तक दी जाती है। मूंगफली की खली की अपेक्षा यह खली कुछ अधिक पौष्टिक होती है।

अलसी की खली—यह खली उत्तर भारत मे ज्यादा होती है और पशुओं के लिए बहुत ही ऊंचे दरजे की खुराक है। इसमें प्रतिशत ४ से ५·७ तक नोषजन है।

पोस्ता की खली—दाने निकाल लेने के बाद अफीम के पौधों के डोडे या फलों का जो भाग शेष रह जाता है, उसे कानपुर की ओर पोस्ता कहते हैं। डोडों के महीन चूर्ण को खेत में डालने से फसल को हानि पहुंचानेवाले कीड़े मर जाते हैं। इसमें ०·८ प्रतिशत नोषजन है।

मूंगफली की खली—भारत में यह खली मवेशियों को खिलाने का बहुत ही कम रिवाज है। बिनौला, नारियल और तिल की खली की अपेक्षा यह घटिया दरजे की मानी जाती है। मूंगफली की खली पशुओं के लिए बहुत ही अच्छा भोज्य पदार्थ है। कहीं-कहीं घोड़ों को भी खिलाई जाती है। खराब हो जाने पर तो यह एकमात्र खाद के ही काम में आती है। कहीं-कहीं मूंगफली और कुसुम के बीज मिलाकर तेल निकाला जाता

है। यह मिश्रित खली गन्ने के लिए एक उत्तम खाद साबित हुई है। इसमें ६·५ प्रतिशत से ५ प्रतिशत तक नोषजन रहता है अमोनियम सलफेट की अपेक्षा यह कुछ ऊँचे दरजे की खाद मानी जाती है। यदि उचित रीति से काम में न लिया जाय तो अमोनियम सलफेट से फसल को क्षति पहुंचती है। किंतु इस खाद से किसी प्रकार की हानि पहुंचने की बिल्कुल ही संभावना नहीं रहती है। कुछ किस्म के उर्वरक मूंगफली की खली में मिलाकर ही खेतों में दिये जाते हैं।

खली की हिफाजत—खली को धूप, सील और पानी से बचाये रखने की ओर बिल्कुल ही ध्यान नहीं दिया जाता है। इससे खली खराब हो जाती है, जिससे उसमें के पौधों के भोज्य पदार्थ वहुत-कुछ नष्ट हो जाते हैं और खली बेकार हो जाती है। खली को बोरों, मटकों, कनस्तरों या मिट्टी के कुठलों में भरकर रखना ही अच्छा है। घुन, दीमक आदि से भी बचाये रखना चाहिए।

खाद की मात्रा—खली में पाये जानेवाले नोषजन के प्रतिशत परिमाण पर खाद की प्रति एकड़ मात्रा निर्भर करती है। यह प्रति एकड़ १० से ६० मन तक दी जा सकती है। इस खाद को गोबर की खाद, हड्डी की खाद, पत्तों की खाद आदि में मिलाकर भी काम में ले सकते हैं।

खाद देने की रीति—मशीनों से चूरा की गई खली कारखानों में मिल जाती है। चूरा ही खरीदकर काम में लेना चाहिए। यदि चूरा न मिल सके तो खली को सुखाकर, ढेंकी, मूसल आदि से पीटकर या अन्य रीति से चूरा करके ही खेत में डालना चाहिए।

जितनी खाद दी जाने को हो, उतनी सब एक ही बार में कदापि नहीं दी जानी चाहिए। थोड़ी-थोड़ी करके दो-तीन बार में पंद्रह-पंद्रह, बीस-बीस दिन के अंतर से देना अधिक लाभदायक है। एक भाग फसल बोने से १५-२० दिन पहले खेत में बिखेरकर जुताई कर दी जानी चाहिए। इसके बाद पौधों के पांच-छः इंच ऊंचे बढ़ जाने पर पौधों की जड़ों पर थोड़ा-थोड़ा चूरा डालकर डौरा या कुलपा देकर मिट्टी में मिला दिया जाय। यदि तीसरी बार और खाद देना आवश्यक समझा जाय तो इससे लगभग एक मास बाद ही दिया जाय।

फलदार पेड़ों, फूलवाले पौधों और कीमती तरकारियों को इस खाद से अधिक लाभ पहुंचता है। खली देने के बाद तुरंत ही काफी पानी सींच दिया जाना चाहिए। सिचाई के बाद खली की खाद देना अधिक लाभदायक माना जाता है।

खली का महीन चूरा बोरे में भरकर बोरे का मुंह बंद कर दिया जाता है। बोरे तब सिचाई के पानी की नाली में रख दिये जाते हैं। खली गलकर सिचाई के पानी के साथ बहकर धीरे-धीरे खेत में पहुंचती रहती है। किंतु यह रीति हानिकारक है। इसका कारण यह है कि खली का एक अंश पानी की नाली में ही रह जाता है और कुछ अंश खेत की ऊपरी सतह पर जम जाता है, जो उस साल की फसल के उपयोग में नहीं आता है।

खली की खाद एक और रीति से भी तैयार की जाती है। एक मन खली के चूरे में दस सेर खेत की महीन मिट्टी अच्छी तरह से मिलाकर ढेर बना लिया जाय। इस ढेर पर १२ सेर गोबर का घोल छिड़क दिया जाय और ढेर को खूब अच्छी तरह से गीला कर दिया जाय। तब चारों ओर खूब दबाकर ढेर को मिट्टी छाबकर ढक दिया जाय। एक-दों दिन बाद दरारें-सी पड़ जायंगी। ये दरारें गीली मिट्टी से बंद कर दी जायं। ढेर पर दिन में एक-दो बार महीन छेद के झारे से पानी छिड़का जाता रहे। दस-पंद्रह दिन में ढेर में के पदार्थों का सड़ना शुरू होते ही बदबू निकलने लगेगी। प्रति मन खली के लिए तीन तोला के हिसाब से नीलाथोथा लेकर, उसका घोल ढेर पर छिड़कने से बदबू बहुत ही घट जायगी। पंद्रह-बीस दिन बाद ढेर को खोलकर छाया में फैला दिया जाय। यदि खली में तेल का अंश ज्यादा हो तो ज्यादा महीन चूरा ही काम में लिया जाना चाहिए।

ईख को एक टन खाद दी जाती है। खली की खाद तीन भाग करके दो भाग फसल बोने से पहले और एक भाग फसल बोने के बाद दी जाय। गेहूं के पौधों के करीब चार-पांच इंच हो जाने पर प्रति एकड़ तीनसौ पौंड खली का महीन चूरा पौधों की जड़ों पर बिखेरकर तुरंत ही सिंचाई कर दी जानी चाहिए। मिर्ची, तमाखू, केला आदि सिंचाई की फसलों को चाहे जब दिया जा सकता है। गुलाब, मोगरा, क्रोटन आदि को

यह खाद खूब फायदा पहुंचाती है। एक गमले में एक मुट्ठी खाद देना काफी है।

सड़ाकर तैयार की गई खाद बहुत जल्दी असर दिखाती है। खड़ी फसल को भी यह खाद दी जा सकती है। पौधों की जड़ों पर थोड़ी-थोड़ी खाद डालकर खुरपी या डौरे से कुलपाई करके मिट्टी में मिला दी जाती है। दो-तीन दिन बाद ही पत्ते जानदार दिखाई देने लगते हैं। ज्यादा बारिश होने पर खेत में जरूरत से ज्यादा पानी भर जाता है, जिससे खेत की मिट्टी में जीवाणु अपना काम कर नहीं पाते हैं और पत्ते पीले पड़ जाते हैं। सड़ाकर तैयार की गई खली की खाद देने से पत्तों का रंग गहरा हरा हो जाता है।

आवश्यक सूचनाएं—मवेशी को खिलाई जा सकनेवाली खली मवेशी को न खिलाकर खाद के काम में लाना भयंकर भूल है। डॉक्टर लेदर द्वारा किये गये विश्लेषण से पाया गया है कि पशुओं को खिलाई जानेवाली खली में नोषजन का प्रतिशत परिमाण अधिक होता है। यह खली तो पशुओं को ही खिलाई जानी चाहिए और उनके मल-मूत्र से अवश्य ही खाद बनाई जानी चाहिए। खली खाने से मिहनत करनेवाले तथा दुधारू पशुओं की ताकत कम नहीं होती है। इस प्रकार ९० प्रतिशत नोषजन भी मल-मूत्र के रूप में जमीन को वापस मिल जाता है।

सस्ती और प्रतिशत अधिक नोषजनवाली खली ही पसंद की जानी चाहिए। कई कारणों से खली खराब हो जाती है। अतएव मिहनत, कीमत, मजदूरी आदि का हिसाब लगाकर यह देख लिया जाना चाहिए कि एक पौंड नोषजन खेत में पहुंचाने के लिए कितना खर्च करना पड़ता है। सौ पौंड खली में जितना नोषजन हो, उसका भाग सौ पौंड की कीमत में देने से एक पौंड नोषजन का मूल्य ज्ञात हो जाता है। इसकी तुलना करने से मालूम हो सकता है कि किस किस्म की खली सस्ती पड़ेगी।

जिस किस्म की खली सरलता से प्राप्त हो, वही काम में ले ली जानी है। पश्चिमी बंगाल और असम में सरसों की खली अधिक मात्रा में उपयोग में आती है। बंबई में मूंगफली की खली और मध्य प्रदेश में सभी प्रकार की खलियां काम में ली जाती है, फिर भी अधिकतर मूंगफली की खली का ही उपयोग किया जाता है। वैसे तो तिल, सरसों और महुवा

की खली भी दी जाती है। पश्चिमी बंगाल और असम में साग-भाजी, धान और कपास को खली देते हैं। बंबई में गन्ना, कपास, तरकारी और धान को खली की खाद डाली जाती है। उत्तर प्रदेश में महुवा की खली और अमोनियम सलफेट का मिश्रण दिया जाता है और लाभदायक भी साबित हुआ है। दूसरी किस्म की खलियाँ भी दी जा सकती हैं और दी भी जाती हैं। किंतु उत्तर प्रदेश में महुवा की खली सरलता से मिल जाती है और इसीलिए ज्यादातर इसी का उपयोग किया जाता है।

८—लेंडी व लीद की खाद

लेंडी—गोबर की खाद की अपेक्षा लेंडी की खाद ज्यादा जोरदार मानी जाती है और यह असर भी जल्दी करती है। भारतीय किसान लेंडी की खाद के गुणों से भली प्रकार परिचित है। यह खाद गरम मानी जाती है, क्योंकि इसमें वनस्पति पोपक पदार्थ घुलनशील अवस्था में रहते हैं, जिससे फसल को जल्दी फायदा पहुंचता है। इसका असर कई सालो तक बना रहता है। गोबर में वनस्पति पोषक पदार्थ अघुलनशील अवस्था में रहते हैं। मिट्टी में मिला देने के बाद इसमें के पोपक पदार्थ घुलनशील अवस्था में आते हैं। पूरी लेंडी कड़ी होती है और वह जल्दी सड़ती भी नहीं है। जल्द फायदा उठाने के लिए लेंडी को चूरा करके ही खेत में डालना चाहिए।

लेंडी को गढ़े में सड़ाकर ही खाद तैयार की जाती है। पेशाब को भी एकत्रित करके काम में लेना चाहिए। स्मरण रखना चाहिए कि ढेर या गढ़े में एकत्रित की गई खाद में के उपयोगी तत्व धूप और वर्षा से नप्ट हो जाते हैं। इसलिए धूप और वर्षा से खाद की अवश्य ही रक्षा की जानी चाहिए।

लेंडी की खाद बहुत कम मिलती है। इसलिए फल-फूल के पौधों और कीमती तरकारियों को ही इस खाद का प्रति पौधा पाँच सेर चूर्ण दिया जाना चाहिए।

हांके-जोते खेत में रात में भेड़ बिठाना लाभदायक है। रातभर में दो-तीन बार बैठने की जगह बदली जानी चाहिए। प्रति एकड़ दो हजार

में चार हजार तक भेड़ें बिठाई जाती हैं। भेड़ें बिठाने के बाद खेत तुरंत ही जोत दिया जाना चाहिए।

प्रयोगों से मालूम हुआ है कि दिनभर में एक भेड़ से दो सेर लेंडी प्राप्त होती है, जिसमें तीन छटांक के लगभग नोषजन रहता है। एक रात में आवश्यकतानुसार दोसौ से चारसौ तक भेड़ें लगातार दस रात तक भी बिठा सकते हैं। खाद की आवश्यकता के अनुसार यह संख्या घटाई-बढ़ाई भी जा सकती है।

बागीचे के फूल-झाड़ों और खासकर गुलाब को इस खाद से काफी फायदा पहुंचता है। तरकारी, गेहूं, ज्वार, आलू, गन्ना, जीरा आदि के लिए भी यह एक लाभकारी खाद है। हरेक फल-झाड़ को जड़ें खोलकर लेंडी का बारीक चूरा देकर ऊपर मिट्टी ढक दी जानी चाहिए। उत्तर गुजरात या राजस्थान में ऊंट की लेंडी की खाद दी जाती है और खेतों में ऊंट भी बिठाये जाते हैं।

चूरा करके डाली गई लेंडी की खाद पहली ही फसल को लाभ पहुंचाती है। दूसरी फसल को इस खाद से बहुत ही कम लाभ पहुंचता है। बिना चूरा की गई लेंडी की खाद का असर चार-पांच साल तक बना रहता है क्योंकि यह धीरे-धीरे सड़ती है। लेंडी में नीचे लिखे अनुसार प्रतिशत पोषक-पदार्थ रहते हैं।

	पानी	*नोषजन*	*प्रस्फुरिकाम्ल* (फासफरिक एसिड)	*क्षार*
ताजी लेंडी में	५८	०·८०%	०·०६%	०·३०%
सूखी लेंडी में		१·७८,,	१·४०,,	०·७०,,
पेशाब में	९२·००	० ७९,,	—	१·३५,,

गोबर की खाद की अपेक्षा लेंडी की खाद कुछ महंगी बिकती है। मध्य प्रदेश में ४ या ५ रुपया तक में एक गाड़ी खाद बिकती है।

भेड़ की एक दिन की लेंडी से ०·२० प्रतिशत नोषजन मिल जाता है। इसपर से ज्ञात हो सकता है कि हम प्रति वर्ष कितने लाख मूल्य की कीमती खाद अपनी ही लापरवाही से नष्ट कर देते हैं।

लीद—घोड़े-गधे आदि की लीद की खाद बहुत ही गरम मानी जाती है। अतएव इसे अच्छी तरह से सड़ा लेने के बाद ही काम में लेना चाहिए। लीद में पानी का अंश कम रहता है। अतएव गढ़े में लीद के साथ-ही-साथ भूसा-कचरा आदि भी डाला जाना चाहिए और समय-समय पर पानी छिड़ककर उसे अच्छी तरह से सड़ा लेना चाहिए। इसे एक साल से पहले कदापि काम में नहीं लेना चाहिए। घोड़े की लीद में प्रतिशत ०·५ नोषजन और ०·३६ फासफरिक एसिड रहता है। प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि घोड़े की एक साल की लीद से ३३·९ सेर तक नोषजन मिलता है।

फल-झाड़ों को गरमी पहुंचाने के लिए, बागीचों में, ताजी लीद की खाद दी जाती है। लीद पानी में घोलकर सींची जाती है। किंतु खेतों में ताजी लीद की खाद कदापि न दी जानी चाहिए; कारण, ऐसा करने से दीमक लग जाती है और फसल को भी हानि पहुंचती है। एक वर्ष से कुछ अधिक समय तक गढ़े में सड़ाई गई खाद ही अच्छी होती है। घोड़े-गधे का मूत्र भी एक उत्तम खाद है। पेशाब की खाद पर अन्यत्र लिखा गया है। उसी रीति से घोड़े, गधे आदि का पेशाब संग्रहीत करके काम में लिया जाना चाहिए।

सूअर का मल ठंढा होता है। किंतु खाद की दृष्टि से यह अधिक मूल्यवान है। इसका मूत्र उतना अच्छा नही है। मुर्गी का ताजा मल मवेशी के ताजे मल से ज्यादा कीमती होता है। पशुओं के मल की अपेक्षा मुर्गी का सूखा मल चार गुना अधिक लाभदायक होता है।

९—पनाला—गंदे नाले के पानी की खाद

पनाला, गंदे नाले, मोरी आदि का जल एक अच्छी खाद मानी जाती है। पश्चिमी देशों में गंदे नाले का पानी खेतों के पास गढ़ों में एकत्रित करके फसलों को सींचा जाता है। गिनी घास, रिजका, चरी आदि को यह पानी सींचने से पौधे ऊंचे बढ़ते और रसदार भी होते हैं। इस पानी से फल-झाड़ों को भी लाभ पहुंचता है। पानी खुले गंदे नालों में बहता है। वायु के संयोग से इसमें रासायनिक परिवर्तन होते हैं, जिससे वह

उपयोगी हो जाता है। इस पानी में नोषजन अधिक रहता है और फास-फरिक एसिड कम। यही कारण है कि घास-चारे की फसलों को लाभ पहुंचता है।

कई शहरों और कसबों में गंदे नालों को नदी-नालों में मिला दिया जाता है। इससे खाद के तत्व तो नष्ट होते ही हैं, साथ ही पानी गंदा हो जाने से रोग भी फैलते है। उत्तम तो यह होगा कि शहर से काफी दूरी पर पक्के हौजों में पानी एकत्रित करके फसलों की सिचाई की जाय। पंजाब आदि राज्यों के कुछ शहरों में ऐसा किया भी जाता है।

देहातों में गंदे नाले नहीं होते हैं। मोरी-पनालों का पानी रास्तों में फैलता रहता है जिससे कीचड़ होती और दुर्गंध फैलती है।

मोरी या पनालों के पानी के लिए चूना-ईट के पक्के हौज बनाये जायं। इनमें सूखी मिट्टी या राख भर दी जाय। मोरी से हौज में गिरनेवाले पानी, जूठन, पेशाब आदि को मिट्टी या राख सोख लेंगी। हौज का मुह लकड़ी के ढक्कन से बंद कर दिया जाना चाहिए। खूब तर हो जाने पर मिट्टी हटाकर खाद के ढेर पर डाल दी जाय और हौज में दूसरी मिट्टी या राख भर दी जाय। यदि मिट्टी न डाली जाय तो हौज का पानी तीसरे-चौथे दिन निकालकर खाद के ढेर पर छिड़क दिया जाय। देहातों की पंचायतें, म्युनिसिपैलिटी, सेनिटेशन बोर्ड आदि इस रीति को अपनाकर खाद तैयार करके प्रति वर्ष काफी रकम कमा सकती हैं।

यह खाद ज्वार, बाजरा, मक्का, तमाखू आदि सभी फसलों कोदी जा सकती है। किंतु गटर का पानी उचित मात्रा में ही सींचा जाना चाहिए। अधिक सींचने से फसलें खराब हो जाती हैं और खेत का पोत भी बिगड़ जाता है। अनुमान लगाया गया है कि एक लाख की आबादीवाले शहरों की गटरों के पानी से लगभग चार हजार एकड़ जमीन सींची जा सकती है। यदि समुचित रूप से इस पानी को संग्रहीत किया जाय और पानी का अपव्यय न किया जाय, तो बीस-बाईस हजार एकड़ भूमि सहज ही सींची जा सकती है। प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि इस पानी से दो बार सिंचाई करने से पैदावार लगभग दूनी हो जाती है।

१०—बींट और ग्वानों की खाद

बींट—पक्षियों की बीट की खाद गोबर की खाद से अधिक उपयोगी है। किंतु बीट बहुत ही कम मिलती है। यदि कोशिश की जाय, तो काफी बींट जमा की जा सकती है। बहुत-से लोग मुर्गा-मुर्गी, कबूतर आदि पालते हैं। बड़े-बड़े मकानों, घने वृक्षों और कुंजों में कबूतर आदि पक्षी एक बड़ी संख्या में बसेरा करते हैं। इन स्थानो में प्रतिदिन बीट मिल सकती है। माना कि एक पक्षी की बींट बहुत ही थोड़ी होती है। किंतु सैकड़ों पक्षियों के निवास-स्थान मे यह एक बड़ी मात्रा में एकत्रित की जा सकती है। यह खाद बहुत ही फायदेमंद होती है और बहुत ही जल्द सड़ भी जाती है। वनस्पति पोषक पदार्थ घुलनशील अवस्था मे ही रहने के कारण यह खाद बहुत ही जल्दी अपना असर दिखाती है।

भिन्न-भिन्न जाति के पक्षियों की बीट में जुदे-जुदे गुण होते है। किंतु इसपर विचार करने की उतनी आवश्यकता नही है। सभी प्रकार के पक्षियों की बीट में वनस्पति पोषक पदार्थ अत्यधिक मात्रा में रहते हैं और एक भी जाति ऐसी नही है, जिसकी बीट हानिकारक हो। कम मिलने के कारण खेत में इसकी खाद दी नहीं जा सकती है। बीट का महीन चूरा करके पानी मे घोल बना लिया जाय। फूल-झाड़ों और तरकारी की फसलों के लिए यह एक उत्तम खाद है।

पेरू ग्वानो से मिलती-जुलती ही चिमगादड़ की बीट भारत, अमरीका, अफरीका आदि देशों की गुफाओं में काफी मात्रा में मिल जाती है। यह उन्ही देशों में खप भी जाती है। भारत में इस अमूल्य खाद की ओर किसी का ध्यान ही नही आकर्षित हुआ है, और न समुद्री पक्षियों की विष्टा ही खाद की तरह काम में ली जाती है।

चिमगादड़ की बीट की उपयोगिता के संबंध में जांच-पड़ताल भी की नहीं गई है। बहुत ही कम मात्रा में प्राप्त होने तथा बहुत ही कम स्थानों मे सुलभ होने के कारण ही संभव है, विशेषज्ञों ने इस ओर ध्यान न दिया हो।

ग्वानो—ग्वानो शब्द स्पेन की भाषा का है, जिसका अर्थ है विष्टा। किंतु व्यापारी जगत में समुद्री पक्षियों की विष्टा को ही यह नाम दिया

गया है। समुद्री पक्षियों की विष्टा या बींट निर्जन द्वीपों में, जहाँ वर्षा बहुत ही कम होती है, जमा होती रहती है। प्रारंभ में, अमरीका के पेरू देश के पास के द्वीपों से ही मंगाया जाता था। इसलिए इसे 'पेरू ग्वानो' नाम दिया गया है। ये समुद्री पक्षी अंडे देने के मौसम में ही जमीन पर, अनुकूल स्थान खोजकर, एक-दूसरे से सटाकर घोंसले बनाते हैं और नवजात बच्चों को लगभग एक मास तक, मछलियां खिलाकर पालते है। घोंसलों के स्थान पर पक्षियों की विष्टा, मृत पक्षियों की लाशें, मछलियों के अवशेष, पंख आदि जमा होते रहते है। मौसम खतम होने पर सभी पक्षी उड़ जाते हैं। तेज धूप और सूखी हवा इन सब पदार्थो को बहुत जल्दी सुखा देते हैं, जिससे सड़न क्रिया द्वारा होनेवाले परिवर्तन इन पदार्थो में हो ही नहीं पाते हैं।

पक्षियों की बींट में नोषजन अधिक मात्रा में रहता है, जिसमें एक बड़ा भाग मूत्राम्ल (यूरिक एसिड) है। मछलियों के कारण फासफरिक एसिड भी काफी मात्रा में मौजूद रहता है। एकमात्र मछलियाँ ही इन पक्षियों का भोजन है। ग्वानों में प्रतिशत १८·३ नोषजन और ९·२ फासफरिक एसिड पाया जाता है।

जलवायु बहुत ही अधिक शुष्क होने के कारण ग्वानो के संचय में कुछ परिवर्तन होते है। मूत्राम्ल (यूरिक एसिड), यूरिया और अमोनिया के लवण में बदल जाता है, जिसका कुछ अंश गैस रूप में उड़ जाने की स्थिति में होता है। यदाकदा होनेवाली वर्षा अमोनिया के यौगिकों को घुलनशील फासफेट और क्षारीय अंशों (alkalis) को घुला देती है और यही कारण है कि भिन्न-भिन्न स्थानो के ग्वानो में अंतर पाया जाता है और एक ही स्थान पर संचित ग्वानो की अलग-अलग तहों में भी फर्क होता है। ग्वानो का ढेर जितना ही अधिक पुराना होता है, वह उतना ही अधिक धुला हुआ होता है और उसमें नोषजन की मात्रा भी उतनी ही कम होती है तथा फासफरिक एसिड का प्रतिशत परिमाण अधिक होता है। कई संचयों में फासफेट के सिवा अन्य पदार्थ पाया ही नहीं जाता है।

दक्षिण और उत्तरी अमरीका, वेस्ट इंडीज, आस्ट्रेलिया, और प्रशांत महासागर के द्वीपों के विस्तीर्ण क्षेत्र में ग्वानों के ढेर पाये गये हैं। भिन्न-

भिन्न देशों के ग्वानो में वनस्पति पोषक पदार्थों की प्रतिशत मात्रा में इतना अधिक अंतर पाया गया है कि खेती की दृष्टि से साधारण खाद में ग्वानो को शुमार किया नहीं जा सकता है। भोज्य पदार्थों को संतुलित बनाने के हेतु व्यापारी लोग, इसमें नोषजन, पोटाश और फासफरिक एसिड मिलाकर बेचते हैं। भिन्न-भिन्न देशों के ग्वानो में पौधों के भोज्य पदार्थों की प्रतिशत मात्रा में इतनी अधिक भिन्नता है कि यह कह सकना संभव नहीं है कि किस किस्म की फसल को यह खाद कितनी मात्रा में दी जानी चाहिए।

पश्चिमी देशों में प्रति वर्ष हजारों मन ग्वानो विदेशों से मंगाया जाता है। इसलिए लालची लोगों ने लोभवश नकली ग्वानो बना लिया है और 'नकली ग्वानो' के नाम से हजारों मन बेकार चीज हर साल बाजार में बिक जाती है। मछली और गोश्त का चूरा भी ग्वानो के नाम से बेचा जाने लगा है। किंतु वर्तमान काल में इसके प्रति किसानों का आकर्षण बहुत ही कम हो गया है।

ग्वानो सभी किस्म की फसलों के लिए उत्तम खाद है। इस खाद से ऊंचे दरजे की उपज प्राप्त की जा सकती है। यह फल-झाड़ों और कीमती फसलों को ही दिया जाता है।

पेरू ग्वानो पर गंधकाम्ल (सलफ्यूरिक एसिड) से कुछ क्रिया की जाती है, जिससे अमोनियम कार्बोनेट हवा में न उड़नेवाले अमोनियम सलफेट के रूप में बदल जाता है और फासफरिक एसिड का एक बड़ा भाग घुलनशील अवस्था में आ जाता है। इसे "डिजाल्व्हड पेरू ग्वानो" कहते हैं। इसमें ६ प्रतिशत नोषजन और १० प्रतिशत फासफरिक एसिड होता है। फासफरिक एसिड का ९/१० भाग घुलनशील अवस्था में रहता है। गोदामों में संग्रहीत रखने और विदेशों को भेजने में इसमें के कीमती पदार्थ नष्ट हो जाते हैं।

सौ सेर पानी में आध सेर ग्वानो डालकर घोल तैयार किया जाता है। यह घोल फूल के पौधों को सप्ताह में दो बार सींचा जाता है। गुलाब, गुलदावदी, अंगूर, फर्न आदि को इस खाद से लाभ पहुंचता है। महीन मिट्टी में ३ से ६ प्रतिशत ग्वानो का महीन चूर्ण मिलाकर दिया जाता है।

साग-भाजी और फल-झाड़ों के लिए भी यह एक अच्छे किस्म की खाद है। वर्षा में यह अधिक लाभ पहुंचाती है।

सूखे पत्तों की खाद—कोंपलों में उर्वरा-शक्ति बढ़ानेवाले पदार्थ काफी मात्रा में रहते हैं। पतझड़ के मौसम में गिरे हुए पत्ते उर्वरा शक्ति बढ़ाने की दृष्टि से निरुपयोगी ही हैं। फिर भी, बड़े-बड़े बागीचों तथा कई अन्य स्थानों पर पतझड़ में गिरे हुए पत्ते एकत्रित करके कंपोस्ट खाद तैयार की जाती है। इस खाद से जमीन का पोत सुधर जाता है।

किसान सूखे पत्तों से खाद तैयार नहीं करते हैं। सूखे पत्ते हवा में इधर-उधर उड़ते रहते हैं। ये भाड़ में जलाने के काम में आते हैं। पत्तों की राख भी खाद का काम देती है। किंतु जल जाने से पत्तों में के उपयोगी तत्व नष्ट हो जाते हैं, जिससे राख उतना लाभ नहीं पहुंचाती है। सूखे पत्तों से खाद तैयार करने की उत्तम रीति यह है कि गोबर-घूरे की खाद के ढेर में पत्तों का चूरा डाल दिया जाय। ऐसा करने से बहुत कम मिहनत से अच्छी खाद तैयार की जा सकती है।

सूखे पत्ते, घास आदि एकत्रित करके एक गढ़े में डाल दिये जायं। खेतों में से उखाड़े गये खर-पतवार, हरे पत्ते आदि इसी गढ़े में डाले जाते रहें। इनको सड़ाने के लिए नमी की आवश्यकता होती है। इसलिए ढेर पर पानी भी छिड़कते रहना चाहिए। काफी पानी छिड़ककर ढेर को दो-तीन दिन तक खुला रहने दिया जाय और तब मिट्टी की तीन इंच मोटी तह से ढक दिया जाय। सड़न-क्रिया द्वारा अस्तित्व में आये हुए उपयोगी तत्वों को यह मिट्टी सोखकर सुरक्षित रख लेगी। धूप और वर्षा से खाद की रक्षा करना अत्यावश्यक होने से ढेर पर छाया कर दी जानी चाहिए। किसी पदार्थ को सड़ाने के लिए नमी और गरमी की आवश्यकता होती है। गरमी तो खाद के ढेर में आप-से-आप पैदा हो जाती है और पानी छिड़कने से नमी भी मिल जाती है। लगभग दस माह में सड़कर खाद तैयार हो जाती है।

खाद के ढेर पर गंदा पानी छिड़कना ज्यादा फायदेमंद है। जूठन का पानी, कपड़े आदि की धोवन का पानी, पेशाब और गटर-पनाले का पानी छिड़का जाय, तो और भी अच्छा है। यदि गंदा पानी न मिल सके, तो

तालाब का पानी छिड़का जा सकता है। ढेर पर ज्यादा पानी छिड़का गया तो पत्ते एक दूसरे से चिपक जायंगे, जिससे जल्दी सड़ेंगे नहीं। इसके अलावा ज्यादा पानी धीरे-धीरे नीचे उतरकर जमीन के अंदर चला जायगा और उसके साथ ही खाद में के उपयोगी तत्व भी जमीन में पैठ जायंगे, जिससे खाद बेकार हो जायगी।

बिना सड़ी खाद बेकार ही होती है और ऐसी खाद देने से दीमक लग जाने की भी आशंका रहती है। इसलिए खाद को ठीक तरह से सड़ाने की ओर पूरा-पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए।

एक दूसरे तरीके से भी सूखे पत्तों की खाद तैयार की जाती है। सभी प्रकार के पौधों के सूखे पत्तों का बारीक चूरा करके छलनी या रस्सी से बुनी हुई खटिया से छान लिया जाय। इस चूरे को पक्के हौज में डालकर पानी भर दिया जाय। पत्तों को दो-तीन बार उलट-पुलट कर देने के बाद हौज का मुंह बंद कर दिया जाय। लगभग पंद्रह दिन तक दबाये रखने से अच्छी खाद बन जायगी। पत्तों की खाद बनाने की यही एक अच्छी और सस्ती रीति है। यदि इस खाद को और भी अधिक लाभदायक बनाना हो, तो पत्तों के चूरे में थोड़ा बुझा हुआ चूना मिला दिया जाना चाहिए। बिना बुझा हुआ चूना कदापि नहीं मिलाया जाना चाहिए; कारण, यह पौधों को हानि पहुंचाता है। बहुत दिनों पहले बुझाया हुआ और बहुत दिनों तक खुला पड़ा हुआ चूना ही अधिक लाभदायक पाया गया है।

पत्तों की खाद चिकनी नहीं होती है। इसलिए यह गमले भरने के काम में ली जाती है। फसलों को भी इससे फायदा पहुंचता है। पत्तों की खाद तैयार करने के लिए वैसा ही गढ़ा बनाया जाना चाहिए जैसा कि गोबर-घूरे की खाद बनाने के लिए तैयार किया जाता है।

११—नदी-नाले और तालाब की कांप की खाद

वर्षा में पानी के बहाव के साथ महीन मिट्टी बहकर आती है और तालाब, नदी-नाले आदि की तली या किनारों पर जम जाती है। यह मिट्टी बहुत ही लाभदायक खाद है। इसमें वनस्पति पोषक पदार्थ घुलनशील अवस्था में रहते हैं। भारत में यह मिट्टी बहुत ही कीमती मानी जाती

है । वर्षा के बाद, पानी कम हो जाने पर जल-प्रवाहों के किनारों पर या तली में फसलें बोई जाती हैं। किंतु खाद की तरह इस मिट्टी का उपयोग नहीं किया जाता है । कई प्रदेशों में ताल-तलैया की तली की मिट्टी से ईंट-खपरैल बनाये जाते हैं ।

यह मिट्टी डालने से हल्की और रेतीली कंकरीली जमीन की उत्पादन शक्ति बढ़ जाती है । यदि किसान थोड़ी मिहनत करें, तो यह मिट्टी हर जगह मिल सकती है । रेलवे लाइन और पक्की सड़कों के दोनों बाजू के गढ़ों में आस-पास के खेतों में से बहकर आई हुई महीन मिट्टी जमा होती रहती है । इसमें वनस्पति पोषक पदार्थ एक बड़ी मात्रा में बने रहते हैं । इसे हल्की जमीन में डालकर फायदा उठाया जा सकता है । इससे ममले भी भरे जाते हैं । इस खाद को देने से हलदी और अदरख की पैदावार बहुत बढ़ जाती है ।

वर्षाकाल में नदी-नालों में बाढ़ आती है । जल-प्रवाह के साथ बहकर आई हुई महीन मिट्टी किनारों पर, गढ़ों में और तली में बैठ जाती है । इसी मिट्टी को कांप या कलई कहते हैं । जैव तत्व बहुत ही हल्का होता है । यह पानी में तैरने लगता है और जल-प्रवाह के साथ बहकर दूर-दूर के भू-भागों में फैल जाता है । कांप या कलई मिट्टी में जैव-तत्व की मात्रा भी काफी होती है । वर्षा के बाद इस मिट्टी को हटाकर खेत में डाल देना चाहिए । प्रति एकड़ २० गाड़ी डालना काफी है । इस मिट्टी में प्रतिशत ०·१ नोषजन, ०·१२ फासफरिक एसिड और ०·८ तक पोटैश होता है ।

ज्वार, बाजरा, जीरा, गेहूं, कपास, मक्का आदि फसलों को चाहे जितनी खाद दी जा सकती है । फल-झाड़ों की जड़ों पर की मिट्टी हटाकर कांप की मिट्टी डालने से फल ज्यादा और अच्छे आते हैं । एक पौधे को दो-तीन टोकनी मिट्टी दी जाती है । धान की फसल को ६० गाड़ी दी जाती है ।

: ५ :

नोषजनीय खाद

बड़े-बड़े कारखानों में,कई प्रकार के उद्योगों-धंधों और कुछ व्यवसायों में कई ऐसे पदार्थ प्राप्त होते हैं, जो बेकार समझे जाते हैं। ये पदार्थ नोषजन-युक्त खाद की तरह काम में लिये जा सकते हैं। कसाईखानों से निकलनेवाले बेकार पदार्थ प्रथम श्रेणी की नोषजनीय खादों में से हैं। सूत, रेशम, ऊन, बाल, पंख, चमड़ा आदि के कारखानों से निकलनेवाली बेकार चीजें भी उत्तम श्रेणी के खाद का काम देती हैं। किंतु ये पदार्थ सभी जगह नहीं मिलते हैं और न हमेशा मिल ही सकते हैं। इसलिए इन पदार्थों का उपयोग उसी प्रदेश या शहर में सरलतापूर्वक किया जा सकता है, जहां ये काफी मात्रा में आसानी से मिल सकते हैं।

उर्वरकों में नोषजनीय उर्वरकों को अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इन उर्वरकों की उत्पादन बढ़ाने की क्षमता, ऊंची कीमतें और इनको काम में लेते समय बरती जानेवाली बेपरवाही या अज्ञान के कारण उर्वरकों से होनेवाले लाभ के बदले हानि ही अधिक होती है। नोषजनीय खाद दो प्रकार की होती हैं—सेंद्रिय या जैव पदार्थों से बनी हुई खाद और निरेंद्रिय या रासायनिक या कृत्रिम खाद। नीचे कुछ सेंद्रिय खादों पर विचार किया गया है।

१—काजल

पत्थर के कोयले के धुएं के जम जाने से काजल बनता है। यह मुख्य रूप से कार्बन है, जो अति महीन कणों के रूप में होता है। इसमें सल्फेट ऑफ अमोनिया अति अशुद्ध अवस्था में रहता है। कुछ विशेषज्ञों का मत है कि मटियार भूमि पर इसका भौतिक प्रभाव पड़ता

है। कीड़ों से पौधों की रक्षा करने के लिए बागीचों में काजल का खाद की तरह उपयोग किया जाता है।

काजल की खाद से पौधों को केवल भोज्य पदार्थ ही प्राप्त नहीं होते, बल्कि जमीन के पोत पर भी इसका काफी अच्छा असर पड़ता है। पत्थर के कोयले में १ प्रतिशत या इससे कुछ अधिक नोषजन होता है। कोयला जलाने पर यह उड़ने लगता है। किंतु काजल में के कार्बन के कण इसका कुछ अंश मार्ग में ही रोक रखते हैं। चिमनी में से होकर निकलने-वाली गैस में से अमोनिया को सोखकर अपनी देह में सुरक्षित रख लेने के गुण के कारण ही काजल में जमीन की उर्वरा शक्ति बढ़ाने की क्षमता विद्यमान है। इसमें ०·५ से ६·०० प्रतिशत तक नोषजन पाया जाता है।

काजल में अमोनिया रहता है, अतएव इसे अमोनिया के लवणों में से ही एक मान सकते हैं। काले रंग के कारण इसमें सूर्य-किरणों को खींच-कर अपने में समा लेने की शक्ति है। जिस जमीन में काजल की खाद दी गई हो, उसका तापमान दिन में बिना काजलवाली जमीन के तापमान की अपेक्षा तीन अंश अधिक रहता है। ये जमीनें परावर्तन (radiation) करने में असमर्थ होती हैं। इसलिए रात को भी जबकि तापमान घट जाता है, मिट्टी में की गरमी नष्ट नहीं हो पाती है। इससे मिट्टी का तापमान बढ़ जाता है, जिससे पौधों की वृद्धि में काफी सहायता मिलती है और मिट्टी में के अघुलनशील भोज्य पदार्थों को घुलनशील अवस्था में लाने का कार्य करनेवाले कीटाणुओं का कार्य भी अबाध गति से चलता रहता है। इससे भारी जमीन हल्की हो जाती है।

२—कसाईखानों से प्राप्त खाद

गोश्त व मछली का चूर्ण, मुख्यतः, नोषजनयुत खाद ही माने जाते हैं। किंतु इनमें फासफेट की मात्रा भी पर्याप्त होती है। वही खादें नोष-जनीय खादें मानी जाती हैं, जिनमें मुख्यतः नोषजन की ही प्रधानता रहती है और फासफेट की मात्रा नहीं के बराबर ही होती है। ये प्राणियों के शरीरों के अवशेषों से या प्राणियों द्वारा ही प्राप्त होती हैं। इनमें नोषजन अघुलनशील यौगिक के रूप में ही होता है। पदार्थों के सड़ने पर ही भोज्य

पदार्थ जड़ों द्वारा ग्रहण करने की अवस्था को प्राप्त होते हैं। ये धीमी गति से अपना असर दिखाते हैं। इनमें से कुछ तो इतनी धीमी गति से कार्य करते हैं कि इन्हें सीधे फसल को देना लाभदायक नहीं पाया गया है—सड़ाकर खेत में डालने से ही लाभ होता है।

बड़े-बड़े नगरों में प्रतिदिन बकरे, भैंसे आदि सैकड़ों की संख्या में मारे जाते हैं। गोश्त निकाल लेने पर लाशों का बचा हुआ भाग इधर-उधर फेंक दिया जाता है। जिस जगह जानवर मारे जाते हैं, वहाँ खून गिरता है। इसे मिट्टी सोख लेती है। यह मिट्टी खाद का काम देती है। प्राणी के शरीर के दूसरे भागों में नोषजन, पोटाश और फासफरिक एसिड अधिक मात्रा में रहता है। इसलिए नगरपालिकाओं को चाहिए कि जहां-तक संभव हो, इनको व्यर्थ न जाने दें, गढ़े में डालकर खाद बना लिया करें।

कसाईखाने से मिलनेवाले पदार्थों की खाद गेहूं, ज्वार, बाजरा, आलू, गन्ना आदि फसलों और फलझाड़ों के लिए अच्छी है। खून को पौधों की जड़ों पर सींचकर मिट्टी से ढक देते हैं। इन पदार्थों को राख, मिट्टी, कोयला आदि के साथ गढ़े में डालकर सड़ा लिया जाता है। करीब तीन माह में सड़कर खाद तैयार हो जाती है।

देहातों में प्रतिवर्ष कुत्ते, बिल्ली, चूहे आदि जानवर सैकड़ों की संख्या में मरते हैं, जिन्हें गांव से बाहर फेंक दिया जाता है। जिन जानवरों का चमड़ा काम में आता है, उनका चमड़ा और गोश्त निकाल लेने पर बाकी भाग ऐसे ही छोड़ दिया जाता है, जिसे कुत्ते, गीध, गीदड़ आदि खाते रहते हैं। मृत शरीर के अवशेषों को गढ़े में डालकर सड़ा लेने से मुफीद खाद बन जाती है।

प्रत्येक गांव में आवश्यकतानुसार गढ़े बना लिये जायं। इनमें प्राणियों की लाशें, आंतें, हड्डियां, गोश्त आदि डालकर कोयला, राख या सूखी मिट्टी से ढक दिया जाय। तीन-चार मास में सड़कर उत्तम खाद तैयार हो जायगी। फल-झाड़ों के लिए यह बहुत ही मुफीद पाई गई है।

प्रति एकड़ चालीस गाड़ी खाद दी जाती है। एक झाड़ को चार सेर से ज्यादा खाद नहीं दी जानी चाहिए।

३—गोश्त का ग्वानो

मछली के ग्वानो की तरह यह भी बूचड़खानों में ही बनाया जाता है। लाशों का बचा हुआ भाग, सड़ा-गला गोश्त, टैलो (ताजी चर्बी) निकालने पर बचा हुआ भाग, गोश्त का सार तैयार करने पर बचा हुआ भाग, आदि को गरम करके एक विशेष क्रिया द्वारा चरबी निकाल ली जाती है और इसे सुखाकर महीन पीस लेते हैं। अमरीका में इसपर क्षार से क्रिया करके टैंकेज (tankage) नामक पदार्थ बनाते हैं। कभी-कभी पीसने से पहले इसमें हड्डियां मिलाई जाती हैं। इस तरह तैयार किया गया ग्वानो 'बोन मील' (अस्थि-चूर्ण) जैसा ही होता है। कुछ मिश्रणों में १३ प्रतिशत तक नोषजन रहता है। इसमें फासफेट ऑफ लाइम नहीं के बराबर ही होता है। अन्य कुछ मिश्रणों में ५ प्रतिशत तक नोषजन और ४० प्रतिशत तक फासफेट ऑफ लाइम रहता है।

यह मछली के ग्वानो के समान ही लाभदायक होता है और उसी की तरह काम में लिया जाता है। खेत में डालते ही जुताई करके तुरंत ही मिट्टी में मिला देना चाहिए; नहीं तो पक्षी चुग लेंगे या उठा ले जायंगे।

गोश्त के चूरे में दस प्रतिशत नोषजन रहता है। यह नोषजनीय खाद माना जाता है। यहां यह भी स्मरण रखना चाहिए कि हड्डी की खाद का महत्व उसमें के नोषजन की मात्रा पर निर्भर करता है। इस खाद के किसी नमूने में नोषजन की मात्रा अधिक होती है और किसी में फासफेट का प्रतिशत परिमाण अधिक होता है। गोश्त का सार बनानेवाले हड्डी और चर्बी अलग करके शेष भाग को खूब उबालते हैं। सभी घुलनशील पदार्थों को निकाल लेने के बाद शेष पदार्थों को सुखाकर महीन चूर्ण बना लिया जाता है। यही गोश्त का ग्वानो या गोश्त का चूर्ण कहाता है। बूचड़खानों से प्राप्त बेकार पदार्थों और मुर्दा जानवरों के मांस में से भाप देकर चर्बी और जिलेटिन को अलग कर लिया जाता है और बचे हुए भाग को सुखाकर चूर्ण बना लेते हैं। यही खाद की तरह बाजारों में बेचा जाता है। इस पदार्थ में हड्डी का भी अंश मिला रहता है। इसलिए इसे 'फासफेट मीट ग्वानो' भी कहते हैं, क्योंकि गोश्त का सार तैयार करने की क्रिया से प्राप्त

नोषजनयुत पदार्थ से यह भिन्न होता है। नोषजनयुत पदार्थ में औसतन ११ प्रतिशत नोषजन और २ प्रतिशत तक फासफेट पाया जाता है। हड्डी का अंश जिस परिमाण में मिला होता है, उसी मात्रा के मान से फासफेट का प्रतिशत परिमाण न्यूनाधिक होता है। फासफेटयुत पदार्थ में औसतन १५ प्रतिशत फासफेट और ६ प्रतिशत नोषजन रहता है।

इन दोनों प्रकार के पदार्थों में नोषजन और फासफेट अघुलनशील अवस्था में रहते हैं। किंतु बहुत ही ज्यादा महीन पीसा जाने के कारण ये पदार्थ बहुत जल्दी जड़ों द्वारा ग्रहण कर लिये जाने की अवस्था में आ जाते हैं।

४—खून

ताजे खून में १·५ से ३ प्रतिशत तक कली का चूना मिलाने से रक्त गाढ़ा होकर जम जाता है और दुर्गंध भी नष्ट हो जाती है।

रक्त ज़िबहखानों से ही मिल सकता है। खून की खाद ऊंचे दरजे की गोश्त की खाद से कुछ अधिक लाभदायक होती है। यह गोश्त के ग्वानो की ही श्रेणी की खाद है। इसमें हड्डी का अंश नहीं होता है। खून की खाद बहुत जल्दी असर करती है। यह खाद बाजारों में नहीं मिलती है। खाद बनानेवाले कारखाने रक्त खरीद करके नोषजन की मात्रा बढ़ाने के लिए अन्य खादों में मिलाते हैं।

प्रति पौंड नोषजन की कीमत के मान से यह सस्ती पड़ती है। ज़िबहखानों से रक्त प्राप्त किया जाता और भाप से मंदी गरमी पहुंचाकर सुखा लिया जाता है। यह सरलतापूर्वक चूर्ण में परिवर्तित किया जा सकता है। सील खाने पर यह सड़ने लगती है। खेत में फैलाते समय चूर्ण हवा से उड़ जाता है। इसलिए कुछ गीली मिट्टी में अच्छी तरह से मिलाकर ही खेत में बिखेरा जाना चाहिए। अच्छी तरह से सुखाये हुए पदार्थ में १६ प्रतिशत के लगभग नोषजन रहता है। यह ज्यादा दिनों तक ठीक हालत में रखा जा सकता है। यह खाद कुछ देरी से असर करती है और प्रति पौंड नोषजन की कीमत भी ज्यादा बैठती है। ज्यादा गरमी पहुँचाने पर यह पदार्थ कुछ जल जाता है, जिससे प्रतिशत नोषजन की मात्रा कुछ कम हो जाती है और नोषजन भी घुलनशील अवस्था में नहीं होता है।

इस पदार्थ में का नोषजन तुरंत ही ग्रहण किये जाने लायक नहीं होता है। इसलिए इसे फसल बोने से कुछ दिन पहले ही मिट्टी में मिला देना चाहिए। हल्के किस्म की जमीनों के लिए यह एक अच्छी खाद मानी जाती है। नाइट्रेट ऑफ सोडा की अपेक्षा यह कुछ देरी से असर करती है और अमोनियम सलफेट से कुछ ही नीचे दरजे की खाद मानी जाती है। आलू, फल-झाड़ और बागवानी की फसलों के लिए यह एक अच्छी खाद है।

बूचड़खानों में, पशुओं को कत्ल करके, गोश्त निकालने के स्थान पर राख या सूखी मिट्टी बिछा दी जाय, जिससे खून उसमें सोख लिया जायगा। यह मिट्टी या राख प्रतिदिन हटाकर गढ़े में एकत्रित की जाती रहे और प्रतिदिन दूसरी सूखी मिट्टी या राख उस स्थान पर बिछा दी जाया करे। ऐसा करने से खून व्यर्थ नहीं जायगा। खून सोखी हुई मिट्टी खाद की तरह खेत में दी जा सकती है। यदि मिट्टी में दो-तीन प्रतिशत चूना मिला दिया जाय, तो रक्त गाढ़ा होकर जल्द सूख जायगा। रक्त मिली हुई मिट्टी को खाद के गढ़े में डालकर एकत्रित करके खेत में ही फैला देना चाहिए।

५—मछली की खाद

मछली सभी जगह मिल सकती है। नदी-नाले-तालाब आदि जलाशयों में मछलियां पाई जाती हैं। समुद्र-तटवर्ती प्रदेशों में मछली की खाद बहुत बड़े पैमाने पर तैयार की जा सकती है। समुद्र की मछलियों की खाद ऊंचे दरजे की मानी जाती है। इसमें नोषजन और फासफोरस अधिक परिमाण में मिलते हैं।

वर्षा में नदी-नालों की बाढ़ के साथ बहुत-सी मछलिथां बहकर आती हैं। वर्षा के प्रारंभ में बहुत-सी मछलियां मर जाती हैं। नदी-नालों और तालाबों का पानी सूख जाने पर भी मछलियां मर जाती हैं, जो सड़कर बदबू फैलाती हैं।

आवश्यकतानुसार लंबा-चौड़ा और गहरा गढ़ा बना लिया जाय। गढ़े की तली में मिट्टी, कोयला या राख की चार इंच मोटी तह बिछाकर उसपर दो इंच मोटी तह मछलियों की फैलाई जाय। इस प्रकार गढ़ा भरने

तक राख, कोयला या मिट्टी और मछली की तहें दी जाती रहें। भर जाने पर गढ़े का मुंह रेत, राख, कोयला या मिट्टी की छः इंच मोटी तह से बंद कर दिया जाय। लगभग चार महीने में खाद पूरी तरह से सड़कर तैयार हो जाती है और दुर्गंध भी नष्ट हो जाती है।

कहीं-कहीं छः फुट लंबा, चार फुट चौड़ा और तीन फुट गहरा गढ़ा खोदा जाता है, जिसकी तली में छः इंच मोटी तह रेती की बिछाई जाती है। गढ़े की दीवारें गीली करके डंडे से पीटकर कड़ी करके गोबर से लीप दी जाती हैं। रेती पर बारह इंच मोटी तह मछली की फैलाकर एक फुट मोटी मिट्टी की तह दी जाती है। इस प्रकार एक-पर-एक तह देकर गढ़ा ऊपर तक भर दिया जाता है। जाल से निकालते ही खाने के काम में न आ सकनेवाली और अन्य कारणों से खराब हुई बेकार मछलियां ही गढ़े में भरी जाती हैं। गढ़ा भर जाने पर कूट-पीटकर दबा दिया जाता है। और तब चटाई, घास-फूस आदि बिछाकर एक फुट मिट्टी फैला दी जाती है। चार-पांच मास में सड़कर खाद तैयार हो जाती है।

काठियावाड़ आदि में काटी, बोंबील, बाला आदि नाम से पहचानी जानेवाली मछलियों से खाद बनाई जाती है। मछलियों के पंख आदि गढ़े में डालकर भी खाद बनाई जाती है। नजदीक के खेतों में गढ़े खोदकर मछलियां सड़ाने से अच्छी खाद सहज ही तैयार की जा सकती है।

नीबू, नारियल, केला, पपीता, आम, अंगूर, नारंगी आदि सभी प्रकार के फल-झाड़ों के लिए यह एक अच्छी खाद है। कराची, बंबई, मद्रास, कलकत्ता आदि में यह खाद ज्यादा मात्रा में काम में ली जाती है। कहीं-कहीं गेहूं, साग-भाजी आदि को प्रति एकड़ बीस-बाईस मन तक खाद दी जाती है, जिससे पैदावार ज्यादा आती है। यह खाद विदेशों को भी भेजी जाती रही है।

कहीं-कहीं मछलियों को सुखाकर कूट लिया जाता है। जड़ें खोलकर फल-झाड़ों को यह खाद दी जाती और तब जड़ें मिट्टी से ढक दी जाती हैं। प्रति झाड़ २-३ सेर खाद दी जाती है। मछली की खाद से फलों की संख्या और स्वाद में वृद्धि होती है।

मछली के चूर्ण या पूरी मछली में खनिज तत्व अत्यधिक मात्रा में

होते हैं। धूप में सुखाई गई मछली के चूर्ण में ३० प्रतिशत के लगभग खनिज पदार्थ रहते हैं। खनिज पदार्थों में एक बड़ा भाग कैलशियम फासफेट का ही है, जो पौधे की वृद्धि के लिए आवश्यक पदार्थों में से है। पौधों की तंदुरुस्ती के लिए आवश्यक सूक्ष्मतत्व (trace elements) और पोटाश भी इसमें रहता है। आणविक पदार्थ या सूक्ष्म खनिज (trace mineral), कोबाल्ट और आयोडाइन भी इसमें विद्यमान हैं।

जो मछलियां खाई नहीं जाती हैं, वे खाद के बनाने के काम में अवश्य ही ली जानी चाहिए। खाई जानेवाली मछलियां सुखाकर, नमक लगाकर, धुआं देकर या अन्य रीति से सुरक्षित रखी जाती हैं। इस प्रकार सुरक्षित मछलियों में से बहुत-सा माल खराब भी हो जाता है।

मछली का ग्वानो—यह मछली का मल नहीं है। बेकार मछलियों या उनके अवशेषों को सुखाकर तैयार किये गये पदार्थों को ही यह नाम दिया गया है। यह कई स्थानों पर तैयार किया जाता है। तेल निकाल लेने के बाद बचे हुए पदार्थ को सुखाकर पीस लेते हैं। इस चूर्ण को ही 'फिश ग्वानो' नाम दिया गया है। भिन्न-भिन्न प्रकार की मछलियों का तेल निकाला जाता है, किंतु ग्वानो में पाये जानेवाले पौधों के भोज्य पदार्थ करीब-करीब एक-से ही हैं। इसमें ६ से ९ प्रतिशत नोषजन और १३ से २० प्रतिशत तक ट्रायकैलशिक फासफेट के रूप में फासफरिक एसिड मौजूद रहता है।

इस पदार्थ में पौधों के भोज्य पदार्थ अघुलनशील अवस्था में रहते हैं। किंतु यह जल्दी सड़ जाती है। मछली के गोश्त आदि में तेल का अंश अधिक मात्रा में रह जाता है, जिससे सड़न क्रिया में रुकावट पड़ती है। तीन प्रतिशत से ज्यादा तेल हो, तो खाद कुछ देरी से असर करती है। अतएव, बाजार से माल खरीदते समय बेचनेवाले से इस बात की गारंटी ले लेनी चाहिए कि माल में तीन प्रतिशत से अधिक तेलांश नहीं है। नोषजन और फासफरिक एसिड के प्रतिशत परिमाण की गारंटी भी अवश्य ही ली जानी चाहिए। यह मुख्यतः नोषजनीय खाद ही है और मीट-मील (गोश्त के चूर्ण) के समान ही हल्की किस्म की जमीन में बहुत ही अच्छा असर दिखाती है।

इस खाद में के कुछ यौगिक जल्द पानी में घुल जाते हैं और कीटाणु भी इसे जल्द सड़ा देते हैं। जबतक फसल खेत में खड़ी रहती है, यह खाद धीरे-धीरे उसे नोषजन पुराती रहती है। खाद देने के बाद तुरंत ही जुताई कर देना नितांत आवश्यक है। हल-हैंगा आदि चलाकर खाद मिट्टी में दबा नहीं दी जायगी, तो पक्षी उसे चुग लेंगे। अंकुरित बीजों या नवजात पौधों की कोमल जड़ों को यह खाद क्षति पहुंचाती है। इसलिए उसे बीज बोने से पहले ही खेत में दे देना चाहिए।

मछली की खाद संपूर्ण खाद है। इसमें नोषजन, पोटाश और फासफरिक एसिड के साथ-ही-साथ कैलशियम (चूना) भी पाया जाता है। इसमें अधिकांश आणविक पदार्थ या सूक्ष्म तत्व (trace elements) भी विद्यमान हैं। इसलिए इस खाद का उपयोग करने से मिट्टी में किसी प्रकार का अभाव रह ही नहीं जाता है। इसमें विटामिन (जीवन तत्व) भी रहते हैं, जो किसी-न-किसी रूप में मिट्टी में रहनेवाले कीटाणुओं या शाकाणुओं के भरण-पोषण और उनकी वृद्धि में सहायक होते हैं। इस खाद में कैलशियम फासफेट की मात्रा अधिक होने के कारण नत्रीभवन की क्रिया करनेवाले कीटाणु अपना कार्य तीव्र गति से पूरा करने में जुट जाते हैं।

यह खाद जिस फसल को दी जाती है, उसके बाद में बोई गई फसल को भी लाभ पहुंचाती है। इस खाद से प्रति एकड़ पैदावार तो बढ़ती ही है, साथ ही पौधों के गुण-धर्म में भी सुधार हो जाता है। मछली की खाद देकर उगाये गये गन्ने के रस का गुड़ सुनहरा पीला होता है। चारागाह और घास की फसलों को खाद देने से भेड़ों और मवेशियों की तंदुरुस्ती काफी सुधर जाती है। इस खाद से जमीन की उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है। यह खाद किसी भी किस्म की जमीन में दी जा सकती है। नाज की फसल को मछली की किस्म के अनुसार २०० से ३५० पौंड प्रति एकड़ खाद दी जाती है। इसे खली, हड्डी का चूरा या बोन मील और अमोनियम सलफेट में मिलाकर दे सकते हैं। हड्डी के चूर्ण के बदले में भाप दी गई हड्डी का चूर्ण ही काम में लिया जाना चाहिए। अमोनियम सलफेट ५ भाग और हड्डी का चूरा ४ भाग मिलाकर मिश्रण तैयार करके उसमें मछली का खानो मिलाया जाता है।

६—चूने की खाद

कई ऐसे पदार्थ हैं, जो खाद की तरह खेत में दिये तो जाते हैं, किंतु ये पदार्थ खुद खाद नहीं हैं। कारण ये, वस्तुएं वनस्पति पोषक पदार्थों का काम दे नहीं सकती हैं। इन पदार्थों को खेत में डालने से मिट्टी में कुछ रासायनिक परिवर्तन होते हैं, जिससे मिट्टी में के भोज्य पदार्थ घुलनशील अवस्था में आ जाते हैं। ये पदार्थ हैं—चूना, जिपसम (हरसोंठ) और नमक। इन्हें अप्रत्यक्ष खाद कहते हैं। ये जमीन में जरूरत लायक मौजूद रहते ही हैं।

चूना पौधे के भोज्य पदार्थों में से है। परंतु पौधे को इसकी बहुत ही कम मात्रा में आवश्यकता होती है, क्योंकि भारत की अधिकांश जमीनों में यह पर्याप्त मात्रा में रहता है। मिट्टी में ५ प्रतिशत चूने का अंश रहना आवश्यक है। जिस जमीन में चूने की कमी हो, उसे ही यह खाद दी जानी चाहिए।

चूना सदियों से खेतों में डाला जाता है। कैलशियम कार्बोनेटयुत पदार्थ जलाने से चूना बनता है। चूना, कंकर, चूनायुक्त रेत, चूनावाली मिट्टी आदि जलाने का मतलब है, उसमें के कार्बानिक एसिड को ताप द्वारा निकाल बाहर करना। इस प्रकार तैयार किया गया कली का चूना बाद में पानी डालकर बुझाया जाता है, जिससे गरमी पैदा होती है और चूने का महीन चूरा हो जाता है। यह वातावरण में से कार्बानिक एसिड ग्रहण कर लेता है, जिससे पुनः कार्बोनेट ऑफ लाइम का निर्माण हो जाता है। खेत की मिट्टी पर इसी का असर पड़ता है।

चूने की भट्टी की राख में चूना और पत्थर के कोयले या लकड़ी की राख मौजूद रहती है। इसमें २० से ६० प्रतिशत तक चूना रहता है। मिट्टी में मिल जाने पर चूना कैलशियम कार्बोनेट में बदल जाता है। इसलिए इसको खेत में देने से वही असर होता है, जो चूना देने से होता है। बुझा हुआ चूना बहुत ही महीन हो जाता है। यह मिट्टी में अच्छी तरह से मिल जाता है, जिसका बहुत ही अच्छा असर पड़ता है। चूना डालने से चिकनी मिट्टीवाली जमीन का पोत (texture) सुधर जाता है। किंतु न तो

चूना प्रतिवर्ष दिया जाना चाहिए और न अधिक मात्रा में देना ही उचित है। फसल बोने से काफी दिनों पहले ही इसे खेत में फैलाकर मिट्टी में मिला देना चाहिए।

जमीन को चूने की आवश्यकता है या नहीं, यह बात मिट्टी की जांच करने पर ही ज्ञात हो सकती है। जिस मिट्टी में एक प्रतिशत से कम कार्बोनेट ऑफ लाइम हो, उसे ही चूना देना लाभदायक है। ०·२० प्रतिशत कार्बोनेट ऑफ लाइम पाया जाय, तो चूना देना अनिवार्य है। खेत की मिट्टी कांच की नली में भर दी जाय। इसपर थोड़ा-सा गंधाकाम्ल डालकर नली कान से लगाई जाय। यदि सायं-सायं की आवाज सुनाई दे, तो जान लेना चाहिए कि चूना देना आवश्यक है। जिस मिट्टी में चूना मौजूद होता है, वह तेजाब डालते ही उबलने लगती है। मिट्टी पर 'हायड्रोक्लोरिक एसिड' का हल्का घोल डालने पर अगर झाग-से न उठें, तो मान लेना चाहिए कि मिट्टी में फसल को नीरोग रखने के लिए जितने चूने की आवश्यकता है, उतना विद्यमान नहीं है। सुपरफासफेट ऑफ लाइम, फासफेट ऑफ लाइम (हड्डी) या जिपसम (सलफेट ऑफ लाइम) देने से भी चूने की कमी की पूर्ति नहीं हो पाती है। गैस लाइम से भी कोई फायदा नहीं होता है।

चूने से मिट्टी का पोत सुधरता है और खेत की मिट्टी में के भोज्य पदार्थों को जड़ों द्वारा सोखे जाने की अवस्था में ला देने में भी सहायता मिलती है। काली चिकनी मिट्टी वाली जमीन को चूना देने से मिट्टी के महीन कण आपस में चिपककर बड़े आकार के हो जाते हैं, जिससे दो कणों के बीच में कुछ ज्यादा जगह छूटी रह जाती है। इससे खेत में का जरूरत से ज्यादा पानी जमीन में गहरा उतर जाता है। चूना दिये गये खेत में, गरमी के दिनों में दरारें नहीं पड़ती हैं। मिट्टी में के पानी का ऊपर की सतह की ओर आने का तनाव (Surface tenson) बढ़ जाने से फसल को काफी लाभ पहुंचता है। चिकनी मिट्टी पर पहले साल चूने का कुछ भी असर नजर नहीं आता है। चूना देने के बाद हर साल थोड़ा-थोड़ा असर दिखाई देने लगता है। चूने के ही कारण लोष्ठन-क्रिया (flocculating action) नहीं हो पाती है। चूने से बने कैलशियम कार्बोनेट पर पानी और कार्बोनिक एसिड के कारण, कुछ विशेष प्रकार

के परिवर्तन होते हैं, जिससे घुलनशील कैलशियम बाई कार्बोनेट का निर्माण होता है।

हल्की रेतीली जमीन में, चूने के कारण , मिट्टी के महीन कणों में एक दूसरे से चिपक जाने की शक्ति आ जाती है। परंतु बहुत ही हल्की जमीन को मन चाहे जितना कली का चूना देना लाभदायक नहीं है। कारण, चूना देने से जैव पदार्थों के ओषिदीकरण की क्रिया बहुत ही तेजी से होने लगती है।

रासायनिक दृष्टि से कार्बोनेट ऑफ लाइम मिट्टी के लिए एक मूल्यवान पदार्थ है। जैव पदार्थों पर क्रिया करनेवाले जीवाणुओं की वृद्धि में इससे काफी सहायता मिलती है। चूने के अभाव में जैव पदार्थों के सड़ने से धरणिकाम्ल या काष्ठाम्ल (Humic acid) पैदा होता है, जिससे नोषजन पुरानेवाले जीवाणु और अमोनिया को नत्रेत में बदलनेवाले जीवाणुओं का कार्य रुक-सा जाता है और फंगस (गोमज) तथा संचक (mould) जन्म ग्रहण कर लेते हैं, जो पौधे के भोजन को ही खाने लगते हैं।

यदि जमीन में अम्लता पैदा हो जाने की संभावना हो, तो चूना की खाद देना हितकर है। ऐसी जमीनों में सेंद्रिय खाद देने से खट्टापन और भी बढ़ जाता है।

यह निश्चित हो चुका है कि कैलशियम कार्बोनेट के अभाव के ही कारण फसल पर गोमज रोग आक्रमण करते हैं। चूना देने पर ये नष्ट हो जाते हैं। चूनेवाली जमीन पर उगी हुई फसलें नीरोग और हृष्ट-पुष्ट होती हैं। कार्बोनेट ऑफ लाइम के कारण जमीन में के नोषजन यौगिक घुलनशील अवस्था में आ जाते हैं। किंतु साथ ही पोटाश और फासफरिक एसिड भी इस अवस्था को प्राप्त हो जाते हैं।

चूने की खाद कई प्रकार की होती है—(१) भट्ठी का चूना (२) गैस साफ करने के काम में लिया गया चूना (३) कली का चूना (४) चूने के कंकर (५) चाक या खड़िया मिट्टी (६) शंख-सीपी, कौड़ी आदि और (७) चूनेवाली मिट्टी।

वनस्पति पोषक चार मुख्य पदार्थों में चूना भी है। पौधे की देह में चूना अधिक मात्रा में रहता है। अंगूर की बेल की राख में ४३ प्रतिशत

तक चूना पाया जाता है। चूने के संयोग से जमीन में कुछ रासायनिक पदार्थ पैदा होते हैं, जो पौधों के लिए हितकर हैं। जैव पदार्थों के सड़ने से नाइट्रिक एसिड (शोरे का तेजाब) बनता है। चूने का संयोग होते ही 'नाइट्रेट ऑफ लाइम' बन जाता है और मिट्टी में के पोटाश में मिलते ही 'नाइट्रेट ऑफ पोटाश' बनता है, जो एक मूल्यवान खाद है। लोहा, तांबा आदि के हानिकारक यौगिकों के बुरे प्रभाव को रोकने में भी चूने से सहायता मिलती है। मिट्टी की अमोनिया को रोकने की शक्ति बढ़ जाती है। जिस जमीन को सेंद्रिय खाद बरसों से दी जा रही हो, उसमें चूना देने से बिना सड़े सेंद्रिय पदार्थ शीघ्र सड़ने लग जाते हैं और अमोनिया आदि यौगिकों का निर्माण हो जाता है, जो पौधों के भोजन का काम देते हैं। जमीन में नोषजन होने पर भी पौधे उसे ग्रहण नहीं कर सकते हैं। चूना इसे अमोनिया में परिणत कर देता है और तब जड़ें उसे आसानी से ग्रहण कर लेती हैं। जिस जमीन में चूने की खाद दी जाती है या चूने की भट्टी लगी होती है, उसमें फसलें बहुत अच्छी बढ़ती और पकती हैं। चूने के प्रभाव से हल से ढेले छोटे और कम उखड़ते हैं, और बैलों को जुताई में कम मेहनत पड़ती है। चिकनी मिट्टी के कण बहुत ही छोटे होते हैं और वे एक-दूसरे से चिपके रहते हैं। चूने के प्रभाव से कण अलग-अलग हो जाते हैं और भारी जमीन हल्की हो जाती है।

हल्की जमीन में चूना दूसरा ही गुण दिखाता है। चूने से मिट्टी के कण ज्यादा पास-पास हो जाते हैं, जिससे ढेला बंधने लगता है। चूने के प्रभाव से मिट्टी की संलग्नशीलता (Cohensive power) और केशाकर्षण-शक्ति बढ़ जाती है, जिससे मिट्टी ज्यादा पानी सोख सकती है और मिट्टी में स्थित पानी कणों के बीच की खाली जगहों में होकर ऊपर की सतह पर आने लगता है।

चूना जमीन की नीचे की सतह पर उतर जाता है, जिससे दो-एक साल बाद जमीन कमजोर पड़ जाती है। इसलिए जिस जमीन में सेंद्रिय या जैव-पदार्थों की मात्रा अत्यधिक हो, उसी में चूना दिया जाना चाहिए। हर साल चूना देना भी लाभदायक नहीं है।

भट्टी के चूने की खाद बहुत गरम होती है, इसलिए जिस जमीन में

खरपतवार बहुत ज्यादा उगते हों और दीमक का भी दौर-दौरा हो, उसी को यह खाद दी जानी चाहिए। भट्टी के चूने का खाद की तरह उपयोग बहुत ही कम किया जाना चाहिए।

पानी छिड़ककर ठंडा कर लेने के बाद ही भट्टी के चूने का खाद के रूप में प्रयोग करना चाहिए। कहीं-कहीं भट्टी के चूने को एक लंबे समय तक खुला पड़ा रहने देते हैं, जिससे यह वातावरण में से नमी सोखकर ठंडा हो जाता है। यह चूना कार्बोनेट के रूप में फसल को फायदा पहुंचाता है। चूना-कंकर को इस रूप में आने में बहुत लंबा समय लगता है। शंख-सीपी आदि जलाकर ही खेतों में दिये जाते हैं।

यह खाद हर दसवें साल ही दी जानी चाहिए। प्रति एकड़ पांच-छः मन से अधिक चूना कदापि न दिया जाय। जितना चूना देना हो, उतना पंद्रह-पंद्रह दिन के अंतर से दो-तीन बार में दिया जाय।

हरेक तरह के नाज, फल-फूल और साग-भाजी की फसल को यह खाद दी जा सकती है। द्वि-दल जाति की फसल को इससे ज्यादा फायदा पहुंचता है। चूने से फल-फूल का स्वाद और सुगंध बढ़ जाती है। जहाँ संभव हो, खली, विष्टा, गोबर, आदि के साथ ही यह खाद दी जानी चाहिए। नारंगी, नीबू, केला, आम, अंजीर, जामफल (अमरूद), रामफल, पपीता आदि के झाड़ों को चूना देने से फल मीठे और खुशबूदार हो जाते हैं। तीन भाग विष्टा, खली या गोबर की खाद में एक भाग चूना मिलाकर दिया जाय। यह खाद वर्षा शुरू होने से पहले ही दी जानी चाहिए।

गैस-लाइम—पत्थर के कोयलों से गैस तैयार की जाती है। कोल गैस को शुद्ध करने के लिए बुझाये हुए चूने में से निकालते हैं। चूना गंधक के यौगिकों को चूस लेता है और कैलशियम के सलफर कंपाउंड बन जाते हैं। भारी जमीन के लिए यह एक अच्छी खाद मानी जाती है; किन्तु है कुछ हानिकारक ही। खेत की मिट्टी के अंदर हर फसल को हानि पहुंचानेवाले कीड़ों को नष्ट करने के लिए इसे काम में लाया जा सकता है।

७—नमक की खाद

जिस जमीन में नमक रहता है, उसमें पैदावार अच्छी नहीं आती है

और अगर कहीं नमक की मात्रा अधिक हुई तो फसलें पैदा ही नहीं होती हैं। समुद्र-तटवर्ती-प्रदेशों में यह बात साफ तौर से दिखाई देती है।

जिन खेतों में पौधों के शाखा-पत्तों की बाढ़ ज्यादा होती है और दाना अच्छा नहीं भरता है, उनमें नमक डालने से लाभ होता है। नमक देने से शाखा-पत्तों की बाढ़ रुक जाती है और दाना अच्छा भरता है।

भारत में खाने का नमक खाद के रूप में काम में नहीं लिया जाता है। किन्तु पश्चिमी देशों में चरागाहों में नमक की खाद दी जाती है, जिससे घास अच्छी जमती है। जिपसम और नमक में वनस्पति पोषक पदार्थों का एकदम अभाव है। इसलिए नमक से प्रत्यक्ष रूप से फसल को कोई लाभ नहीं पहुंचता है। नमक मिट्टी के दोषों को दूर करता है; मिट्टी में रहकर फसल को हानि पहुँचानेवाले कीड़े मर जाते हैं और पौधे तंदुरुस्त बने रहते हैं। नमक से पौधों की भूख शांत नहीं की जा सकती है।

नमक अकेला ही, और दूसरे खादों में मिलाकर भी, काम में लिया जाता है। पश्चिमी देशों में आलू, जौ आदि को नमक की खाद दी जाती है। घुलनशील सोडियम क्लोराइड मिट्टी और खाद में के अघुलनशील पोटाश को घुलनशील अवस्था में ला देता है। आलू को ज्यादा नमक की जरूरत रहती ही है। नमक अप्रत्यक्ष खाद है। कई प्रकार की जड़वाली फसलों को ज्यादा पोटाश की आवश्यकता होती है। नमक देने पर इन फसलों को पोटाश-युक्त खाद देने की शायद ही कभी जरूरत पड़ती है।

केनाइट में साधारण या खाने के नमक का रहना फसलों के लिए हानिकर है। बहुत ही कम फसलें ऐसी हैं, जो नमक देने पर अच्छी पैदावार देती हैं। नमक में का क्लोराइड ही फसल को क्षति पहुंचाता है। कैल-शियम क्लोराइड से तो फसल को बहुत अधिक हानि पहुंचती है। सोडियम सलफेट आदि सोडियम के यौगिकों से किसी प्रकार की हानि नहीं पहुचती है। साधारण नमक मिट्टी के कणों को अधिक सघन करने की क्षमता रखता है। विशेषज्ञों का मत है कि साधारण नमक गोबर या घूरे की खाद को सुरक्षित रखने में सहायक होता है। नमक खाद के कार्य में रुकावट डालता है। अतएव जो जमीन ऊंचे दरजे की नहीं होती है, अर्थात जिसमें अत्यधिक मात्रा में नोषजन न हो, उसमें नमक कदापि नहीं दिया जाना

चाहिए। नमक से पौधों के शाखा-पत्तों की बाढ़ रुक जाती है, जिससे वे जमीन पर गिरते नहीं हैं या कम गिरते हैं और इस प्रकार अधिक मात्रा में दिये गये सोडियम नाइट्रेट से पैदा होनेवाला कुप्रभाव काफी कम हो जाता है। आवश्यकता से अधिक नोषजन दे दिया जाने पर मिट्टी में नोषजन का संग्रह बहुत ज्यादा बढ़ जाता है। फासफेट और पोटाश-युक्त खाद देने से यह दोष दूर हो जाता है और साथ ही पैदावार भी ज्यादा आती है। साधारण नमक या तो पौधों की जड़ों द्वारा अधिक मात्रा में नोषजन सोख लेने की क्रिया में रुकावट डालता है या उससे अधिक हितकारी रीति से उपयोग में लिये जाने के कार्य में बाधा उपस्थित करता है।

नाइट्रेट ऑफ सोडा और पोटाशियम क्लोराइड के संयोग से शोरा बनते समय एक पदार्थ प्राप्त होता है, जिसे गन पाउडर साल्ट कहते हैं। इसमें कुछ नत्रेत (नोषेत) और थोड़ा-सा पोटाश रहता है। यह भी खाद का काम देता है।

८—शीरे की खाद

शकर के कारखानों में शीरा निकलता है, जो बेकार-सा ही माना जाता है। जबतक अन्य किसी लाभदायक काम में लाया नहीं जा सकता है, इसे खाद की तरह काम में लाना ही हितकारक है। प्रति एकड़ ९० से २७० मन तक शीरा फसल बोने से दो-तीन महीने पहले खेत में फैलाकर मिट्टी में मिला दिया जाना चाहिए। शाहजहांपुर की कृषि-प्रयोगशाला में किये गये प्रयोगों से पाया गया है कि शीरा की खाद देने से गन्ने की पैदावार ३५ प्रतिशत बढ़ जाती है। असम, बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश आदि में शीरा की खाद देने से जावा जाति के गन्ने की फसल को काफी लाभ पहुंचा है। कानपुर में किये गये प्रयोगों से पाया गया है कि गन्ना लगाने से दो मास पूर्व प्रति एकड़ ३३० मन शीरे की खाद देने से वही परिणाम होता है, जो उर्वरक देने से होता है। अंकुर निकलते समय इस खाद को देने से पैदावार घट जाती और रस में शकर की मात्रा भी कम हो जाती है। हल्की जमीन को इस खाद से ज्यादा फायदा पहुंचता है। नगीना में किये गये प्रयोगों से पाया गया कि रोपे (पौध या बेहन) लगाने से काफी

समय पहले ही यह खाद धान की फसल को देना लाभदायक है।

यह एक सर्वमान्य बात है कि कीटाणु द्वारा ही मिट्टी में नोषजन स्थापित किया जाता है। लेकिन भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉक्टर धर और उनके सहयोगियों का मत है कि कीटाणुओं के नितांत अभाव में भी नोषजन की स्थापना हो जाती है—जमीन को अमोनिया लवण मिल जाते हैं।

शीरे की खाद देने से जमीन में नोषजन का संग्रह बढ़ जाता है और मिट्टी की पानी संग्रहीत करके सुरक्षित रखने की क्षमता काफी बढ़ जाती है।

शीरा जमीन में स्थित नोषजनीय पदार्थों की रक्षा करता है। मिट्टी में नोषजन की मात्रा बढ़ाने के लिए ९० मन शीरा काफी पानी घोलकर खेत में छिड़क दिया जाय। शीरा की खाद देने के बाद प्रति सप्ताह गुड़ाई करते रहना चाहिए। खाद देने के बाद जितना पानी सींचा जा सके, उतना अवश्य ही सींचा जाना चाहिए। मिट्टी ढीली बनाये रखना जरूरी है, कारण काफी हवा लगे बिना लाभ होना संभव नहीं है।

डॉ० जे० डब्लू० लेदर ने उत्तर प्रदेश के भिन्न-भिन्न भागों की ऊसर जमीनों को फसल बोने लायक बनाने के प्रयोग किये थे। जिपसम या हर-सोंठ डालकर ऊसर जमीन को फसल बोने लायक बनाने में प्रति एकड़ सातसौ-आठसौ रुपया खर्च बैठता है। इससे साफ है कि जिपसम का उपयोग बहुत ही महंगा पड़ता है।

डॉ० दिलीपसिंह और श्री एस० डी० निजावान ने लायलपुर, लाल-काकु, मांटगुमरी और बारा फार्म की जमीनों को जिपसम और सोडि-यम क्लोराइड के मिश्रण का उपयोग करके उपजाऊ बनाने का प्रयत्न किया और उन्हें अपने इस प्रयत्न में कुछ सफलता भी मिली है। किन्तु इसके बदले में शीरे का प्रयोग करने में खर्च कम बैठता है। कानपुर और इलाहाबाद की ओर तथा मैसूर में प्रति एकड़ एक से दस टन तक शीरा डालकर ऊसर जमीन को उपजाऊ बनाने में सफलता मिली है। प्रयाग के पास के एक ग्राम और उन्नाव में प्रति एकड़ २ से ५ टन तक शीरे की खाद देकर धान की अच्छी फसल ली जा चुकी है। मैसूर सरकार ने एक

एकड़ ऊसर जमीन में एक टन शीरे की खाद देकर लगभग १५०० पौंड धान की पैदावार प्राप्त की है।

हवाई द्वीप, जावा, प्रयाग, बंगलोर आदि स्थानों में किये गये प्रयोगों से पाया गया कि शीरे के सड़ने की क्रिया में कई प्रकार के जैव क्षार बनते हैं, जो ऊसर जमीन में विद्यमान क्षारों को बेकार बना देते हैं। इसके अलावा शीरा के सड़ने और उसमें के कर्बोज के ओषिदीकरण से अधिक मात्रा में कार्बन-द्वि-ओषिद अस्तित्व में आ जाता है, जो सोडियम-कार्बोनेट को बाय कार्बोनेट में बदल देता है। कार्बन-द्वि-ओषिद के प्रभाव में मिट्टी भुर-भुरी-फोसरी हो जाती है। शीरा मिली हुई मिट्टी में नमी की मात्रा भी अपेक्षाकृत अधिक ही होती है। शीरे में मिलाये गये चूने के कारण धीरे-धीरे सोडियम का स्थान 'पर कैलशियम' ले लेता है। शीरे में का गंधकाम्ल धीरे-धीरे कैलशियम कार्बोनेट को कैलशियम सलफेट में बदल देता है, जिसके कारण ऊसर जमीन में के क्षारों पर प्रतिक्रिया होती है और ऊसर जमीन फसल बोने लायक हो जाती है। शकर के कारखानों में असावधानी से जमीन पर फैलनेवाले रस, शीरा आदि से भीगी हुई मिट्टी भी यही असर दिखाती है।

शकर के कारखानों से प्रेस्ड केक या प्रेस्ड मड नाम से पहचाना जाने-वाला एक गौण माल प्राप्त होता है, जिसमें नोषजन और सेंद्रिय पदार्थ मौजूद हैं। इसमें फासफेट भी अधिक मात्रा में रहता है। गन्ने के लिए यह एक बहुत ही कीमती खाद है। मद्रास राज्य का अनुभव है कि प्रति एकड़ दस टन प्रेस्ड केक की खाद देने से गन्ने की उपज १८·५ प्रतिशत बढ़ जाती है। शकर फैक्टरियों के नजदीक के काश्तकार इस खाद का उपयोग करके जमीन की उत्पादन-क्षमता बढ़ा सकते और अधिक पैदावार प्राप्त कर सकते हैं।

६—चिंदे, करतन, झाड़न आदि की खाद

सूत और कपड़े के कारखानों, रेशम, ऊन, आदि नाना प्रकार के सामान तैयार करनेवाले कारखानों से निकलनेवाले बेकार पदार्थों से ऊंचे दरजे की नोषजनयुक्त खाद तैयार की जा सकती है। बिना मिलावट की रेशम

और ऊन में १७ प्रतिशत तक नोषजन रहता है। दरी, निवाड़, डेरे आदि बनानेवाले कारखानों की कतरन में १४ प्रतिशत नोषजन पाया जाता है।

बेकार बाल, पक्षियों के पंख, ऊन, ऊनी वस्त्र, पुरानी फेल्ट आदि भी खाद का काम देते हैं। ये सभी दृष्टि से सींग जैसे ही हैं। बाल और ऊन में विशेष अंतर है। ऊन को भिन्न प्रकार के बाल कह सकते हैं। शुद्ध और सूखी अवस्था में, चर्बी निकाल लेने के बाद, इसमें १६ प्रतिशत नोषजन पाया जाता है। भिन्न-भिन्न प्रकार के मिले-जुले चिंदों व कतरन में नोषजन का प्रतिशत परिमाण कुछ कम ही होता है, कारण आजकल ऊनी कपड़ों में सूत का मिश्रण अधिक मात्रा में किया जाने लगा है। तेल, कचरा आदि के अलावा इनमें सूत का अंश ही अधिक होता है। इन में ४ से १२ प्रतिशत तक नोषजन होता है। जड़वाली तथा अन्य फसलों को नोषजन पुराने के लिए इस प्रकार की खाद का उपयोग किया जा सकता है। किन्तु यह धीमी गति से असर करती है, जिससे खाद की दृष्टि से यह लाभदायक नहीं पाई गई है। बागवानी की फसलों के लिए यह लाभदायक है, किन्तु सड़ाने के बाद ही इसका उपयोग किया जाना चाहिए। ऊनी वस्त्र, पंख, फेल्ट आदि को छोटे-छोटे टुकड़े करके ही गढ़े में डालना चाहिए। इनमें ११ से १३ प्रतिशत तक नोषजन रहता है।

बाल, कंबल के टुकड़े, कपड़े के टुकड़े आदि जल्दी सड़ते नहीं हैं। इसलिए इनकी खाद उन्हीं खेतों में दी जानी चाहिए, जिनमें प्रतिवर्ष खाद देना संभव न हो। पूरी तरह से सड़ा लेने के बाद ही खाद खेत में डाली जानी चाहिए।

फल-झाड़ों के लिए यह खाद फायदेमंद है। फलों में स्वाद और आकार का ही महत्व है। इसलिए फल-झाड़ों को सदा ऐसी नोषजनीय खाद ही दी जानी चाहिए, जो मौसमभर धीरे-धीरे ज्यादा समय तक, पौधों को भोजन देती रहे। प्रति वर्ष इस प्रकार की खाद देते रहने से जमीन में भोज्य पदार्थ जमा होते रहते हैं और ज्यों-ज्यों पौधा बढ़ता जाता है, खाद धीरे-धीरे सड़ती हुई भोजन पूरा करती रहती है। इस प्रकार थोड़ी-थोड़ी खूराक धीरे-धीरे और नियमित रूप से मिलती रहने से, पौधों

की बाढ़ समान रूप से होती है, जिससे पैदावार ऊंचे दरजे की आती है और पौधे भी नीरोग और पुष्ट होते हैं।

जमीन का पोत सुधारने और मिट्टी की तरी सोखकर धारण करने की शक्ति बढ़ाने में ऐसी खादें काफी सहायता पहुंचाती हैं। किंतु भारत में ये पदार्थ बहुत ही कम खाद के काम में लिये जाते हैं। इस प्रकार की रद्दी चीजों में प्रतिशत कितना नोषजन रहता है इस बात की जांच-पड़ताल भी आज तक की ही नहीं गई है।

१०—गटर फ्लाय

कपड़े और सूत के कारखानों में रुई साफ की जाती है। रुई में के कचरा-धूल, निरुपयोगी रुई आदि को 'गटर फ्लाय' कहते हैं। इससे अच्छी खाद तैयार की जा सकती है। इधर कुछ वर्षों से इस पदार्थ की खाद काम में ली जाने लगी है। नागपुर कृषि विद्यालय की प्रयोगशाला का अनुभव है कि काफी तरी मिलने पर एक महीने में ही यह पदार्थ पूरी तरह से सड़ जाता है। इसमें प्रतिशत ८५ सेंद्रिय पदार्थ और एक प्रतिशत नोषजन रहता है। गढ़े में सड़ाकर तैयार की गई खाद खरीफ फसलों को दी जा सकती है। खरीफ फसल निकाल लेने के बाद गटर फ्लाय को खेत में फैलाकर जुताई करके मिट्टी में मिला दिया जाय। शीतकाल या वर्षाकाल की वर्षा से यह अच्छी तरह सड़ जाती है। इस खाद से फसल को आवश्यक जैव तत्व प्राप्त हो जाता है। प्रति एकड़ चार टन गटर फ्लाय दिया जाता है।

११—थूहर की खाद

भारत के अधिकांश प्रदेशों में थूहर पाया जाता है। नागफनी, डंडिया आदि इसकी कई जातियां हैं। सभी प्रकार की थूहर से खाद तैयार की जा सकती है।

थूहर के छोटे-छोटे टुकड़े गढ़े में भरकर मिट्टी से ढक देने से तीन-चार मास में सड़कर उत्तम खाद बन जाती है। गढ़े में थूहर की खाद भरने के बाद, उसमें नारियल, आम आदि फल-झाड़ लगाये जायं, तो पौधे खूब बढ़ते हैं। ज्वार, गेहूं आदि सभी फसलों को यह खाद दी जा सकती है।

१२ – चमड़े के टुकड़े की खाद

चमार-मोची, जूते-चरसा आदि बनाते हैं। चमड़े के टुकड़े, छीलन आदि को सड़ाकर खाद बनाई जा सकती है। शहरों में जूते, घोड़ों की काठी, साज-समान, मनीबैग, हैंडबैग, आदि बनाने के कारखाने और बड़ी-बड़ी दूकानें चलती हैं। इनमें से निकलनेवाली चमड़े की छीलन, टुकड़े आदि को चूना मिलाकर सड़ाने से उत्तम खाद बनती है।

चमड़े की सभी निरुपयोगी वस्तुओं को राख या चूना मिलाकर गढ़े में भरकर सड़ा लिया जाता है। चमड़ा जल्दी सड़ता नहीं है और सड़ने के लिए नमी की भी आवश्यकता होती है। इसलिए गढ़े में डाले गये पदार्थों पर पानी भी छिड़कते रहना चाहिए।

यह खाद सभी प्रकार की फसलों के लिए अच्छी है। प्रति एकड़ सात से पंद्रह गाड़ी खाद दी जाती है। फल-झाड़ को जड़ें खोलकर प्रति पौधा सात-आठ सेर खाद दी जानी चाहिए।

चमड़े के निरुपयोगी पदार्थों के छोटे-छोटे टुकड़ों को पांच-सात मिनट तक पानी में डुबाकर रखा जाय। तब इन गीले टुकड़ों को निकालकर इनपर दस प्रतिशत शक्तिवाला गंधकाम्ल डाल दिया जाय। इसके बाद अच्छी तरह से सुखाकर कूट-पीटकर महीन चूर्ण कर लिया जाय। यह चूरा एक उत्तम खाद है।

चमड़े को रंग-पकाकर खालें तैयार की जाती हैं। सूखे चमड़े में प्रतिशत १६ तक नोषजन पाया जाता है। खराब होने से बचाने के लिए चमड़े पर 'ग्रीज' भी लगाया जाता है। चमड़े की कतरन, छीलन, टुकड़े आदि पीसकर बनाया गया चूर्ण बहुत ही धीरे-धीरे असर करता है। इन पदार्थों को भाप से अत्यधिक गरमी पहुंचाकर चरबी निकाल ली जाती है। यह कुछ जल्दी सड़ जाते हैं और तैयार माल में नोषजन की प्रतिशत मात्रा भी कुछ अधिक होती है। फिर भी इसे सीधे खेत में डालना लाभदायक नहीं है। चूर्ण में ५ प्रतिशत नोषजन होता है। चूर्ण को सीधे खाद की तरह खेत में डालना आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नहीं है।

१३—सामुद्रिक वनस्पति की खाद

जल-प्रवाहों के साथ समुद्र में जा मिलनेवाले पदार्थ एकदम नष्ट नहीं हो जाते हैं। समुद्र में उगनेवाली वनस्पति इन पदार्थों को ग्रहण करके ही वृद्धि पाती है और इन वनस्पतियों से खाद तैयार करके लाभ उठाया जा सकता है। समुद्र-तटवर्ती किसान इस वनस्पति के महत्व से भली प्रकार परिचित हैं।

समुद्र-तटवर्ती प्रदेशों में समुद्र के जल में उगनेवाली वनस्पतियों को सड़ाकर खाद बनाई जाती है। ये पौधे अपने पोषण के लिए समुद्र के जल में से क्षारांश ग्रहण करते हैं। भारी जमीन में पौधों को खेत में बिछाकर हल चलाकर मिट्टी में दबा दिया जाता है। इस खाद में सभी प्रकार के वनस्पति पोषक पदार्थ रहते हैं। मलाबार, गोवा आदि भूभागों में प्रति एकड़ ३०-३५ गाड़ी खाद दी जाती है। नारियल के लिए यह खाद बहुत ही लाभकारी साबित हुई है। समुद्र-तट से अधिक दूरी पर स्थित प्रदेश इस खाद से लाभ नहीं उठा सकते हैं।

सामुद्रिक वनस्पति में, सामान्यतः, प्रतिशत ७६ पानी, १५ जैव पदार्थ, ०·६ नोषजन, ०·१५० फासफरिक एसिड और १·५० पोटाश विद्यमान है। यह वनस्पति अति शीघ्र सड़ जाती है। इस खाद से पोत सुधर जाता है। यह गोबर-घूरे की खाद के समान ही गुणकारी है। थोड़ी मात्रा में फासफेट मिला देने से लाभ की मात्रा अवश्य ही बढ़ जाती है।

१४—जलज-वनस्पति की खाद

तालाब, नदी, नालों के पानी में नाना प्रकार की वनस्पतियां उगती हैं। इन्हें काटकर खाद के ढेर में गाड़कर सड़ाने से गोबर की खाद की उपयोगिता बहुत ही अधिक बढ़ जाती है। यदि गंड़ासे से काटकर छोटे-छोटे टुकड़े करके खाद के ढेर या गढ़े में दबा दिया जाय, तो ये बहुत जल्दी सड़ जाते हैं।

वर्तमान काल में देश के लगभग सभी प्रदेशों में जलज-वनस्पतियों से खाद बनाने की ओर बिल्कुल ही ध्यान नहीं दिया जाता है, जिससे प्रतिवर्ष करोड़ों मन पदार्थ बेकार ही नष्ट हो जाते हैं।

१५—लकड़ी के बुरादे की खाद

लकड़ी के बुरादे में वनस्पति पोषक पदार्थ रहते हैं। इससे खाद बनाई जा सकती है। यह सभी जगह सुलभ भी नहीं है। जहां बुरादा सरलता से मिलता है, वहाँ भी इसे खाद की तरह काम में नहीं लिया जाता है। गोबर, पत्ते, आदि के ढेर में दबाकर सड़ाने से इन खादों का वनस्पति पोषक गुण काफी बढ़ जाता है। केवल बुरादा ही खेत में डालने से फसल को कोई लाभ नहीं पहुंचता है। बुरादे को खेत की मिट्टी पर फैला देने से मिट्टी में की तरी का भाप बनकर उड़ जाना रुक जाता है।

लकड़ी चीरने के कारखानों से प्राप्त बुरादा जला दिया जाता या इधर-उधर फेंककर नष्ट कर दिया जाता है। नगरों में इसे भोजन बनाने के लिए ईंधन की जगह काम में लेते हैं। खाद के ढेर में गाड़ देना ही लाभ-दायक है। गमले भरने के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है। इससे पौधों की तंदुरुस्ती अच्छी रहती है। पेशाब में भिगोने से इस खाद की उपयोगिता काफी बढ़ जाती है।

१६—ईंट-खपरैल के चूरे की खाद

चिकनी मिट्टी ठोस होती है, जिससे उसमें फसलें अच्छी उपज नही दती हैं। चिकनी मिट्टीवाली जमीन को खोलने के लिए ही ईंट-खपरैल आदि का चूरा खेतों में डाला जाता है। बागीचों में इसे खाद की तरह काम में लाते हैं। इससे गमले भी भरे जाते हैं। ईंट-खपरैल और मिट्टी के बरतन भट्टी-अवां में पकाये जाते हैं। आग से जैव पदार्थ तो जलकर नष्ट हो जाते हैं और खनिज पदार्थ बच रहते हैं। जमीन सुधारने के लिए यह चूरा बहुत ही उपयोगी होता है। इस चूरे की खाद से मिट्टी में के जल का भाप बनकर उड़ जाना बहुत कुछ कम हो जाता है। पत्थर के चूरे में भी वनस्पति-पोषक पदार्थ होते हैं।

१७—साबुन की खाद

पौधों को तंदुरुस्त बनाये रखने के लिए साबुन के पानी की खाद देना

आवश्यक है । करीब पांच सेर पानी में एक बड़ी टिकिया के छोटे-छोटे टुकड़े डाल दिये जायं और ठीक तरह से घुल जाने पर काम में लाया जाय।

पत्तों को साबुन से धोने से क्रोटन के पौधे नीरोग रहते हैं। फर्न आदि गमलों में बोये गये पौधों के पत्तों को प्रति सप्ताह साबुन के पानी से धोते रहना चाहिए। साबुन के पानी से कीड़े मर जाते हैं।

फूलगोभी, गांठगोभी आदि विदेशी तरकारियों को साबुन का पानी सींचने से फायदा पहुंचता है। गुलाब, अंजीर आदि के पत्तों को अवश्य ही प्रति सप्ताह साबुन के पानी से धोते रहना चाहिए।

१८--हाथीदांत, सींग, सूम आदि की खाद

कई प्रांतों में हाथीदांत, सींग-सूम, हड्डी आदि से नाना प्रकार के पदार्थ बनाये जाते हैं। इनमें नोषजन का अंश अधिक रहता है। इसलिए उनके बुरादे या चूरे को सड़ाकर खाद के काम में लेना चाहिए। यह खाद सभी प्रकार की फसलों को दी जा सकती है। कड़े होने के कारण ये पदार्थ देरी से सड़ते हैं। गोबर की खाद के ढेर में डालने से धीरे-धीरे ये पदार्थ सड़ जाते हैं। इनके संयोग से गोबर की खाद अधिक गुणकारी हो जाती है। बंगाल में यह खाद काम में ली जाती है।

सींग, सुम, खुर आदि चमड़े और गोश्त की ही श्रेणी के पदार्थ हैं और इनके तत्व भी लगभग समान ही हैं। इनमें पानी का अंश बहुत ही कम होता है और नोषजन की मात्रा कुछ अधिक होती है। ये बहुत ही धीमी गति से सड़ते हैं, फिर चाहे कितने ही महीन क्यों न पीस लिये गये हों। अतएव, इनका खाद की तरह उपयोग करना अधिक लाभदायक नहीं है। इनका चूर्ण अकसर अन्य खादों में मिलाया जाता है। बाजार में बिकनेवाले पदार्थ में ७ प्रतिशत से १५ प्रतिशत तक नोषजन रहता है। सींग की छीलन और चूरे में १३ से १५ प्रतिशत तक नोषजन होता है।

: ६ :

उर्वरक और जमीन की उर्वरा शक्ति

देश के भिन्न-भिन्न राज्यों में सभी प्रकार की जलवायु में स्थित विभिन्न प्रकार की जमीनों में किये गये प्रयोगों से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि भारतीय भूमि की उत्पादन-क्षमता अंतिम सीमा तक घट गई है। फिर भी, कुछ कृषकों द्वारा प्राप्त उपज से यह बात स्पष्ट रूप से प्रमाणित हो गई है कि देश की जलवायु की वर्तमान अवस्था में भारत की भूमि की उत्पादन क्षमता अधिकांश में अच्छी और उत्साहवर्धक है। यह एक सर्वमान्य बात है कि अधिक पैदावार प्राप्त होने का मतलब है जमीन की उत्पादन शक्ति का कम होना और इसीलिए जमीन में लगातार फसलें बोते रहने पर अधिक मात्रा में खाद और उर्वरक देना अनिवार्य है।

संसार के सभी देशों में जाने कितने समय से सेंद्रिय या जैव खादों का ही उपयोग किया जाता रहा है। कृत्रिम या रासायनिक खाद या उर्वरक तो पिछले कुछ ही वर्षों से काम में लाये जाने लगे हैं। जमीन की उत्पादन-क्षमता बनाये रखने और पैदावार बढ़ाने के लिए ही नहीं, बल्कि वर्षा के जल के साथ घुलकर बह जाने तथा जमीन के अंदर अधिक गहराई पर उतर-कर जड़ों की पहुंच के बाहर चले जानेवाले भोज्य पदार्थों की पूर्ति के लिए भी, खेतों में प्रतिवर्ष काफी खाद देना अनिवार्य है।

अनेक विशेषज्ञों का यह मत है कि उर्वरक जमीन की भौतिक और रासायनिक अवस्था में हानिकर परिवर्तन कर देते हैं। किंतु सारे देश में आज तक किये गये प्रयोगों से पाया गया है कि अत्यधिक मात्रा में जैव खाद देने की अपेक्षा पौधों के भोज्य पदार्थ संतुलित मात्रा में देने से अच्छे परिणाम निकलते हैं। इसके अलावा उर्वरक देकर मिट्टी में के भोज्य पदार्थों का संतुलन बनाये रखा जा सकता है। जैव खादों में भोज्य पदार्थ एक निश्चित

मात्रा में ही विद्यमान रहते हैं और उनमें किसी भी प्रकार का परिवर्तन किया ही नहीं जा सकता है, जिससे मिट्टी में के भोज्य पदार्थों का संतुलन बनाये रखना असंभव-सा ही है। देश के कई कृषि-प्रयोग-क्षेत्रों में लगातार कई वर्षों तक, अमोनियम सलफेट, सुपरफासफेट तथा जैव खादों के तुलनात्मक प्रयोग किये जा चुके हैं, जिनसे पाया गया कि उर्वरकों के मिश्रण के रूप में संतुलित मात्रा में भोज्य पदार्थ दिये जाने पर पैदावार हर बार अधिक और अच्छी ही प्राप्त हुई है।

गोबर-घूरे की खाद, मिश्र खाद (कम्पोस्ट) आदि अधिक मात्रा में दी जानेवाली सेंद्रिय या जैव खाद देने से जमीन को जैव तत्व प्राप्त होता है। मिट्टी की जैव तत्व की कमी की पूर्ति करने में इन खादों से सर्वाधिक सहायता मिलती है। किंतु इनसे पौधों की भोज्य पदार्थों की मांग की पूरी तरह से पूर्ति नहीं की जा सकती है, कारण कि इनमें पौधों के भोज्य पदार्थों का परिमाण बहुत ही कम है। अतएव, इन खादों द्वारा संतुलित भोजन प्रस्तुत करने का प्रबंध किया ही नहीं जा सकता है। भारत में आम तौर से गोबर-घूरे की खाद ही सर्वाधिक मात्रा में दी जाती है। इस खाद में सामान्यतः प्रतिशत ०·५ नोषजन, ०·३ फासफरिक एसिड रहता है। इसपर से स्पष्ट है कि किसी फसल में पर्याप्त मात्रा में नोषजन और फासफेट पूरा करने के लिए बहुत ही ज्यादा मात्रा में यह खाद देना अत्यावश्यक है। यह तभी संभव हो सकता है जब गोबर के उपले जलाना एकदम ही बंद कर दिया जाय। सेंद्रिय या जैव खादों पर पिछले पृष्ठों में बहुत-कुछ लिखा जा सकता है।

जैव खाद देना अत्यावश्यक है किंतु साथ ही भोज्य पदार्थों की पूर्ति के हेतु उर्वरक भी अवश्य ही दिये जाने चाहिए, ताकि मिट्टी में भोज्य पदार्थों का संतुलन बनाये रखा जा सके। गोबर-घूरा या कम्पोस्ट की खाद या हरी खाद में सुपरफासफेट का संयोग कर देने से जमीन की उत्पादन क्षमता ऊंचे स्तर पर स्थिर रखी जा सकती है। हलकी किस्म की चूनामय जमीन में ६ टन जैव खाद देने से जमीन खराब नहीं हो पाती है और उपज भी १५० प्रतिशत तक बढ़ जाती है। इसके साथ ही हरी खाद और सुपर-फासफेट भी दे दिया जाय तो पैदावार ४०० प्रतिशत तक पहुंच जाती

है। कम्पोस्ट, गोबर-घूरे की खाद या हरी खाद के साथ-ही-साथ उर्वरक दे देने से पैदावार बहुत ज्यादा बढ़ जाती है।

कुछ विशेषज्ञों का मत है कि उर्वरक देते रहने से उपज तो अवश्य ही बहुत ज्यादा आती है ; किंतु इनकी सहायता से प्राप्त फसल के गुण-धर्म और पौष्टिकता की क्षमता अत्यधिक घट जाती है एवं जमीन की उत्पादन-क्षमता भी गिर जाती है। इस कथन में सत्यांश अवश्य है। ज्यादा उपज प्राप्त कर लेने पर जमीन के भोज्य पदार्थों के भंडार में बहुत ज्यादा कमी हो जाती है, जिससे वह कमजोर हो जाती है। किंतु जैव खादों और उर्वरकों द्वारा भोज्य पदार्थ की कमी की पूर्ति कर देने पर यह दोष आप-ही-आप दूर हो जाता है। प्रयोगों से प्रमाणित हो गया है कि भोज्य पदार्थों की कमी की पूर्ति करते रहने पर जमीन कभी खराब नहीं होती है। पश्चिमी देशों में इस संबंध में हजारों प्रयोग किये जा चुके हैं। वूबर्न (wuburn) प्रयोगशाला पर लगातार ५० वर्ष तक अमोनियम सलफेट की खाद देते रहने से जमीन खराब तो अवश्य हो गई, किंतु चूना की खाद देने से जमीन की उर्वरा शक्ति फिर से मामूली स्तर पर आ गई।

यह सर्वमान्य है कि भारत की जमीन में नोषजन की कमी है और नोषजनवाली खाद का फसलों पर तुरंत ही असर पड़ता है। यह भी निर्विवाद सिद्ध हो गया है कि अमोनियम सलफेट देने से पैदावार निश्चित रूप से, अधिक आती है, और यही कारण है कि सभी राज्यों में इसकी मांग धीरे-धीरे बढ़ती जा रही है। सुपरफासफेट की उतनी माँग नहीं है। फसल पर इसका असर स्पष्टत: जल्द नहीं दिखाई देता है। प्रयोगों से पता चला है कि मिट्टी पर बिखेरकर सुपरफासफेट देने का तरीका फायदेमंद नहीं है। बीज की तरह नारी या नाई से बो कर खाद देने का तरीका ही लाभदायक है। भारत की अधिकांश जमीनों में पोटाश की कमी नहीं है। फिर भी मिर्च, तमाखू, जूट, जैसी फसलों को, भोज्य पदार्थों का संतुलन बनाये रखने के लिए, नोषजन और फासफेटयुत खाद के साथ-ही-साथ पोटाशयुत खाद देना आवश्यक है। ये फसलें पोटाश अधिक मात्रा में ग्रहण करती हैं, जिससे जमीन में पोटाश की कमी महसूस होने लगती है। जमीन की किस्म, जलवायु, और अन्य कई कारणों से फसलों पर उर्वरकों का

न्यूनाधिक प्रभाव पड़ता है। अतएव प्रयोगों के परिणामों के आधार पर ही सामान्य निश्चय पर पहुंचा जा सकता है।

किस किस्म की जमीन को नोषजन. पोटाश और फासफरिक एसिड किस परिमाण में दिये जाने चाहिए, यह जान लेना ही पर्याप्त नहीं है। भिन्न-भिन्न किस्म की जमीनों के लिए इस मात्रा में कमोबेशी करना भी नितांत आवश्यक हो जाता है। इसलिए भूमि-विशेषज्ञ से मिट्टी का विश्लेषण करा लेना नितांत आवश्यक है।

अमोनियम सलफेट और सुपरफासफेट लगभग एक सदी से नोषजन और फासफरस की पूर्ति करने के साधन माने जाते रहे हैं किंतु अब विदेशों में कई रासायनिक खादों का जन्म हो चुका है। संयुक्त राज्य अमेरिका में 'ट्रिपल सुपरफासफेट' और कैलशियम मेटा फासफेट बनाये गये हैं, जो मामूली सुपरफासफेट से कई गुना अधिक ऊंचे दरजे के हैं। 'अमोनियम सलफेट', 'अमोनियम फासफेट' और 'अमोनिएटेड सुपरफासफेट' बनाने में अब 'सिंथेटिक अमोनिया' अधिकाधिक मात्रा में काम में लाया जाने लगा है। 'अमोनियम नाइट्रेड' का उपयोग करना सरल नहीं है और ऐसा करना खतरनाक भी है। कितु 'ग्रेनुलेटेड विथ कैलशियम कार्बोनेट' के रूप में अब इसका उपयोग किया जाने लगा है। यूरिया का उपयोग भी अब अधिकाधिक मात्रा में किया जाने लगा है। रक्त ही एक ऐसी नोषजन-युत खाद है, जो बहुत धीरे-धीरे असर करती है। कितु रक्त पर्याप्त मात्रा में मिलता नहीं है। इसलिए रक्त, सुम, खुर, सींग आदि का स्थान ग्रहण करने योग्य किसी नवीन पदार्थ का निर्माण करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि यदि फासफेट बीज के पास ही डाला जाय, तो आधी मात्रा देने से ही काम चल सकता है। कई प्रकार की रासायनिक खादें अब दानेदार या रवादार बनाई जाने लगी हैं, जिससे उनको संग्रहीत करने और खेत में डालने में सहूलियत होती है।

अब यह बात सप्रमाण सिद्ध हो चुकी है कि पौधों की मामूली बाढ़ के लिए आणविक पदार्थों या सूक्ष्म तत्वों की आवश्यकता है। इनके अभाव में पौधों पर कुछ बीमारियाँ लग जाती हैं। आजकल बोरोन (Boron)

मैंगेनीज, ताम्र, झिंक और कोबाल्ट अति सूक्ष्म मात्रा में खाद की तरह काम में लिये जाने लगे है ।

बोरोन—बोरोन, संभवत:, सभी किस्म के पौधो के लिए अत्यावश्यक है । जौ, सेम, टमाटर, तमाखू, नीबू, चुकंदर, टर्निप, सरसो, कपास आदि पर इसका लाभदायक प्रभाव पडता है । दलहन फसलो के पौधो की जडों पर के मसों के निर्माण मे इससे अच्छी सहायता मिलती है और चुकंदर में शकर की मात्रा बढ जाती है । इसके अभाव में चुकदर की फसल पर 'हार्ट रॉट' नामक बीमारी लग जाती है । तमाखू पर 'टॉप-रॉट' और आलू के पौधो पर 'लीफ-रोल' जैसी बीमारियो का आक्रमण हो जाता है । आम-तौर पर, इसके अभाव मे पौधो की बाढ मे रुकावट पडती है और पत्तों पर धब्बे पड जाते है । इसकी कमी का जडों तथा तने के अग्रभाग पर बुरा असर पडता है । ये थोड़ा-सा धक्का लगते ही टूट जाते और मर जाते है ।

मैंगनीज—इसके अभाव या कमी के कारण पत्ते सूख जाते, पौधों की बाढ़ घट जाती और पत्ते रोगी हो जाते है तथा पौधो पर फूल कम आते हैं । सतरा, नारगी, नीबू और टमाटर मे यह कुछ अधिक मात्रा मे पाया जाता है । मैंगेनीज और विटॅमिन (जीवन-सत्व) मे अति निकट का संबंध है । इससे दलहन की फसल को भी लाभ पहुंचता है । इसकी कमी से ओट में 'ग्रे स्पेक' और मटर में 'मार्श स्पॉट' नामक रोग फैलने लगते है ।

कोबाल्ट—प्रति एकड़ दो मुट्ठी कोबाल्ट खाद में मिलाकर देने से कई फसलो की पैदवार काफी बढ जाती है ।

झिंक—इसकी कमी की वजह से पत्तों और अंकुरो की वृद्धि रुक-सी जाती है और पत्तों पर शल पड़ जाते है तथा बढ़नेवाले अंकुर सूखने लगते हैं । इसके अभाव में पत्तो के कोश कार्बोज का उपयोग कर नही पाते हैं । नाज, मक्का, मटर, सेम, चुकंदर, आलू, टमाटर और कई प्रकार के फल के झाड़ों पर इसका अत्यंत ही लाभदायक असर पड़ता है । हरितयुत मज्जा-तंतु में यह अधिक मात्रा में पाया जाता है ।

ताम्र या तांबा—इसकी कमी से क्लोरोफिल (हरित) के निर्माण में बाधा पड़ती है । जड़ों के माध्यम में इसकी कमी होने पर जौ के दानों

का निर्माण हो नहीं पाता है। अलसी, टमाटर, जौ आदि पर इसका हितकारी प्रभाव पड़ता है।

अल्यूमिनियम—कई पौधों की राख में इसकी प्रतिशत मात्रा अधिक पाई जाती है। खासकर गेहूं, मक्का, सेब, गाजर, गोभी, टर्निप, सूरजमुखी आदि में। यह पौधों के सभी भागों में पाया जाता है। किंतु पत्तों और जड़ों में इसकी प्रतिशत मात्रा कुछ अधिक होती है। यह आणविक पदार्थ मुख्यतः 'प्रोटोप्लाझम' में पाया जाता है। इसका हलका घोल देने से पौधों की बाढ़ की गति काफी बढ़ जाती है। इससे फूलों का रंग भी कुछ अच्छा हो जाता है।

बंबई राज्य के भू-शास्त्र-विशेषज्ञ डॉ० बसु ने प्रयोगों द्वारा प्रमाणित किया है कि बहुत ही थोड़ी मात्रा में आणविक तत्व या सूक्ष्म पदार्थ खेत की मिट्टी में मिलाने से प्रतिशत १५ से २५ तक उपज बढ़ जाती है। ये मुख्य आणविक पदार्थ हैं—नीलाथोथा (कॉपर सलफेट), सलफेट, मैंगेनीज, बोरैक्स, बोरोन, तांबा आदि। बंबई राज्य के रावल गांव में खरीफ की फसल को प्रति एकड़ दो पौंड नीलाथोथा और प्रति एकड़ चार पौंड बोरैक्स बीज बोये गये कूंड में, नारी या नाई के साथ-ही-साथ पीछे-पीछे डाला गया तो पैदावार लगभग २३ प्रतिशत बढ़ गई। बोरोन देने से भी प्रतिशत २० तक उपज बढ़ी है।

साधारणतः, ये तत्व मिट्टी में पर्याप्त मात्रा में विद्यमान रहते ही हैं। कमी महसूस होने पर ही ये खाद की तरह मिट्टी में डाले जाते हैं। किंतु आवश्यकता से अधिक या कम मात्रा में देने से लाभ के बदले हानि ही होती है। संभव है, ये तत्व मिट्टी में काफी मात्रा में मौजूद तो हों, किंतु जड़ें उन्हें ग्रहण नहीं कर सकती हों। अतएव, मिट्टी के डाक्टर द्वारा विश्लेषण करा लेने के बाद ही, उनकी राय से, इन तत्वों को खाद की तरह काम में लेना चाहिए। उत्तम रीति यह है कि जिन तत्वों की कमी हो वे पशुओं को भोजन में मिलाकर खिलाये जायं और इनके मल-मूत्र से खाद तैयार करके काम में ली जाय।

सेंद्रिय या जैवखाद ही अत्यधिक महत्व की हैं और ये कुछ ऐसे गुण दिखाती हैं, जो रासायनिक खादें दिखा ही नहीं सकती हैं। अन्यत्र लिख

आये हैं कि जैव खाद मिट्टी की जल-संग्राहक शक्ति और भोज्य पदार्थों को सुरक्षित रखने की क्षमता में वृद्धि करती तथा उसके पोत और बनावट में सुधार करती है। अतएव पशुओं के मल-मूत्र को अधिकाधिक मात्रा में एकत्रित करके खाद तैयार करके खेत में डालना अनिवार्य है।

उर्वरक के खिलाफ लोक-मत

पौधों को भी प्राणियों के समान ही भोजन की जरूरत होती है। यदि मामूली खूराक में किसी प्रकार की कमी हो तो उस कमी को, ठीक-ठीक निदान करके, दवाइयों द्वारा, पूरा किया जाता है। मनुष्यों की तरह पौधों को भी उत्तेजक दवाइयां दी जाती हैं। किंतु पौधों को उत्तेजक दवाइयां देने का काम बहुत ही बेढंगे तरीके से किया जाता है। रोगी की पूरी तरह परीक्षा करके रोग का निदान करने के बाद ही औषधोपचार किया जाता है। फसलों को भी, जमीन की पूरी तरह से परीक्षा की जाने के बाद ही, रासायनिक खाद दी जानी चाहिए। किंतु ऐसा किया नहीं जा रहा है। मिट्टी का विश्लेषण करके पहले यह पता लगा लिया जाना चाहिए कि जमीन में किन-किन भोज्य पदार्थों की किस मात्रा में कमी है और तभी उनकी पूर्ति के लिए खाद या खाद का मिश्रण दिया जाना चाहिए। मिट्टी की जांच किये बिना ही रासायनिक खादों का मनमाना उपयोग करना अनजान आदमी द्वारा रोगी को दवा देने के समान ही खतरनाक है। यह स्मरण रखना चाहिए कि कृत्रिम खाद पौधों का भोजन नहीं—मिट्टी के रोगों की ओषधिमात्र है।

इंजेक्शन द्वारा उत्तेजक ओषधि शरीर में पहुंचाकर मनुष्य की नैसर्गिक शक्ति बढ़ाने के समान ही रासायनिक खादें देकर पौधों की बाढ़ और उपज बढ़ाई जा सकती है और बढ़ाई जा भी रही है। किंतु अंत में, इससे हानि ही होती है। पुष्ट और स्वस्थ बनाये रखने के लिये प्राणियों को पौष्टिक और स्वास्थ्यकर भोजन देना अनिवार्य है और सेंद्रिय खाद देकर पैदा किये गये अन्नादि ही इस उद्देश की पूर्ति करने की क्षमता रखते हैं। जमीन में किसी कारण से विशेष क्षारों की कमी हो जाने पर रासायनिक पदार्थों द्वारा इस कमी की पूर्ति करना आवश्यक हो

जाता है और ऐसा करना मनुष्य को दवाई देने के समान ही है।

लेफ्टिनेंट कर्नल आर० मैककेरिसन ने अपने मेमोरेंडम (१९२६) में लिखा है——

"जिन जमीनों मे खलिहान की खाद दी जाती है, उनमें उगाई गई फसल की उपज मे पोषक तत्व और जीवन तत्व (विटेमिन) रहते हैं; वे उसी जमीन में पूर्ण रासायनिक खाद देकर उगाये गये बाजरे के तत्वों और जीवन-तत्वों मे कही अधिक अच्छे होते है. . सेंद्रिय खाद देकर प्राप्त की गई गेहू की पैदावार की पोषक शक्ति, पूरी रासायनिक खाद देकर प्राप्त किये गये गेहूं की अपेक्षा १७ प्रतिशत अधिक होती है। रासायनिक खाद देकर प्राप्त की गई गेहूं की पैदावार मे विटेमिन 'ए' की मात्रा कम होती है, जिससे प्राणियों को छूत की बीमारियां आ घेरती है।"

रासायनिक खादे देकर पैदा की गई तरकारियो और अन्नादि भोज्य पदार्थ खाने से न्यूजीलेंड के निवासी जुकाम, इन्फ्लुएंझा, टासिल, मसूड़े फूलना और दांत के रोगो का शिकार होगये। अतएव, वहाँ की 'फिजीकल एण्ड मैंटल वेलफेअर सोसाइटी' के डॉक्टर चैपमेन ने एक शाला के छात्रों को सेंद्रिय खाद देकर पैदा की गई शाक-भाजी, फल आदि ही खिलाकर प्रयोग किये। वे इस नतीजे पर पहुचे कि इससे कई बीमारियो से छुटकारा मिल गया और दांतों की हालत भी सुधर गई।

'वेजिटेरियन मैसेंजर' नामक पत्र का मत है कि नोषजनवाली कृत्रिम खाद देने से न्यूजीलैंड की पालक की फसल में विटेमिन 'सी' की मात्रा कम हो गई है। आस्ट्रेलिया के एक डॉक्टरी पत्र का मत है कि नवीन खोजें, पोषक तत्त्वों की दृष्टि से, हानिकारक ही है।

अजैव खादें, जमीन को स्थायी रूप से समृद्ध नहीं बनाती है और न जमीन की उर्वरा शक्ति ही बढाती हैं। इंगलैड की रॉथमस्टेड कृषि प्रयोग-शाला में किये गये प्रयोगों से प्रमाणित हो गया है कि लगातार ६० वर्ष तक गोबर-घूरे की खाद देते रहने से मिट्टी मे नोषजन पहले से तीन गुना बढ़ गया और अमोनियम सलफेट, सोडियम नाइट्रेट आदि नोषजनवाली कृत्रिम खादें देते रहने से धीरे-धीरे नोषजन की मात्रा कम होने लगी।

जैव खादों के समर्थक डॉ० रशमन का कथन है—

"रासायनिक खादें देने से जमीन का जैव तत्व अधिक तेजी से नष्ट होता है, अतएव वे अवश्य ही हानिकर हैं। मिट्टी के गुण-धर्म बढ़ाकर पैदावार बढ़ाना और पौधों के भोज्य पदार्थ डालकर ज्यादा उपज लेना, दोनों दो भिन्न चीजें हैं। इन दोनों को एक समझकर उर्वरक देना एक भारी भूल है। . . . खनिज-तत्वों से भरी जमीन में जैव तत्व की सृष्टि करने की अपेक्षा जैव तत्व से समृद्ध जमीन का उपजाऊपन टिकाये रखना अधिक लाभकारी है।

"जमीन का उपजाऊपन बढ़ाने में अजैव खाद (उर्वरक) से कुछ भी सहायता नहीं मिलती है। ज्यादा पैदावार बढ़ाने में ये अवश्य ही सहायक हो सकते हैं। थोड़े समय के लिए इन खादों से ज्यादा पैदावार ली जा सकती है। किंतु बाद में ये जमीन में नई बीमारियां और नई कमियां पैदा कर देते हैं।"

मि० बालफर अपनी 'लिविंग सॉइल' नामक पुस्तक में सर अलबर्ट हॉवर्ड का हवाला देते हुए लिखते हैं—

"दक्षिण फ्रांस में, अंगूर को रासायनिक खाद ही दी जाती है और विषैली औषधियों को छिड़क कर ही कीड़ों और रोगों से उनकी रक्षा की जाती है। किंतु बलुचिस्तान में अंगूर को पशु-मल और घूरे की खाद ही दी जाती है, जिससे कीडों और रोगों से इस फसल की रक्षा करने के लिए विषैली दवा छिड़कने की कभी जरूरत ही नहीं पड़ती है, कारण कि वहां वैसी बीमारियां होती ही नहीं हैं।"

इंगलैंड के विशेषज्ञों का मत है कि रासायनिक खाद देते रहने के कारण ही फसल को लगनेवाली बीमारियां बढ़ गई हैं। 'फैमिन इन इंगलैंड' नामक पुस्तक में मि० जेम्स ने लॉर्ड लिमिंग्टन का निम्नलिखित मत उद्धृत किया है :

"बीस साल पहले आलू की फसल पर साल में एक-दो बार नीले-थोथे का घोल छिड़कना पड़ता था ; किंतु आजकल फसल के मौसम में १२-१५ बार यह ओषधि छिड़कनी पड़ती है। इसका कारण यह है कि जमीन को सेंद्रिय खाद नहीं मिलती है।

"जैव खादें अच्छी तरह से सड़कर जैव तत्व में बदल जाती हैं, जिससे फसलें नीरोग बनी रहती हैं। इंगलैंड में प्रति मनुष्य ६ पौंड वार्षिक दवा पर खर्च करने पड़ते हैं और ढोरों से होनेवाली आमदनी का १०वां भाग उनकी दवा-दारू पर खर्च हो जाता है।

"सलफेट ऑफ अमोनिया, पोटाश और दूसरे क्षारों-लवणों के अविचार-पूर्वक उपयोग के कारण मिट्टी में के जीवाणुओं का नाश हो जाता है, जिससे जमीन में जैव तत्व का निर्माण हो नहीं पाता है और पौधे नीरोग नहीं रह सकते हैं।"

मि० हॉवर्ड ने प्रमाणित किया है कि जैव खाद डालकर पैदा की गई भोज्य-सामग्री खानेवाले पशुओं को बीमार पशु की नाक से नाक रगड़ने पर भी रोगी पशु के रोग की छूत नहीं लगती है।

मि० वालफर ने एक स्थान पर लिखा है, "नाइट्रेट और फासफेट देकर उगाई गई बंदगोभी का रंग अजीब तरह का होता है। एक सीमा से अधिक फासफेट देने से खेत अस्वाभाविक रूप से हरा हो जाता है।"

इंगलैंड की एक शाला के प्रधानाध्यापक का कथन है कि कृत्रिम खाद से पैदा किये गये भोज्य पदार्थ खाने से छात्रों को फोड़ा-फुंसी निकलते थे और 'स्कार्लेट फीवर' नामक छूत की बीमारी होती थी, लेकिन जैव खाद देकर पैदा किये गये भोज्य पदार्थ खिलाना प्रारंभ करने के थोड़े ही दिनों बाद बीमारियां भाग गईं और साग-भाजी के स्वाद और गुणों में भी बहुत सुधार हो गया।

डॉ० मैक् केरिसन का मत है कि पशुमल-घूरे की खाद से पैदा किये बाजरे में, यदि विटेमिन 'बी' की मात्रा एक मान ली जाय, तो रासायनिक खाद से पैदा किये गये बाजरे में उसकी मात्रा ०·६६ होती है।

लॉर्ड नॉर्थबोर्न ने अपनी पुस्तक 'लुक टु दी लैंड' में राय प्रकट की है कि खेती के साधनों का यंत्रीकरण एक भयानक जाल है। 'सॉइल एंड सेंस' नामक पुस्तक में मि० माइकेल ग्रैहम लिखते हैं कि ब्रिटेन में प्रतिवर्ष दस लाख भेड़ें कम होती जा रही हैं, जिससे गेहूं के खेतों में खाद के लिए जितनी भेड़ें बिठाने की आवश्यकता होती है, उतनी भेड़ें आज मिलती नहीं हैं।

'रेप आफ़ दी अर्थ' नामक पुस्तक के लेखक का मत है कि ज्यों-ज्यों खेती में वैज्ञानिक रीतियां अपनाई गई हैं, त्यों-त्यों जमीन भी रस-कसहीन होती जा रही है। 'ह्यूमस एंड फार्मर' नामक पत्र ने अपने एक लेख में जोरदार शब्दों में लिखा है कि फसल की प्रति एकड़ उपज या अनाज के दानों की मुटाई पर से खाद्यान्नों की पोषण-शक्ति का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। कृत्रिम खादों की सहायता से प्राप्त किये गये मोटे-मोटे दानोंवाले खाद्यान्नों में पोषक तत्वों की कमी रहती है, जिससे इन्हें खानेवाले प्राणी बीमार और कमजोर हो जाते है। विल्टशायर के एक सफल किसान मि० फेंड साइकस ने 'जैव खाद और उर्वरक' के प्रश्न पर काफी अध्ययन के बाद अपनी राय जाहिर की है। 'न्यूज रिव्यू' नामक पत्र में साइकस के प्रयोगों पर सविस्तार विवेचन करते हुए लिखा गया है कि जमीन को उपजाऊ बनाने के लिए आज हम वनस्पति-शास्त्र के बजाय रसायन-शास्त्र के सिद्धांतों पर अमल करने लगे है। नतीजा यह हुआ है कि कृत्रिम खाद से पैदा की गई फसल की पैदावार खाने से प्राणियों की नैसर्गिक शक्ति इतनी घट गई है कि उनकी बीमारियों के आक्रमण का डटकर मुकाबला करने की शक्ति बहुत ही क्षीण हो गई है।

कर्नल मैककेरिसन और रायबहादुर व्ही० नाथ द्वारा भारत में और मि० मॉकरिज और मि० बॉटॉमी द्वारा यूरोप में तथा मि० क्लार्क व मि० रोलर द्वारा अमेरिका में किये गये प्रयोगों से निश्चित हो गया है कि जैव खाद देकर प्राप्त की गई पैदावार, उर्वरकों की सहायता से उगाई गई फसल की पैदावार की अपेक्षा, पौष्टिक तत्वों की दृष्टि में कई गुनी अधिक अच्छी होती है। सेंद्रिय खाद जमीन में रहनेवाले असंख्य जीवाणुओं को भोजन प्रदान करती है। इनसे फसल को संतुलित भोजन प्राप्त होता है। अतएव, उर्वरक सेंद्रिय या जैव खादों में मिलाकर ही दिये जाने चाहिए।

उर्वरकों की उपयोगिता के संबंध में भारतीय वैज्ञानिकों में भी मतैक्य नहीं है। सरकारी कृषि-प्रयोगशालाओं में किये गये प्रयोगों के नतीजों पर कई कारणों से विश्वास नहीं किया जा सकता है। किसानों द्वारा अपने खेतों में किये गये प्रयोगों से प्राप्त नतीजे ही ज्यादा भरोसे लायक हैं। 'फरटिलाज़र व मैन्युअर एक्सपर्ट कमिटी' ने देश के भिन्न-भिन्न भागों

में घूम-फिरकर मत संग्रह किये है और किसानों से जानकारी हासिल की है। इसीके आधार पर अमोनियम सलफेट और सुपरफासफेट-संबंधी मत यथास्थान उद्धत किये गये है।

नैशनल कैमिकल लेबोरैटरी मे जुलाई १९५१ मे वैज्ञानिकों के एक सम्मेलन मे 'कृषि व्यवसाय मे रासायनिक पदार्थ' (Chemicals in Agriculture) पर विचार किया गया था। इस सम्मेलन की रिपोर्ट के आधार पर इस विषय मे सबध रखनेवाले कुछ मत उद्धृत किये जाते है

'इंडियन एग्रीकलचरल रिसर्च इस्टीट्यूट' नई दिल्ली के श्री एस० पी० राय चौधरी का कथन है कि उर्वरको का फसल की बाढ़ पर पड़नेवाला असर बहुत कुछ जमीन की प्राकृतिक बनावट पर ही निर्भर करता है। नैशनल केमिकल लेवोरेटरी, पूना के डॉ० सी० के० नायर का मत है कि मिट्टी की भौतिक और रासायनिक रचना-सबधी मोटी-मोटी बातें तक हमें ज्ञात नही है। इस आधारभूत ज्ञान के बिना उर्वरको को उपयोग मे लेने की सिफारिश करना जनता को गलत रास्ता दिखलाना ही है। राजस्थान के श्री के० एम० मेहता ने स्पष्ट शब्दो मे कहा है कि उर्वरकों के प्रचार के हेतु योजना बनाने मे पहले फसलो और मिट्टी की किस्मों-संबंधी और भी अधिक जानकारी एकत्रित करना नितात आवश्यक है।

कृषि-महाविद्यालय, पूना के डॉक्टर श्री जे० के० बसु ने कमिटी को बतलाया कि बारानी फसलो को उर्वरक देने के तरीके निश्चित करते समय दो बातों पर अवश्य ही ध्यान दिया जाना चाहिए। ये दो बातें हैं— (१) मिट्टी की रचना और (२) मिट्टी में स्थित पानी की निश्चित मर्यादा। मिट्टी की रचना या बनावट में यथोचित सुधार किये बिना उर्वरक देने पर भी समुचित लाभ की आशा ही की नही जा सकती है। झिंक, बोरोन, मैंगेनीज आदि आणविक पदार्थो या सूक्ष्म तत्वों (trace elements) और जैव तथा अजैव खादों को मिलाकर देने से ही उत्तम परिणाम प्राप्त हो सकते हैं।

डा० एच० एल० रिचर्डसन का विश्वास है कि हरेक किस्म की मिट्टी की भोज्य पदार्थो की आवश्यकताओं के अध्ययन के हेतु बहुत ही बड़े क्षेत्र

में किसानों के खेतों में ही प्रयोग करना अत्यंत आवश्यक है। आपके मत में क्षारयुत जमीनों में, जिनमें लोहा और एल्यूमिनियम घुलनशील अवस्था में अधिक मात्रा में रहते हो, सुपरफासफेट देना अपव्यय मात्र है।

भारत-सरकार की मिनिस्ट्री ऑफ एग्रीकलचर के डॉ० बी० विश्वनाथन का स्पष्ट मत है कि केवल उर्वरकों की मिश्रित खाद की अपेक्षा सेंद्रिय खादें सभी दृष्टिकोण से अधिक ऊंचे दरजे की है। उर्वरको को काम मे लिये बिना ही भारतीय कृषको और निसर्ग ने भारतीय जमीनो को उस समतल पर उर्वरा बनाये रखा है, जो उर्वरको का उपयोग करनेवाले देशों की उर्वरा-भूमि से किसी प्रकार हेटी नही है। जमीन मे पर्याप्त जैव खाद दिया जाने पर ही रासायनिक खादे ऊंचे दरजे के नतीजे दे सकती है। भारतीय जमीनो के लिए सुपरफासफेट देना अत्यंत आवश्यक है।

शुगरकेन रिसर्च स्कीम पाडेगांव के डॉ० आर० डी० रेघे का कथन है कि रासायनिक उर्वरको से सर्वाधिक लाभ प्राप्त करने के लिए मिट्टी में जैव तत्व का विद्यमान होना अनिवार्य है। हैदराबाद की सेंटर लेबोरेटरी के श्री के० एन० मूर्ति के मतानुसार सुपरफासफेट की अपेक्षा भाप दी गई हड्डी का आटा (flour) ज्यादा अच्छा है।

'सॉइल, हेल्थ, एंड सिविलिझेशन' शीर्षक पर्चे में मि० विलफ्रेड वेलॉक लिखते हैं कि प्राचीन परिपाटी एकदम बदल गई है। हरेक बात रसायन-शास्त्र की दृष्टि से देखी जाने लगी है। अजैव रासायनिक पादर्थों व दवाइयों से फसले पैदा करने की धुन सवार हो गई है। जर्मनी के विख्यात रासायनिक लीबिग ने प्रयोगो द्वारा प्रमाणित किया है कि मिट्टी रासायनिक पदार्थों का समुच्चय है किंतु अनुभव ने बतलाया है कि मिट्टी को केवल इन्हीं की आवश्यकता है किसी दूसरी चीज की नही। रासायनिक खादों ने जमीन को ऊसर बनाने की ओर बढ़ा दिया है। पौधों की शक्ति घटती जा रही है। उनकी रोगों से मुकाबला करने की क्षमता घटती गई है। भोज्य पदार्थ के रूप में पौधों और उनकी पैदावार का मूल्य घटता जा रहा है। पैदावार का स्वाद बिगड़ जाता है और विटेमिन (जेव तत्व) कम हो जाते हैं। जमीन की उर्वरा-शक्ति ही कृषक की पूजी है—खेती के धंधे की एकमात्र आधार-शिला है। इसे सुरक्षित बनाये रखने के लिए प्राणियों

का मलमूत्र, कचरा-कूड़ा, मांस-मछली, हड्डी, खली, हरी खाद आदि से तैयार की गई खाद ही काम में ली जानी चाहिए।

१—अमोनियम सलफेट

नोषजनयुत जैव पदार्थों के सड़ने से अमोनिया बन जाता है। जलाने की गैस (पत्थर के कोयले की गैस), शेल ऑइल, हड्डी का कोयला आदि तैयार करनेवाले कारखानों में एक बचा हुआ पदार्थ प्राप्त होता है, जिस पर गंधकाम्ल से क्रिया करके 'अमोनियम सलफेट' बनाया जाता है।

पत्थर के कोयले में, सामान्यतः, १/२ से १ १/२ प्रतिशत तक नोषजन विद्यमान रहता है। खुली भट्टी में जलाने से इसमें के कार्बन, उज्जन, गंधक आदि ओषिद (Oxids) का रूप धारण करके उड़ जाते हैं। यदि बंद भट्टी में जलाया जाय, जैसा कि कोल गैस तैयार करते समय किया जाता है तो, नोषजन अमोनिया के रूप में निकल आता है और तब जल-वाष्प, जल का रूप धारण करके एक विशेष पात्र में जमा होती रहती है, जिसमें अमोनिया और अन्य घुलनशील पदार्थ घुले रहते हैं। इसे ही 'लिकर अमोनिया' (द्रव अमोनिया) कहते हैं। एक गैलन में लगभग तीन औंस अमोनिया विद्यमान रहता है। इसके बाद अन्य रासायनिक क्रियाओं द्वारा अमोनिया अलग करके रवे के रूप में तैयार किया जाता है।

सलफेट ऑफ अमोनिया में २५·७६ प्रतिशत अमोनिया रहता है, जो प्रतिशत २१·२१ नोषजन के बराबर होता है। यदि इस उर्वरक में सड़े हुए अण्डे की-सी गंध आती हो, तो जान लेना चाहिए कि इसमें सलफाइड है। एक ग्लास पानी में अमोनिया के कुछ कण डालकर घुलने दिया जाय। घुल जाने पर इस ग्लास में एक बूंद 'फेरिक क्लोराइड' डाल दिया जाय। पानी का गहरा लाल रंग हो जाय, तो मान लेना चाहिए कि इसमें 'सलफो सायनाइड' (Sulpho-cyanide) मौजूद है। यदि यह पदार्थ न होगा, तो पानी का रंग नहीं बदलेगा।

अमोनियम सलफेट महंगा बिकता है। इसलिए इसमें अकसर हरसोंठ (जिपसम), खाने का नमक, और सलफेट ऑफ सोडा मिला दिये जाते

हैं। अमोनियम सलफेट को पानी में अच्छी तरह से घुलाकर चलाकर रख छोड़ें। यदि ग्लास की तली में तलछट जमी-सी दिखाई दे, तो साफ है कि उसमें मिलावट की गई है। खूब गरम किये गये तवे पर अमोनियम सलफेट के कण रख दिये जायं। उड़नशील पदार्थ हवा में उड़ जायंगे। यदि तवे पर अधिक मात्रा में पदार्थ बच रहें, तो मान लिया जाना चाहिए कि माल में अन्य पदार्थ मिलाये गये हैं। इन्हीं तरीकों से माल की शुद्धता की जांच की जा सकती है। रसायनशाला में भी रासायनिक रीति से जांच की जा सकती है।

शुद्ध अमोनियम सलफेट, सफेद और रवादार होता है। चूने के साथ थोड़ा-सा अमोनियम सलफेट हथेली पर रखकर रगड़ने से अमोनिया गैस की तीव्र गंध आती है। यह शकर या नमक-जैसा दिखाई देता है और स्वाद भी खारा ही होता है। इसीलिए किसान इसे 'नमक की खाद' कहते हैं। यह बड़े या छोटे दानेवाला होता है। कुछ नमूने महीन दाने के भी मिलते है। सामान्यतः, मध्यम आकार के दानोंवाला किंचित् पीली झाईयुत सफेद रंग का अमोनियम सलफेट बाजार में बिकता है। फेरो सायनाइड का अंश रह जाने पर माल में नीले रंग की झाई-सी नजर आती है। यदि ढेले बंध गये हों तो तोड़कर महीन करके ही काम में लेना चाहिए।

प्रतिशत २० नोषजन या २४ प्रतिशत अमोनिया होने की गारंटी के साथ यह बाजार में बिकता है। मुट्ठीभर अमोनियम सलफेट को तवे पर रखकर गरम करने से यह सब-का-सब उड़ जाता है—राख या अन्य कोई पदार्थ बच नहीं रहता है। इसकी शुद्धता की जांच का यही एक सरल तरीका भी है। इसमें कभी-कभी 'अमोनियम सलफो सायनाइड' भी मिला रहता है। यह पौधों के लिए हानिकारक है। इसकी जांच की रीति ऊपर बतला आये हैं।

यह उर्वरक चूना या बेसिक स्लैग में कदापि नहीं मिलाया जाना चाहिए। इनमें मिलाने से अमोनिया उड़कर वातावरण में लोप हो जाता है। मिट्टी में थोड़ा-सा चूना होनेपर भी अमोनिया के मुक्त होकर लोप हो जाने की क्रिया को उत्तेजना ही मिलती है।

नोषजनीय खाद की दृष्टि से नाइट्रेट ऑफ सोडा और अमोनियम

सल्फेट, दोनो ही एक समान गुणकारी है । अमोनियम सलफेट बहुत जल्द अपना असर दिखाता है और इसका करीब-करीब पूरा अंश फसल द्वारा ग्रहण कर लिया जाता है। अमोनिया का कुछ अंश मिट्टी मे के जीवाणु ग्रहण करके प्रोटीन मे बदल देते है । जिस जमीन में कैलशियम कार्बोनिट कम मात्रा मे होता है, उसमे यह उर्वरक देने मे उत्पादन-शक्ति बहुत ही घट जाती है । इस खाद से मिट्टी मे क्षारत्व बढ़ जाता है । इसका कारण यह है कि अनेक प्रकार के फफूंद और रोगाणु उसपर आक्रमण करके, नोषजन पर अपना गुजर-बसर चलाने लगते है, जिसमे अमोनिया मे के क्षार मुक्त हो जाते है । यदि मिट्टी में कैलशियम कार्बोनिट काफी मात्रा मे मौजूद नही रहता है, तो जैव तत्व मे के कैलशियम मे क्षार का सयोग हो जाता है और धीरे-धीरे इनकी मात्रा बढ़ती रहती है तथा कुछ वर्षो बाद इनका कुप्रभाव स्पष्ट दिखाई देने लगता है । मिट्टी मे क्षारत्व रहने पर जीवाणु नत्रीभवन की क्रिया पूरी नही कर पाते है और यही कारण है कि जमीन की उर्वरा-शक्ति घट जाती है । इसलिए जिस जमीन में कैलशियम कार्बो-नेट न हो, उसमे यह खाद देना लाभदायक नही है ।

नोषजन देने से पौधों की वानस्पतिक वृद्धि खूब होती है, पत्तों का हरा रंग बढ़ जाता तथा पौधा कोमल और रसदार हो जाता है । प्रारंभिक अवस्था में पौधे की बाढ़ कम होना और पत्तो का पीला रंग इस बात का द्योतक है कि उसके भोजन मे नोषजन की कमी रही है। नोषजन देते ही पौधा सतेज और जोरदार हो जाता है । आवश्यकता से अधिक नोषजन देने से पौधों पर खराब असर पड़ता है और उन पर कीड़ो और रोगाणु रोगों का आक्रमण हो जाता है । अमोनियम सलफेट देने से पौधों की जड़ें जमीन की ऊपर की सतह में ही फैलती है । इसलिए जिन पौधों की जड़ें ज्यादा गहरी पैठती हैं, उनको सोडियम नाइट्रेट उर्वरक ही दी जानी चाहिए और जिन पौधों की जड़ें जमीन की ऊपरी सतह में फैलती हैं, उन्हें अमोनियम सलफेट दिया जाना चाहिए । मिट्टी की ऊपरी सतह में जड़ों के फैलने का नतीजा यह होता है कि हवा के जोर के झोंके से पौधे उखड़कर गिर जाते या झुककर लेट जाते हैं । गेहूं, ज्वार, धान आदि में दाने की अपेक्षा भूसा-कड़वी की मात्रा बढ़ जाती है ।

सिंद्री कारखाने में यह खाद बनाई जाने लगी है और धीरे-धीरे इसका उत्पादन बढ़ने लगा है। कहा नहीं जा सकता है कि यह खाद देश के लिए हितकर होगी या नहीं। पश्चिमी देशों का अनुभव है कि नोपजन और फास्फारिक एसिड की मांग की पूर्ति के लिए बार-बार कृत्रिम खाद देते रहने से जमीन की उत्पादन-शक्ति घट जाती है। मिट्टी में सभी प्रकार के वनस्पति-पोषक पदार्थों का एक निश्चित अनुपात में रहना अत्यावश्यक है। एक या दो भोज्य पदार्थों को अधिक मात्रा मे देते रहने से भोज्य पदार्थों के परिमाण का संतुलन बिगड़ जाता है और जमीन खराब हो जाती है।

जमीन में के चूने के संयोग से इस खाद में से अमोनिया निकलता है, जिसे जीवाणु नत्रेत (नोपेत) में बदल देते है। इसी रूप में पौधे की जड़ें इसे जल्द ग्रहण कर लेती है। इस क्रिया में कुछ समय लगता है और यही कारण है कि यह धीरे-धीरे असर करता है। इससे पूरा लाभ उठाने के लिए मिट्टी मे काफी चूने का रहना जरूरी है। अनुमान किया गया है कि एक मन अमोनिया की खाद जमीन में का डेढ मन चूना खर्च कर देती है।

शुद्ध अमोनियम सलफेट मे नोपजन का परिमाण प्रतिशत २१.२ के लगभग है। शुद्ध न हो तो यह परिमाण २० प्रतिशत से २१ प्रतिशत तक होता है। खाद देने के बाद शीघ्र ही वर्षा हो जाने या पानी सींच देने पर भी यह पानी में घुलकर जमीन में गहरा उतर नहीं जाता है—मिट्टी के ऊपर के चार-छः इंच के स्तर में ही रह जाता है। सोडियम नाइट्रेट में यह गुण नहीं है। वह तो तुरंत ही पानी में घुलकर उसके साथ जमीन में गहरा उतर जाता है। अतएव, ज्यादा वर्षावाले प्रदेशों में तथा हलकी-रेतीली जमीनों में, जिसमे पानी का नितार शीघ्रता से होता है, यह उर्वरक कदापि नहीं दिया जाना चाहिए। ऐसी जमीनों के लिए तो अमोनियम सलफेट ही खाद है। अच्छी

भारत की अधिकांश जमीनों में चूना अधिक मात्रा में है। अतएव, जैव खाद काफी मात्रा में मिलाकर ही अमोनियम सलफेट दिया जाना चाहिए और यदि आवश्यकता जान पड़े, तो प्रति चौथे-पांचवें वर्ष चूना दिया जाय, जिससे जमीन में खट्टापन आ नहीं पायगा और वह अनुर्वरा भी नहीं हो पायगी।

अमोनियम सलफेट देने से जमीन में चूने की मात्रा घट जायगी, इस आशंका के कारण चूना या बेसिक-स्लैग जैसी खादों में इसे कदापि नहीं मिलाना चाहिए, कारण कि ऐसा करने से अमोनियम सलफेट में का अमोनिया उड़ जाता है, जिससे जमीन नोषजन से वंचित रह जाती और उत्पादनक्षमता भी घट जाती है।

इसे पत्थर जड़े हुए या सीमेंट से बने हुए फर्श पर ही रखना चाहिए। यदि मिट्टी के फर्श पर रखा जायगा, तो जमीन की सील से खाद के ढेले बंध जायंगे। अतएव, कच्चे फर्श पर घास-भूसा आदि की ज्यादा मोटी तह बिछाकर उसीपर खाद रखा जाय। खाद की रक्षा विशेष सावधानी से की जानी चाहिए और वर्षा के जल तथा शीत से खाद को सदा बचाये रखना चाहिए। नमक या शकर के समान इसकी भी हिफाजत की जानी चाहिए। महीन मिट्टी, खली के महीन चूर्ण आदि में मिलाकर ही खेत में चारों तरफ बराबर-बराबर फैला दिया जाना चाहिए। उत्तर प्रदेश, बंबई आदि कुछ राज्यों में इसे मूंगफली की खली के महीन चूर्ण में मिलाकर ही बाजारों में बेचा जाता है।

मिट्टी में पोटाश और फासफरिक एसिड कितनी ही अधिक मात्रा में क्यों न हो, किंतु नोषजन की पूर्ति किये बिना इनका होना-न-होना बराबर ही है। किंतु नोषजन की भूख मिटा देने पर फासफेट की कमी का असर फसल पर दिखाई देने लगता है। इसलिए अमोनियम सलफेट के साथ-साथ सुपरफासफेट या हड्डी के चूर्ण के रूप में फासफेट देना लाभदायक है।

वर्षा पर निर्भर रहनेवाली फसलों को अमोनियम सलफेट से लाभ ही पहुंचता है। जमीन में आल-जल का परिमाण जाने बिना बारानी जमीनों की फसलों को अमोनियम सलफेट कदापि नहीं दिया जाना चाहिए। आल-जल की मात्रा कम होने पर अमोनियम सलफेट देना हानिकारक है।

अमोनियम सलफेट और नाइट्रेट ऑफ सोडा के गुण-दोषों का तुलनात्मक विवेचन करना संभव नहीं है। दोनों उर्वरकों में से किसी एक का चुनाव करते समय जमीन की किस्म, फसल की किस्म, मौसम आदि पर पूरी

तरह विचार करना आवश्यक है। प्रति पौंड नोषजन की कीमत पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। अमोनियम सलफेट में नोषजन का प्रतिशत परिमाण अधिक है। अतएव अनुकूल परिस्थिति प्राप्त होने पर समान वजन में उपयोग में लाये गये नाइट्रेट ऑफ सोडा की अपेक्षा यह अधिक उपज देता है। किंतु नाइट्रेट ऑफ सोडा अतिशीघ्र ही पानी में घुलकर तुरंत ही जड़ों द्वारा ग्रहण कर लिये जाने की अवस्था में आ जाता है और तुरंत ही अपना असर भी दिखाता है। अतएव घास-चारा और नाज की फसलों के लिए यही अधिक उपयुक्त है। गीली जमीनों में तो अमोनियम सलफेट ही दिया जाना चाहिए।

फसल के लिए उपयुक्त खाद कौन-सी है, यह जानकारी होना जितना आवश्यक है, उतना ही या इससे कुछ अधिक महत्व की बात यह जान लेना है कि खाद कब और किस रीति से दी जानी चाहिए; अनुपयुक्त समय पर गलत तरीके से अच्छी खाद देने पर भी हानि ही उठानी पड़ती है। यदि खाद देने की सर्वोत्तम रीति ज्ञात हो तो सभी प्रकार की खाद से शत-प्रतिशत लाभ प्राप्त किया जा सकता है। कम परिमाण में उर्वरक खाद देकर और फसल को किसी प्रकार की क्षति न पहुंचाते हुए अधिक-से-अधिक उपज प्राप्त करना एक विशेष प्रकार का कौशलपूर्ण कार्य है। यह कौशल प्राप्त करने के हेतु जमीन की किस्म, फसल बोने की रीति, किस किस्म की खाद किस परिमाण में देना, खाद देने की किस रीति का अवलंबन करने से मिहनत और मजदूरी कम लगेगी, आदि बातों को सदा ध्यान में रखना नितांत आवश्यक है। भिन्न-भिन्न फसलों को यह खाद भिन्न-भिन्न रीतियों से दी जाती है।

सेंद्रिय खादें बहुत अधिक मात्रा में, कम-से-कम दस-पंद्रह गाड़ी, देनी पड़ती हैं। और ये भिन्न-भिन्न रीति से दी जाती हैं। मन-दो-मन उर्वरक दूसरी ही रीति से देनी पड़ती है। गोबर की खाद, हरी खाद, खली की खाद, मिश्र खाद (कम्पोस्ट) आदि खाद फसल बोने से काफी समय पहले खेत की मिट्टी में मिला दी जाती है, ताकि फसल बोने तक जीवाणु उनपर क्रियाएं करके उनके संयुक्त तत्त्वों को अलग-अलग कर सकें। किंतु उर्वरकों के पृथक्करण के लिए जीवाणुओं को कार्य नहीं करना पड़ता है।

भिन्न-भिन्न फसलों को उनकी किस अवस्था में, कौन-कौन से उर्वरक किस रीति से देने पर अधिक-से-अधिक लाभ प्राप्त हो सकता है, इस संबंध में अमेरिका आदि देशों मे काफी छान-बीन की गई है और अभी भी की जा रही है। भारत में इस ओर बहुत ही कम काम किया गया है। अमेरिका के विशेषज्ञों ने लगभग दो दर्जन रीतियो का अवलंबन करके प्राप्त की गई जानकारी के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि कपास की फसल को कपास के बीज की दोनो बाजू पर दो-दो इंच के अंतर पर और बीज से डेढ़-दो इंच नीचे की ओर उर्वरक देने से सबसे अच्छी फसल हाथ लगती है।

सामान्यतः, सभी प्रकार के उर्वरक और विशेष रूप से अमोनियम सलफेट नीचे लिखे अनुसार दिये जाते है :

१. *खेत में छिड़ककर*—उर्वरक के ढेलों को लकड़ी आदि से कूट-पीटकर महीन करके समभाग सूखी मिट्टी आदि में अच्छी तरह से मिलाकर खेत में एक-सा फैला देना और कुलपा, डौरा, हो आदि देकर तुरंत ही मिट्टी में मिला दिया जाना चाहिए। खड़े होकर फेकने से महीन खाद हवा से उड़कर खेत के बाहर चली जाती है। अतएव जमीन से कुछ ऊंचाई पर हाथ रखकर ही खाद बिखेरा जाय। यह रीति सरल तो है ही, साथ ही खर्च भी कम ही बैठता है।

२. *नारी या नाई से बीज की तरह बोना*—भारत में यह कार्य दो तरह से किया जाता है। बीज और अमोनियम सलफेट मिलाकर बो दिया जाता है। कुछ लोग कूड में पहले मिट्टी मिला हुआ अमोनियम सलफेट बोते हैं और इसीके साथ-साथ पीछे इसी कूड मे बीज बोया जाता है। इस रीति से दी गई खाद अच्छा असर दिखाती है। बीज के अंकुरित होते ही प्रारंभिक मूल को तैयार भोजन तुरंत ही मिल जाता है, जिससे नवजात पौधा अधिक पुष्ट और जोरदार होता है। किंतु इस रीति का अवलंबन करने से हानि की पूरी संभावना रहती है। खाद से स्पर्श होते ही नवजात जड़ के जल जाने से अंकुरित पौधे मर जाते हैं। इसलिए बीज में खाद मिलाकर बोने की अपेक्षा पहले खाद बीज की तरह बोकर बाद में उसी कूड में बीज बोने की रीति ज्यादा अच्छी है। इस रीति से अमोनियम सलफेट कम मात्रा में देना पड़ता है और बीज का खाद से स्पर्श नहीं हो

पाता है। यदि अधिक मात्रा में खाद देनी हो, तो आधी मात्रा बोकर दी जाय और आधी छिड़ककर दी जाय। फसल बोने से पहले छिड़ककर देने की अपेक्षा पौधों के उग आने के बाद जड़ों के पास हाथ से डालकर देना अच्छा है।

जिन फसलों का बीज कम मात्रा में बोया जाता है, उनको खाद में मिलाकर बोने से अवश्य ही हानि होती है। ऐसी अवस्था में खाद से दुगुनी या तीन गुनी मिट्टी मिलाने के बाद ही खाद और बीज बोया जाना चाहिए। किंतु इस बात का पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए कि हरेक कतार में बराबर बीज ही डाला जाय।

३. जमीन में खाद का रमाना—पौधों के पांच-छः इंच ऊंचे बढ़ जाने पर खाद देने की रीति को अंगरेजी में 'टॉप ड्रेसिंग' (ऊपर पड़ी खाद को जमीन में रमाना) कहते हैं। पौधे के तने से दो-तीन इंच के अंतर पर खाद डालकर खुरपी से मिट्टी में मिला दी जाती है। खाद की आधी मात्रा बोवाई करते समय और आधी मात्रा इस रीति से देने से फूल-फल ज्यादा बैठते हैं, जिससे पैदावार निश्चित रूप से ज्यादा आती है—विशेषतः धान, ज्वार, मक्का, कपास, गन्ना, भाजी-पाला आदि की उपज तो अवश्य ही बढ़ जाती है। इस रीति से खाद देते समय इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि हरे पौधे के किसी अंग पर खाद न पड़ने पाये।

फल-झाड़ों को यह खाद दूसरे तरीके से दी जाती है। पौधे के तने से कुछ दूरी पर अंगूठी के आकार की नाली-सी बनाई जाती है और इस नाली में मिट्टी मिली हुई खाद देकर मिट्टी से ढंक देने के बाद तुरंत ही पानी सींच दिया जाता है। पानी सींचने के थाले या आलवाल में खाद बिखेर-कर फावड़े से मिट्टी उलट-पुलट करके पानी दे देने से भी काम हो सकता है। फल-झाड़ों के तने के पास खाद कदापि न दी जानी चाहिए।

४. घोल बनाकर खाद देना—खाद का घोल भी दिया जाता है। पंद्रह सेर पानी में आधी छटांक अमोनियम सलफेट घोलकर यह पानी पौधों को सींचा जाता है। नरसरी के पौधों या फल-झाड़ों को ही इस रीति से खाद दी जाती है।

अमोनियम सलफेट को थैले या बोरे में भरकर पानी बहने की नाली

में रख दिया जाता है। खाद धीरे-धीरे घुलकर खेत में जाती रहती है। इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि नाली से बहकर जानेवाला पानी खेत में ही जाता रहे—खेत से बाहर इधर-उधर फैलने न पाये। नालियां पक्की बनी हों, या सीमेंट या लोहे के नल हों तो और भी अच्छा है।

५. कुछ लोग अमोनियम सलफेट के घोल में बीज भिगोकर बोते हैं। किंतु भारत में अभी तक इस रीति के संबंध में जांच-पड़ताल की नहीं गई है। अतएव इसपर कुछ नहीं लिखा गया है।

कुछ आवश्यक सूचनाएं—गोबर की खाद, कम्पोस्ट (मिश्र खाद) आदि की तरह यह खाद कदापि नहीं दी जानी चाहिए। भारत में छिड़ककर या नारी से बोकर ही यह खाद दी जाती है। किसी रीति से खाद क्यों न दी जाय, इस बात का अवश्य ही ध्यान रखा जाना चाहिए कि खेत में चारों ओर खाद एक-सी ही दी जाय। बीज की तरह बोते समय तो इस ओर सर्वाधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। खरीफ फसलों को यह खाद थोड़ी मात्रा में ही—५० से १०० पौंड प्रति एकड़ से अधिक नहीं दी जानी चाहिए। इस मात्रा से अधिक खाद देनी हो, या लंबे समय तक खेत में खड़ी रहनेवाली फसल को खाद देनी हो तो आधी मात्रा बीज बोने के समय और शेष फूल आने के समय जड़ों पर डालकर ही दी जाय। बोवाई के समय दी गई खाद से पौधों की प्रारंभिक बाढ़ अच्छी और तेजी से होती है और बाद में दी गई खाद से फूल ज्यादा बैठते हैं, जिससे पैदावार भी ज्यादा आती है। अधिक लंबी अवधि तक खेत में खड़ी रहनेवाली फसल को एक लंबे समय तक नोषजन की आवश्यकता रहती है। इसलिए पूरी मात्रा प्रारंभ में एक ही बार में देने की अपेक्षा दो बार में देना ही लाभदायक है। सब खाद पूरी मात्रा में एक ही बार में दे देने से मिट्टी में के जल में खाद का घोल गाढ़ा बन जाता है, जिससे फसल को हानि पहुंचने की संभावना रहती है।

प्रारंभिक जीवन में पौधों की तेजी से बाढ़ होना हितकारी है। इसलिए नोषजनयुक्त खादें, फसल के अधिकतम वृद्धिकाल से कुछ समय पहले ही, दी जानी चाहिए। कृषि-विज्ञान के विशेषज्ञों का कथन है कि जीवन-

काल का प्रारंभिक $\frac{१}{३}$ या $\frac{१}{४}$ जीवनकाल ही वह समय है। यह खाद देने से फलों में प्रोटीन की मात्रा बढ़ाने में भी सहायता मिलती है।

भारत के सभी राज्यों में इस खाद का प्रवेश हो गया है और धीरे-धीरे इसका प्रसार भी होता जा रहा है। सिंदरी के कारखाने का उत्पादन भी बढ़ता जा रहा है।

भिन्न-भिन्न प्रदेशों की खेती करने की रीति भिन्न-भिन्न है। जमीन की किस्में भी अनेक हैं। इसके अलावा सिंचाई व बारानी क्षेत्रों में फसलें बोई जाती हैं। जमीन में, सभी जगह, अम्लता भी एक-सी नहीं है। स्थान-स्थान के वर्षामान, जलवायु आदि में भी पर्याप्त भिन्नता है और इनमें प्रतिवर्ष परिवर्तन होता रहता है। इन्हीं तथा अन्य कई कारणों से भारत की मुख्य-मुख्य फसलों के लिए खाद की एकसमान योजना बना लेना संभव ही नहीं है।

सिंचाई की फसलों को खाद देने के बाद तुरंत ही ऐसा प्रबंध कर दिया जाना चाहिए कि मिट्टी में खाद का घोल तुरंत ही हो जाय। अतएव, यह उर्वरक देने के बाद तुरंत ही सिंचाई कर दी जानी चाहिए और इसके बाद भी थोड़े-थोड़े अंतर से सिंचाई करते रहना चाहिए। वर्षा के पानी पर निर्भर रहनेवाली फसल पर अमोनियम सलफेट का प्रभाव अनिश्चित ही रहता है। दक्षिण भारत में किये गये प्रयोगों से पाया गया कि ४३ इंच वर्षामान होने पर एक पौंड नोषजन से २४-२५ पौंड पैदावार बढ़ गई। किंतु ३० इंच वर्षा होने पर एक पौंड नोषजन से केवल तीन पौंड पैदावार ही बढ़ी है। वर्षा पर निर्भर रहनेवाली फसलों को नोषजनीय खाद देते समय वर्षा के परिमाण पर सदा ध्यान रखना नितांत आवश्यक है। पानी की कमीवाले प्रदेशों की फसलों को अमोनियम सलफेट ही नहीं, सभी प्रकार की खाद देने पर भी पैदावार एक निश्चित सीमा से अधिक नहीं बढ़ पाती है और ऐसे प्रदेशों की फसलों पर पानी की कमी के कारण, इसका हानिकारक प्रभाव ही पड़ता है। मिट्टी की पानी की कमी की पूर्ति जितने ही अधिक अंश में की जायगी, दिये गये खाद की मात्रा का असर भी उतना ही अधिक पड़ता है।

देश में खाद की बहुत ही कमी है, इसलिए खाद का अधिक-से-अधिक

सदुपयोग करने का पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिए और इसी उद्देश्य से सिंचाई की फसलों की खाद की मांग की पूर्ति ही सबसे पहले की जानी चाहिए। खाद का उपयोग इस तरीके से किया जाना चाहिए कि नाज की पैदावार अधिक-से-अधिक हो।

गत ४०-५० वर्षों से भारत में इस खाद का उपयोग किया जा रहा है। गत १५-२० वर्षों से इसका प्रचार बढ़ता जा रहा है। फिर भी अभी तक किसानों के दिलों में इस खाद के प्रति काफी अज्ञान और संदेह बना हुआ है और इसीलिए इसका जैसा चाहिए वैसा प्रचार हो नहीं पाया है। इसके लिए एक हद तक कृषि-विभाग भी जिम्मेदार है।

जापानी किसान रासायनिक खादों का उपयोग बहुत अधिक परिमाण में करता है। जापान में सेंद्रिय खाद प्रति एकड़ ४ टन और भारत में केवल एक टन ही दी जाती है। रासायनिक और सेंद्रिय खादें एक दूसरे की पूरक हैं। सेंद्रिय या रासायनिक खादें कई बातों में एक दूसरी से श्रेष्ठ हैं और अपनी-अपनी विशेषताएं रखती हैं। अतएव इन दोनों खादों की तुलना करना ही व्यर्थ है।

अमोनियम सलफेट और लोकमत

'फर्टिलाइजर व मैन्युअर एक्सपर्ट कमिटी' ने देश के भिन्न-भिन्न भागों में घूम-फिरकर मत संग्रहीत किये हैं और किसानों से जानकारी भी हासिल की है। इसी के आधार पर अमोनियम सलफेट संबंधी कुछ मत नीचे दिये जा रहे हैं :

लगभग सभी किसान यह स्वीकार करते हैं कि अमोनियम सलफेट देने से उपज अवश्य बढ़ती है। हां, इतना जरूर है कि इस बढ़ोतरी में फर्क अवश्य होता है। पश्चिमी बंगाल के श्री एस० सी० पाल का मत है कि अमोनियम सलफेट देने से प्रति एकड़ चार-छः मन साल अधिक पैदा होता है। मध्य प्रदेश के श्री मुंडले का अनुभव है कि इस उर्वरक से तरकारी की उपज ड्यौढ़ी हो जाती है। किंतु नाज की फसल को खाद देने का खर्च और खाद की कीमत घटाने पर लाभ कम होता है। पश्चिमी बंगाल में धान की पैदावार के मूल्य में से खाद की कीमत आदि का खर्च घटाने पर

इतना कम लाभ होता है कि किसान अमोनियम सलफेट की खाद देने की ओर आकर्षित ही नहीं होते हैं।

किसानों ने अपना अनुभव बतलाते हुए कहा है कि लंबे समय तक इसका उपयोग करने से जमीन की नैसर्गिक उर्वरा-शक्ति घट जाती है; मिट्टी कड़ी और क्षारयुक्त हो जाती है ; फसल को ज्यादा पानी सींचना पड़ता है ; और गन्ना, आलू आदि फसलों के गुण-धर्म खराब हो जाते हैं। पश्चिमी बंगाल के चौबीस पर्गना के श्री एस० पी० बनर्जी का मत है कि तीन साल तक उपज ठीक आती है ; किंतु बाद में अमोनियम सलफेट देने पर भी उपज घट जाती है। किंतु नदिया कृषि-क्षेत्र पर तीन से अधिक सालों तक लगातार यह उर्वरक देते रहने पर भी उपज घटी नहीं है। असम के श्री पी० के० बरुआ लगभग दस साल से यह उर्वरक दे रहे हैं ; किंतु किसी प्रकार का खराब असर दिखाई नहीं दिया है। सोलापुर के श्री जी० जी० शेम्बेकर का कथन है कि इस खाद को देने से जमीन कड़ी हो जाती है। नागपुर के श्री जामदारका कहना है कि जड़ों के अधिक पास में यह उर्वरक दिया गया तो फसल को किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुंचती है। किंतु उनका अनुभव है कि अमोनियम सलफेट देने से उनके संतरे के बागीचे की बहुत क्षति हुई है।

उपर्युक्त मतों के आधार पर यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता है कि अमोनियम सलफेट देना वास्तव में हानिकर है या नहीं। मध्य प्रदेश के डायरेक्टर एग्रीकल्चर जोरदार शब्दों में कहते हैं कि कम-से-कम धान की फसल को तो इससे निश्चित रूप से लाभ ही पहुंचता है और जमीन भी खराब नहीं होती है।

सर्वसाधारण मत यह जान पड़ता है कि केवल अमोनियम सलफेट ही देने और बराबर पानी न सींचने से या पानी की कमी के कारण, अवश्य ही हानि उठानी पड़ती है। यदि गोबर-घूरे की खाद, खली आदि जैव खादों में मिलाकर दिया जाय और काफी पानी सींचा जाय, तो फसल या जमीन पर किसी प्रकार का बुरा असर नहीं पड़ता है। बंबई, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बंगाल, असम और अन्य राज्यों में जैव खादों में मिलाकर उपयोग में लाने का प्रचार किया जा रहा है। बंबई में

अमोनियम सलफेट खली, सुपरफासफेट या बोन-मील में मिलाकर ही किसानों को दिया जाता है। मध्य प्रदेश में किसानों को यह उर्वरक गोबर-घूरे की खाद में मिलाकर काम में लेने की सलाह दी जाती है।

'शूगर केन ब्रीडिंग इंस्टीट्यूट' कोयम्बटूर के श्री के० व्ही० गोपाल का मत है कि, अमोनियम सलफेट जैव खादों के संयोग से गन्ने की उपज काफी बढ़ा देता है। उत्तर प्रदेश के शाहजानपुर गन्ना-कृषि के डॉ० बी० के० मुकर्जी का कथन है कि प्रथम तीन वर्षों तक लगातार अमोनियम सलफेट देते रहने पर बाद के सालों में गन्ने की उपज घटने लगती है। जैव पदार्थों के संयोग से ही यह उर्वरक लाभप्रद प्रभाव दिखाता है। फसल की नोषजन की आवश्यकता का १/३ भाग ही अमोनियम सलफेट उर्वरक द्वारा दिया जाना चाहिए। बंगलोर के डॉक्टर सी० जे० फाउलर का मत है कि जमीन में जैव तत्व का निर्माण करने में मिट्टी में स्थित जीवाणुओं और कीटाणुओं का विशेष महत्व है। अमोनियम सलफेट इनपर घातक असर डालता है।

२—सोडियम नाइट्रेट

दक्षिण अमेरिका के पश्चिमी तटवर्ती प्रदेशों और पेरू व चिल्ली देशों में, जहां वर्षा नहीं होती है, 'नाइट्रेट ऑफ सोडा' या 'चीली साल्ट पीटर' की खदानें मिली हैं। मरु-प्रदेश के उन भूभागों में, जो समुद्र की सतह से तीन-चार हजार फुट की ऊंचाई पर स्थित हैं, ये खदानें पाई जाती हैं। यहां इतना कम पानी बरसता है कि इस पदार्थ के घुलकर नष्ट हो जाने की संभावना ही नहीं है।

खदानों में यह पदार्थ अशुद्धावस्था में ही मिलता है। इसमें मिट्टी, रेत आदि के साथ-ही-साथ क्लोराइड, सोडियम सलफेट, मैगनेशियम, कैलशियम, आयोडिन आदि पदार्थ भी विद्यमान रहते हैं। शुद्ध करने की क्रिया में इनमें से अधिकांश पदार्थ अलग कर लिये जाते हैं। खदानों से निकाले जानेवाले पदार्थ में प्रतिशत १३ से ६० तक नाइट्रेड ऑफ सोडा पाया जाता है। मिस्र की खदानों से निकाले जानेवाले पदार्थ में सोडियम क्लोराइड, सोडियम सलफेट, कैलशियम सलफेट, पोटाशियम सलफेट आदि

न्यूनाधिक परिमाण में पाये जाते हैं । बहुत ही थोड़ी मात्रा में सोडियम आयोडेट भी मिलता है । शुद्ध किये गये माल में २५ से ५० प्रतिशत तक सोडियम नाइट्रेट रहता है । शुद्ध नाइट्रेट ऑफ सोडा में १६·४५ प्रतिशत नोषजन रहता है, जो २० प्रतिशत अमोनिया के बराबर होता है । बाजार में बिकनेवाले शुद्ध माल में ९५ प्रतिशत शुद्ध नाइट्रेट ऑफ सोडा होता है, जो १५·९५ नोषजन के बराबर है । इसमें प्रतिशत २ या ३ जल, ½ से १½ क्लोराइड, जो १ प्रतिशत सोडियम क्लोराइड के बराबर होता है, रहता है । इसमें कुछ अन्य पदार्थ भी सूक्ष्म मात्रा में पाये जाते हैं । प्रतिशत १ से अधिक 'सोडियम परक्लोरेट' का होना हानिकारक प्रमाणित हो सकता है ।

बाजार में यह लगभग विशुद्ध अवस्था में मिलता है, जो सब-का-सब पानी में घुल जाता है । इसमें वातावरण में से तरी सोख लेने का गुण है । इसलिए वर्षाकाल में खुला रखने पर यह घुलकर बह जाता है । यह जहरीला भी है । इसमें प्रतिशत ५६ तक आक्सीजन रहता है । आक्सीजन के ही कारण कोयला और लकड़ी जोर के धक्के के साथ जल उठते हैं । अपने इसी गुण के कारण यह उर्वरक मिट्टी में के पानी में घुलकर जमीन में अधिक गहराई पर उतर जाता है । मिट्टी इसे सोखकर धारण नहीं कर सकती है । इसलिए जब फसल खड़ी हो, तभी यह उर्वरक फसल को दिया जाना चाहिए । नाइट्रेट ऑफ सोडा के कण पड़ते ही या स्पर्श होते ही हरे भाग का पानी सोख लेते हैं, जिससे वे मर जाते हैं । अतएव, खड़ी फसल के खेत में यह उर्वरक खाद देते समय इस बात को सदा ध्यान में रखना चाहिए कि सोडियम नाइट्रेट मिली हुई मिट्टी, पौधे के पत्ते, तना आदि पर पड़ने न पाये ।

इसे सुपरफासफेट और गलाई हुई हड्डी की खाद के अलावा दूसरे सभी किस्म के उर्वरकों में मिला सकते हैं । मिश्रण को जल्द ही खेत में छिड़क देना चाहिए, कारण कि यह धीरे-धीरे नाइट्रिक एसिड को मुक्त करने लगता है जो हवा में उड़ जाता है । इसमें लगभग ९६ प्रतिशत सोडियम नाइट्रेट रहता है, जो लगभग १५·८ प्रतिशत नोषजन या १९ प्रतिशत अमोनिया के बराबर होता है । यह बिलकुल विशुद्ध रूप में ही

बिकता है। कभी-कभी इसमें 'सोडियम परक्लोरेट' का थोड़ा अंश पाया जाता है, जो पौधों को हानि पहुंचाता है। पहले इसमें मामूली नमक मिलाया जाता था; किंतु आजकल नमक मिलाना बंद हो गया है।

नोषजन की पूर्ति करने के लिए ही यह उर्वरक दिया जाता है। खाद देने पर मिट्टी में कुछ रासायनिक परिवर्तन होते हैं, जिससे उसमें का पोटाश घुलनशील अवस्था में आ जाता है। यह खाद देने पर हलकी किस्म की जमीनों के अलावा दूसरी जमीन में पोटाशवाली उर्वरक खाद देने की बिल्कुल ही जरूरत नहीं रह जाती है।

इस खाद को लगातार देते रहने से मिट्टी ज्यादा चिकनी और कड़ी हो जाती है और हल देने पर बड़े-बड़े ढेले निकल आते हैं। यह वातावरण में से नमी सोखती है, जिससे मिट्टी बहुत ज्यादा गीली बनी रहती है। इस दोष को दूर करने के लिए सुपरफासफेट मिलाकर ही देना चाहिए। जिस जमीन में यह खाद दी जाती है, उसमें का कार्बोनेट ऑफ लाइम पानी में घुलकर गहरा उतर जाता है। इंगलैंड में किये गये प्रयोगों से पाया गया है कि प्रति एकड़ लगभग तीनसौ पौंड कारबोनेट ऑफ लाइम मिट्टी में बच रहता है।

यह खाद उत्तेजक मानी जाती है। विश्वास किया जाता है कि यह जमीन की उर्वरा-शक्ति को कुछ अंश में कम करके ही पैदावार बढ़ाती है। नोषजन की पूर्ति के लिए ही यह काम में ली जाती है। इसका उपयोग लगातार किये जाने से पोटाश व फासफरिक एसिड अधिक मात्रा में खर्च होते हैं और यही कारण है कि जमीन की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है। इस दोष को दूर करने की सरल रीति यह है कि इसके साथ-ही-साथ पोटाश और फासफेट भी दिये जाते रहें। पोटाश न भी दिया तो कोई हर्ज नहीं। किंतु फासफेट तो अवश्य ही दिया जाना चाहिए।

पौधे इसमें का नोषजन अति शीघ्र ग्रहण कर लेते हैं और इसीलिए यह खाद बहुत कीमती मानी जाती है। यह भारत में प्राप्त शोरा के समान ही गुणवाली है। भारत में शोरा अत्यधिक मात्रा में मिलता है और सस्ता भी पड़ता है। जिन देशों में शोरे का अभाव है, उन्हीं देशों में यह खाद काम में ली जाती है। हड्डी की राख या सूखी मिट्टी में मिलाकर ही इसे

काम में लाना चाहिए। इस खाद से चारे की फसलें, ज्वार, बाजरा, मक्का, गेहूं आदि जिंसों और आलू, सूरण, शकरकंद, अदरख, हलदी आदि की पैदावार ज्यादा आती है। नोषजन से शाखा-पत्तों की बाढ़ ज्यादा होती है। मामूली नमक मिलाकर देने से शाखा-पत्ते ज्यादा नहीं निकलते हैं। प्रति एकड़ तीन से पांच मन तक खाद दी जाती है। खेत में फैलाने के बाद तुरंत ही डौरा, कुलपा, हैरो, हल आदि चलाकर खाद को मिट्टी में मिला देना चाहिए। सरसों, राई और विदेशी साग-भाजी को भी यह दी जा सकती है। यह जिस फसल को दी जाती है, उसी को फायदा पहुंचाती है।

नाइट्रेट ऑफ सोडा में नोषजन ऐसी अवस्था में रहता है जिसे पौधे तुरंत ही ग्रहण कर लेते हैं। खड़ी फसल को देने पर इसका असर बहुत ही थोड़े दिनों बाद दिखाई देने लगता है, फिर चाहे वर्षा हो या न हो। यह वातावरण में से नमी ग्रहण कर लेती या ओस में घुलकर मिट्टी में प्रवेश कर जाती है। इसीलिए यह ज्यादातर कम वर्षावाले प्रदेशों में ही काम में ली जाती है। अति शीघ्र घुल जाने के कारण ही यह उर्वरक हलकी किस्म की जमीन में देने योग्य नहीं है, कारण कि यह पानी में घुलकर बहकर बाहर चली जाती या जमीन में गहराई पर उतर जाती है। बीज बोने से पहले यह कदापि नहीं दी जानी चाहिए। सदा पौधों के कुछ ऊंचे बढ़ जाने पर ही डाली जानी चाहिए। दस-दस या पंद्रह-पंद्रह दिन के अंतर पर दो या तीन बार में खाद देना अधिक लाभदायक है।

इस बात का स्मरण रखना चाहिए कि सूखी मिट्टी, रेत या लकड़ी के बुरादे में मिलाकर ही खड़ी फसल के खेत में बिखेरा जाय। यह अन्य खादों में मिलाकर ही जमीन में डाली जाय और तुरंत ही आलू बो दिये जायं।

विशेषज्ञों का मत है कि सुपरफासफेट और गलाई हुई हड्डी के चूर्ण-जैसी खादों में इसे कदापि नहीं मिलाना चाहिए। इसे बेसिक-स्लैग, सोडियम क्लोराइड और पोटाश के लवणों में मिलाने में हर्ज नहीं है, किंतु, जहां-तक संभव हो, न मिलाना ही अच्छा है।

जिन खादों में के पौधों के भोज्य पदार्थ धीमी गति से जड़ों द्वारा सोख लिये जाने की अवस्था को प्राप्त होते हैं, उनका असर कुछ वर्षों तक दिखाई

देता रहता है और प्रतिवर्ष उपज कम ही होती है। नाइट्रेट ऑफ सौडा में के नोषजन का अधिकांश पहले वर्ष में ही ग्रहण कर लिया जाता है। इन्हीं सब कारणों से यह खाद उतनी लाभदायक नहीं मानी जाती है।

काली मिट्टीवाली जमीनों में सोडियम नाइट्रेट नहीं दिया जाना चाहिए, कारण कि इसमें के सोडियम से जमीन में के कार्बन-द्वि-ओषिद का संयोग होने पर सोडियम कार्बोनेट का निर्माण हो जाता है। मिट्टी में सोडियम कार्बोनेट की मात्रा बढ़ जाने पर फसल को हानि पहुंचती है। दूसरी किस्म की जमीनों में यह उर्वरक देने में हर्ज नहीं है।

३—अमोनियम नाइट्रेट

भड़क उठनेवाले पदार्थों को बनाने के लिए ही इसका उपयोग किया जाता है। किंतु यह एक नोषजनीय खाद भी है, जो अमोनियम सलफेट से किसी प्रकार भी नीचे दरजे का नहीं है, कारण कि यह अति शीघ्र घुल जाता है और पौधों की जड़ें इसे तुरंत ही ग्रहण कर लेती हैं। इसमें नोषजन, नोषेत (नाइट्रेट) और अमोनिया दोनों रूपों में रहता है। अतएव यह घास-चारे की फसलों और नोषजन की मांग करनेवाली फसलों के लिए एक उत्तम खाद है। यह खाद फसल बोने से पहले और फसल बोने के बाद जड़ों पर डाला जा सकता है। सिंचाई के पानी में घोलकर देने से भी यह बहुत अच्छा असर दिखाता है। बलुआर-दुमट जमीन में भी यह अच्छा गुण दिखाता है। सोडियम नाइट्रेट और अमोनियम सलफेट के समान ही यह लाभकारी प्रमाणित हुआ है। कपास, धान, मक्का, शकरकंद, गेहूं आदि के लिए एक अच्छी खाद है।

प्रयोगों से पता चला है कि अमोनियम नाइट्रेट या अमोनियम नाइट्रेट तथा एन० टी० टी० के मिश्रण के रूप में ४० पौंड नोषजन देने से बिना खाद या उर्वरक दी गई फसल की पैदावार से बहुत ज्यादा उपज आई है। गेहूं, ज्वार, कपास, चरी, धान व मक्का पर ही ये प्रयोग किये गये थे। इससे ज्ञात हुआ है कि इसमें एन० टी० टी० मिलाने की भी आवश्यकता नहीं है और यह अमोनियम सलफेट से किसी प्रकार नीचे दर्जे का नहीं है।

४—पोटाशियम नाइट्रेट

खाद की दृष्टि से इसमें दो अमूल्य पदार्थ हैं—नाइट्रिक एसिड व पोटाश। जिन जमीनों में पोटाश की आवश्यकता मालूम होती है, उनमें सोडियम नाइट्रेट की अपेक्षा पोटाशियम नाइट्रेट देना अधिक लाभदायक पाया गया है। किंतु विशेषज्ञों का मत है कि नाइट्रेट ऑफ सोडा और पोटाशयुत खाद अलग-अलग खरीदकर मिश्र करके देना आर्थिक दृष्टि से लाभदायक है। ऐसा करने से खाद कुछ सस्ती भी पड़ती है।

५—कैलशियम सायनामाइड (नाइट्रोलिम)

यह खाद दो-तीन तरह से तैयार की जाती है। शुद्धता के अनुसार इसमें प्रतिशत १५ से २० तक चूना बना रहता है। यही कारण है कि यह हवा में से तरी सोख लेता है, जिससे सायनामाइड धीरे-धीरे अमोनिया में बदल जाता है। खुला रखने पर कुछ अमोनिया हवा में उड़ जाता है। थैलों-बोरों में भरकर रखने पर यह हानि नहीं हो पाती है। शुद्ध नाइट्रोलिम में ३५ प्रतिशत नोषजन रहता है, जो ४२·५ प्रतिशत अमोनिया के बराबर होता है। बाजार में बिकनेवाले सायनामाइड में प्रतिशत २० तक नोषजन रहता है। मिट्टी में उपस्थित जैव पदार्थों के कारण जमीन में रासायनिक क्रियाएं होती रहती हैं और कैलशियम नाना रूप धारण करता हुआ यूरिया, अमोनिया और इसी प्रकार के अन्य रूपों में परिवर्तित हो जाता है। इन क्रियाओं का मिट्टी पर लाभकारी प्रभाव पड़ता है और अमोनिया के यौगिकों से नत्रीभवन की क्रिया को उत्तेजना मिलती है। यह खाद अमोनियम सलफेट के समान लाभदायक नहीं है। चूने की कमीवाली जमीनों में चूने की पूर्ति करने के लिए इसे दे सकते हैं।

यह बहुत ही हलकी होती है और हवा के साथ उड़ जाती है। इसमें से निकलनेवाला अमोनिया उगनेवाले बीज को नुकसान पहुंचाता है और खेत में फैलाते समय भी इसमें का अमोनिया हवा में उड़ जाता है। इसलिए इसे अकेला ही देना हो तो बीज बोने से लगभग दस दिन पहले या पौधों के करीब एक बालिश्त ऊंचे बढ़ जाने पर सूखी मिट्टी में मिलाकर ही खेत में फैलाना चाहिए।

नाइट्रोलिम बेसिक स्लैग, गोश्त के चूर्ण, पोटाश के लवण और सुपर-फासफेट में मिलाकर दिया जा सकता है। सायनामाइड को इन पदार्थों से पूरी तरह से ढंक धीरे-धीरे हलके हाथ से मिलाकर चौबीस घंटे तक पड़ा रहने देने के बाद खेत में डालना चाहिए। मिलाते समय यदि खाद गरम हो जाय, तो थोड़ा पानी छिड़क देने में हर्ज नहीं है। यह खाद बहुत ही महीन चूर्ण के रूप में मिलती है। अतएव, इसे सूखी मिट्टी में मिलाकर ही खेत में फैलाना चाहिए। फैलाने के बाद तुरंत ही जुताई करके खाद को मिट्टी में मिला देना चाहिए।

नोषजन की पूर्ति करने के लिए यह सभी फसलों को दी जा सकती है। इस उर्वरक से नाज की फसलों, जड़वाली फसलों और बागवानी की फसलों को लाभ पहुंचता है।

६—नाइट्रेट ऑफ लाइम

प्रारंभ में बिजली की सहायता से ही यह उर्वरक तैयार किया जाता था। किंतु बाद में धीरे-धीरे कई नवीन प्रणालियों का आविष्कार किया गया। रासायनिक पद्धति से यह बनाई जाने लगी है। इसमें पाये जाने-वाले नोषजन के कारण ही 'नाइट्रेट ऑफ लाइम', 'नाइट्रेट ऑफ सोडा' के समकक्ष खाद मानी जाती है। कुछ किस्म की जमीनों के लिए यह बहुत ही लाभदायक पाई गई है, कारण कि इसमें का चूना 'कैलशियम कार्बोनेट' के रूप में मिट्टी के अंदर ही रह जाता है, जिसकी वजह से चिकनी मिट्टी का ज्यादा चिकनापन दूर हो जाता है और ज्यादा पानी सोखकर मिट्टी का अधिक गीला बना रहना कम हो जाता है। कुछ देशों में मिट्टी के इस दोष को दूर करने के लिए यह उर्वरक अधिक मात्रा में दिया जाता है।

मिट्टी, कम्पोस्ट और जैव पदार्थों में रासायनिक परिवर्तन होते हैं, जिससे नत्रीभवन की क्रिया द्वारा 'कैलशियम नाइट्रेट' का निर्माण होता है। नैसर्गिक क्रियाओं द्वारा ही यह परिवर्तन होता है और 'सोडियम' की उपस्थिति से किसी प्रकार की हानि नहीं पहुंचती है। आजकल वातावरण में की वायु से यह उर्वरक बनाया जाने लगा है।

बाजारों में बिकनेवाले पदार्थ में १३ प्रतिशत नोषजन होता है, जो

७५ प्रतिशत 'कैलशियम नाइट्रेट' के बराबर होता है, जिसमें का १/४ भाग पानी में अघुलनशील रहता है। समान भाग सूखी मिट्टी में मिलाकर ही यह उर्वरक खेतों में दिया जाता है।

नोषजनीय खाद दो प्रकार के होते हैं—जल्दी असर करनेवाले और धीरे-धीरे असर करनेवाले। नाइट्रेट ऑफ सोडा, सलफेट ऑफ अमोनिया, सायनामाइड और नाइट्रेट ऑफ लाइम जल्दी असर करनेवाले उर्वरक हैं।

: ७ :

फासफेटवाली खादें

पहले बतला आये हैं कि नोषजन पौधों की वृद्धि करता है, जिससे उनको पूर्ण बाढ़ तक पहुंचने में अधिक समय लग जाता है। फासफरिक एसिड का असर दूसरे ही प्रकार का होता है, दाने की बनावट और दाने के भरने पर इसका असर पड़ता है। इस खाद को देने से दाना जल्दी बैठने लगता है और शीघ्र ही भर जाता है। इस खाद से भूसे से दाने का अनुपात बढ़ जाता है और दाने में का नोषजन कुछ कम हो जाता है। इससे जड़ें खूब ज्यादा बढ़ती और उन पर शाखा-प्रशाखाएं भी ज्यादा निकलती हैं। प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि गरमी शुरू होने से पहले ही रबी फसलों की जड़ों का जमीन के अंदर ज्यादा गहराई पर ठंढे और तरीवाले स्थान पर पहुंच जाना अधिक लाभदायक है। फासफरिक एसिड इस काम में पौधों की अच्छी सहायता करती है।

भिन्न-भिन्न प्रकार की जमीनों में इस खाद का असर भिन्न-भिन्न तरह का होता है। सुपरफासफेट, बेसिक स्लैग, या हड्डी के चूर्ण के चुनाव में उनमें के तत्वों की घुलनशीलता पर विचार करना जरूरी है। किंतु साथ ही कैलशियम कार्बोनेट की मात्रा पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

हलकी और रेतीली जमीनें छोड़कर दूसरी सब प्रकार की जमीनों को फासफेटवाली खाद सुपरफासफेट के रूप में ही दी जानी चाहिए। किंतु यह जमीन की ऊपर की सतह पर ही रह जाती है—खेत की सतह से नौ इंच से नीचे की मिट्टी में प्रवेश ही नहीं करती है। इसलिए फासफेटवाली खादें, फसल बोने से कुछ दिन पहले ही दी जानी चाहिए, जिससे फसल बोने से पहले ही वह मिट्टी में मिलकर जड़ों द्वारा ग्रहण किये जाने की हालत में आ जायं।

घुलनशील फासफरिक एसिड की प्रति पौंड कीमत की तुलना करके

ही सुपरफासफेट और बेसिक स्लैग में से जो सस्ता पड़े वही काम में लिया जाना चाहिए। बेसिक स्लैग में के चूने का अधिक महत्व है। इसकी सहायता से जमीन में का पोटाश घुलनशील अवस्था में आ जाता है और मिट्टी में के नोषजन के ओषिदीकरण में भी इससे पर्याप्त सहायता मिलती है। इस खाद से जमीन का पोत भी सुधर जाता है। भारी जमीन और जिस जमीन में कार्बोनेट ऑफ लाइम की कमी हो, उसपर बेसिक स्लैग का अच्छा असर पड़ता है। चूनावाली और दुमट जमीन में सुपरफासफेट अच्छा असर दिखाता है। गीली खट्टी जमीनों में—खटिया जमीनों में, सुपरफासफेट के अलावा दूसरी किसी किस्म की फासफेटवाली खाद कदापि नहीं दी जानी चाहिए। कार्बोनेट ऑफ लाइम की कमीवाली जमीनों में दो भाग सुपरफासफेट में एक भाग हड्डी का चूर्ण या बेसिक स्लैग या भाप दी गई हड्डी का आटा या फासफेटयुत ग्वानो में से किसी एक को मिलाकर बनाया गया मिश्रण दिया जाना चाहिए। इस मिश्रण को कुछ दिनों तक पड़ा रहने देने से ग्वानो या हड्डी में के 'ट्राय कैलशियम' विशेष क्रियाओं द्वारा 'डाय-कैलशियम' में परिवर्तित हो जायगा। कार्बोनेट ऑफ लाइम की कमीवाली जमीनों के लिए यह मिश्रण एक अच्छी खाद है।

कच्ची हड्डी या हड्डी के चूर्ण को लोग ज्यादा पसंद करते हैं, कारण कि इनमें फासफरिक एसिड के साथ ही नोषजन भी रहता है। किंतु ये बहुत ही धीरे-धीरे गलते हैं। इसलिए जिन फसलों को तुरंत ही भोज्य पदार्थ पहुंचाने हों, उनके लिए ये बेकार-से ही हैं।

चर्बी आदि पदार्थ लगे रहने के कारण हड्डी का बहुत ही महीन चूरा या आटा किया नहीं जा सकता है। हड्डी में का 'ट्राय कैलशियम फासफेट' घुलनशील तो है किंतु हड्डी का चूरा दानेदार होने के कारण इसका बहुत थोड़ा भाग ही घुलनशील है। इसमें का फासफरिक एसिड, जिस फसल को खाद दी जाती है, उसके बाद के साल में ही फसल को फायदा पहुंचाता है। हड्डी के चूर्ण की अपेक्षा भाप देकर तैयार किया गया हड्डी का आटा ज्यादा अच्छा है। इसका यह कारण है कि ज्यादा महीन होने के कारण अधिक फासफेट घुलनशील अवस्था में आ जाता है और इसमें का नोषजन भी फसल को मिल जाता है।

महीन पीसे हुए खनिज फासफेट की खाद उन्हीं जमीनों में दी जानी चाहिए, जिनमें जैव पदार्थ अधिक मात्रा में मौजूद हों। जैव पदार्थों के होने के कारण मिट्टी में के पानी में कार्बन-द्वि-ओषिद का तेज घोल तैयार हो जाता है, जिसमें यह घुल जाता है।

सभी प्रकार की फासफेटवाली खादों में 'फासफेट ऑफ कैलशियम' का विशेष महत्व है। वास्तव में 'फासफेट ऑफ लाइम' का 'ट्राय कैलशियम फासफेट' रूप ही खाद के लिए उपयोगी है, जो हड्डी की राख और चट्टानों में पाया जाता है। साधारणतः कैलशियम फासफेट के ३१० हिस्से में १४२ हिस्सा फासफरिक एसिड होता है। इसलिए विश्लेषण से जितना प्रतिशत फासफरिक एसिड पाया जाता है, उसे $\frac{३१०}{१४२}$ से गुणा करने से जो गुणनफल मिलता है, उतना ही प्रतिशत ट्राय कैलशियम फासफेट है, ऐसा मान लिया जाता है और इस प्रकार सभी प्रकार की फासफरिक खादों में का प्रतिशत परिमाण निकालकर तुलना की जा सकती है कि, कौन-सी खाद सस्ती और उत्तम है।

प्राकृतिक अवस्था में प्राप्त फासफेट पर गंधकाम्ल या हायड्रोक्लोरिक एसिड से क्रिया करने पर 'डार्य कैलशियम हायड्रोजन फासफेट' प्राप्त होता है, जो एक स्थिर और निश्चित यौगिक (Stable and definite compound) है। ट्रायकैलशियम फासफेट पर गंधकाम्ल की क्रिया करके सुपरफासफेट बनाया जाता है। इसमें घुलनशील फासफरिक एसिड रहता है, जिसका कुछ अंश पौधों द्वारा तुरंत ही ग्रहण कर लिया जाता है।

लगभग १५० साल पहले तक हड्डी की खाद ही एक मात्र फासफेटयुत खाद मानी जाती थी और भारत से प्रतिवर्ष लाखों मन हड्डी विदेशों को भेजी जाती थी। किंतु बेसिक स्लैग का पता चल जाने और खनिज पदार्थ प्राप्त हो जाने से खाद के लिए हड्डी की मांग धीरे-धीरे घट गई है और घटती जा रही है।

हड्डियों को उनकी असली हालत में उपयोग में लेना लाभदायक नहीं है, कारण कि वे जल्दी सड़ती नहीं हैं। चर्बी आदि अलग करने के लिए कच्ची हड्डी को १५ से २० पौंड के भाप के दबाव से शुद्ध कर लिया जाता

है और इसमें से निकली हुई कच्ची चरबी 'टैलो' नाम से बेची जाती है, जो साबुन बनाने के काम में आती है। बेनझीन की सहायता से चरबी अलग करके हड्डी साफ की जाती है। उबाली या भाप से साफ की गई हड्डी में ४ प्रतिशत नोषजन और ४० से ५० प्रतिशत कैलशियम फासफेट रहता है, जो तुरंत ही खाद के काम में आ सकता है। भिन्न-भिन्न नमूनों में यह मात्रा न्यूनाधिक होती है।

भारत में हड्डी की खाद बनाने का प्रश्न अत्यधिक महत्व रखता है। देश में फासफेट की चट्टानें भी हैं। इस खनिज फासफेट से तो सुपरफासफेट बनाना ही अधिक लाभदायक है। अमेरिका के एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक मि० पीरे का कथन है कि कृषि के लिए फासफरस अधिक लाभदायक है। अन्य भोज्य पदार्थों की अपेक्षा इसकी कमी के कारण ही अकसर पैदावार कम आती है।

भारत में हड्डी ही फासफेट की कमी की पूर्ति का एक मुख्य साधन है। मद्रास राज्य के कृषि-विभाग की एक रिपोर्ट में स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि दक्षिण भारत की सभी प्रकार की फसलों के लिए फासफरिक खाद की अत्यधिक कमी महसूस की जा रही है। यह मानी हुई बात है कि मद्रास, मैसूर, दक्षिण-पूर्व-बंबई, छोटा नागपुर, उड़ीसा, दक्षिण बंगाल और मध्य प्रदेश की भूमि में फासफरिक एसिड, नोषजन और जैव तत्व की कमी है। साधारण तौर से पोटाश और चूना मिट्टी में पर्याप्त मात्रा में मौजूद हैं। कहीं-न-कहीं सभी राज्यों में इनकी कमी अवश्य ही पाई गई है।

इस देश के पशुओं के शरीर में गोश्त कम और हड्डी ज्यादा होती है। इनकी औसत आयु ६ वर्ष और औसत वजन ६०० पौंड है। मृत पशु के शरीर का १६·६ प्रतिशत हड्डी है। एक पशु के शरीर से लगभग ५० सेर हड्डी प्राप्त होती है। अनुमान है कि देश में १६ लाख टन हड्डी की खाद तैयार की जा सकती है। इतनी खाद से देश की इस खाद की माँग की पूर्ति सहज ही की जा सकती है।

पूसा में किये गये प्रयोगों से पाया गया है कि हड्डी के आटे की खाद देने से आलू, चना, और गेहूँ की फसल के लिए जमीन का उपजाऊपन काफी बढ़ाया जा सकता है। बंगाल और बिहार में धान की फसल के लिए हड्डी

का चूर्ण बहुत ही लाभदायक पाया गया है। गया में केवल सुपरफासफेट देने से गन्ने की उपज और रस में शर्करांश की वृद्धि हुई है। मद्रास में केवल सुपरफासफेट देने से धान की उपज अधिक प्राप्त हुई है।

हड्डी की खाद कई तरह से बनाई जाती है और इन भिन्न-भिन्न रूपों में ही इसका उपयोग किया जाता है। ये रूप हैं—(१) हड्डी का चूरा, (२) हड्डी का आटा, (३) हड्डी की राख, (४) हड्डी का कोयला, (५) हड्डी के टुकड़े और (६) सुपरफासफेट।

हड्डी का चूरा—चरबी निकाल लेने के बाद हड्डी के पावइंच-आधा-इंच के टुकड़े कर लिये जाते हैं। हड्डी को हाथ से पीसकर आटे-जैसी महीन बनाना बहुत ही कठिन है। मशीन से पीसना ही अच्छा है। इसमें प्रतिशत ४० से ४५ तक कैलशियम फासफेट और प्रतिशत ३ से ५ तक नोषजन रहता है। यह बहुत ही धीरे-धीरे असर करता है। इस खाद का असर तीसरे साल से दिखाई देने लगता है। प्रति एकड़ २५ मन तक खाद दी जाती है। चरागाहों के लिए यह एक उत्तम खाद है।

ग्लू (Glue) बनानेवाली फैक्टरी से निकली हुई हड्डियों को फिर से भाप में देते हैं और रहा-सहा ग्लू निकाल लेने के बाद हड्डियों को मशीन से महीन पीस लिया जाता है। इसे भाप दी गई हड्डी का आटा कहते हैं। इसमें प्रतिशत १·५ नोषजन और प्रतिशत ६० कैलशियम फासफेट रहता है। आटा बहुत ही महीन होता है और मिट्टी में सरलता से मिल जाता है। हाथ से खेत में बिखेरने से कुछ भाग हवा से उड़ जाता है। अतएव कुछ गीली मिट्टी या लकड़ी के बुरादे में मिलाकर खेत में बिखेरना अच्छा है।

हड्डियों को पानी में उबालकर या बहुत दिनों तक धूप आदि में खुले स्थान पर रख छोड़ने के बाद, हाथ-चक्कियों में पीसकर या कूट-पीटकर चूरा करते हैं। ताजी हड्डियों की चरबी निकाल करके भी चूरा किया जाता है। इसे कभी-कभी 'कच्ची हड्डी का चूरा' भी कहते हैं। उबालकर या भाप द्वारा चर्बी अलग करके तैयार किये गये हड्डी के चूरे से यह एक भिन्न पदार्थ है। कच्ची हड्डी के चूरे में पाये जानेवाले भोज्य पदार्थों के प्रतिशत परिमाण में भिन्नता पाई जाती है।

हड्डी की खाद का असर उसके आकार के कणों पर ही निर्भर करता

है। इसलिए हड्डी को मशीन से बारीक पीसकर आटा-सा बना लिया जाता है, जो बाजार में 'बोनमील', 'बोन डस्ट', 'बोन फ्लोअर' आदि नामों से पहचाना जाता है। ये नाम उसी पदार्थ को दिये गये हैं, जो एक वर्ग इंच में आठ तार लगाई गई छलनी से ९० प्रतिशत छन जाता है। इससे मोटे माल को पावइंच-आधाइंच हड्डी-चूर्ण कहते हैं, जो क्रमशः एक वर्ग इंच में चार-तार या दो तार लगी छलनी में ९० प्रतिशत छन जाता है। अधिक महीन माल कुछ महंगा बिकता है। किंतु वह उसी मान से कुछ ज्यादा फायदेमंद भी होता है। फल-झाड़ों और चरागाहों के लिए यह एक अच्छी खाद है।

कहीं-कहीं चूना पीसने के घट्टे में डालकर टुकड़े कर लेते हैं और तब हाथ-चक्की में पीसते हैं। इसमें खर्च ज्यादा बैठता है और मिहनत भी ज्यादा पड़ती है। कहीं-कहीं ऊखलों में या घनों से भी टुकड़े किये जाते हैं। नील और चाय के बागान में इसका उपयोग किया जाता है। पीसनें में ज्यादा तकलीफ न हो, इसलिए कहीं-कहीं हड्डी को पहले सड़ा लिया जाता है।

हड्डी सड़ाने की विधियां

१. जरूरत के मुताबिक गढ़ा तैयार करके उसकी तली में भट्टी का चूना मिली हुई गोबर-कचरा आदि की खाद की तीन-चार इंच मोटी तह दी जाती है। चूना न मिलने पर राख काम में ली जा सकती है। इसपर हड्डी की मोटी तह दी जाती है। हड्डी की तह के ऊपर फिर खाद की तह दी जाती है। गढ़ा भरने तक तह-पर-तह जमाये जाते हैं। इन पदार्थों पर काफी पानी छिड़ककर गढ़े का मुंह मिट्टी से बंद कर दिया जाता है। पदार्थों को गीला बनाये रखने के लिए अकसर पानी छिड़कते रहना चाहिए। लगभग छह मास में हड्डियां सड़ जायंगी। यदि गढ़े का मुंह बंद न करना हो तो हड्डियों के ढेर पर कूड़ा-कचरा, राख आदि हर रोज डालते जाना चाहिए। खाद के साथ-ही-साथ हड्डियां भी सड़ती रहेंगी। इमली की पत्तियां डालने से हड्डियां जल्दी सड़ती हैं। ढेर पर गंदा पानी, पेशाब, पनाले का पानी या तालाब का पानी छिड़कने से उत्तम खाद बनती है।

२. आवश्यकतानुसार लंबी, चौड़ी और गहरी नालियां खोदी जायं।

हड्डी, भट्टी का चूना, गोबर, राख और घोड़े की लीद बराबर-बराबर ली जाय। नाली की तली में हड्डियां फैलाकर उसपर राख की तह दी जाय। राख पर घोड़े की लीद और तब गोबर की तह दी जाय। आखिरी तह भट्टी के चूने की दी जाय। हरेक तह में की चीजों को गीली बनाये रखने के लिए पानी देना जरूरी है। इसलिए हरेक तह में बांस की पोली नलियां खड़ी कर दी जायं, जिनके नीचे के भाग पर छोटे-छोटे छेद रखे जायं। इन नलियों में पानी डालते रहने से हरेक तह गीली बनी रहेगी, जिससे वे जल्दी सड़ेंगे। नालों-पनालों का पानी, गंदा पानी या तालाब का पानी थोड़े-थोड़े दिनों के अंतर से डाला जाता रहे। चूने की आखिरी तह देने के बाद नालियां मिट्टी से बंद कर दी जायं। दो माह बाद फावड़ों से उलट-पुलट कर देने के उपरांत पानी से तर-ब-तर करके मिट्टी ढंक दी जाय। हर दो माह बाद फावड़ों से उलट-पुलट करके पानी छिड़का जाया करे और तब मिट्टी से ढक दिया जाता रहे। लगभग छः मास में हड्डी बहुत ही नरम हो जायंगी। तब ये सरलता से पीसी जा सकेंगी। छः मास में भी नरम न पड़ें तो, दो महीने और रहने देना चाहिए। गढ़े में से हड्डियां निकालकर पीस ली जाती हैं और दूसरी खाद खेत में डाल दी जाती है। हड्डी के चूरे को गोबर की खाद या खली की खाद में मिलाकर काम में लेना अच्छा है।

३. गांव के आसपास बिखरी हुई हड्डियों को एकत्रित करके उनके आधा इंच मोटे टुकड़े कर लिये जायं। इनको ढेर में एकत्रित करके पानी से तर-ब-तर कर लिया जाय और तब महीन मिट्टी से ढक दिया जाय। एक महीने में हड्डी के टुकड़े नरम हो जायंगे। इनको खेत में फैलाकर हल से मिट्टी में दबा दिया जाय।

४. चूना पीसने के घट्टे में सूखी हुई हड्डी डालकर चूरा कर लिया जाय। १०० भाग चूरा, २५ भाग गंधक, १०० भाग नदी-नाले की महीन रेत और २५ भाग पानी लेकर सबको अच्छी तरह से मिला लिया जाय। इस मिश्रण में ७ प्रतिशत कोयले का चूरा मिलाया जाय। इन पदार्थों को अच्छी तरह से मिलाकर, जैसे पक्की सड़क के किनारे गिट्टी के चट्टे लगाये जाते हैं, उसी तरह के चट्टे लगाये जायं। वर्षा और धूप से बचाये रखने के लिए इन चट्टों पर छाया कर दी जाय। चट्टे में के पदार्थों को गीला बनाये रखने

के लिए महीन छेद के झारे से पानी सींचा जाता रहे। छः मास में खाद बनकर तैयार हो जायगी।

मालाबार आदि स्थानों में नारियल की जड़ों के पास हड्डियां गाड़ दी जाती हैं। नेपाल में फल-झाड़ लगाने के लिए बनाये गये गढ़े की तली में हड्डियां डाली जाती हैं। तब खाद और मिट्टी के मिश्रण से गढ़ा भर दिया जाता है। कन्नड़ में कपास के झाड़ की जड़ों के पास हड्डियां डाली जाती है। बंबई के कुछ हिस्सों में आम के झाड़ को हड्डी के महीन चूरे की खाद दी जाती है। पूना की ओर मुसलमान माली गोबर और लीद की खाद में हड्डी का चूरा मिलाकर फल-झाड़ों को देते हैं। सिंध में हड्डी को सड़ाकर गोबर की खाद में मिलाकर बागीचों में काम में लेते हैं।

प्रति एकड़ २५० सेर हड्डी का महीन चूरा डाला जाना चाहिए। गेहूं को भी इस खाद से लाभ पहुंचता है। हड्डी का चूरा जितना ही महीन होगा, उतनी ही जल्दी फसल को फायदा पहुंचायेगा। इसलिये मशीन से पीसा गया आटे के समान महीन चूरा ही काम में लिया जाना चाहिए। यह खाद फसल बोने से लगभग छह माह के पहले ही दी जानी चाहिए, ताकि फसल बोई जाने तक हवा और गरमी से उसमें के भोज्य पदार्थ घुलनशील अवस्था में आ जायं।

हड्डी की राख और कोयला—हड्डी को लकड़ी की तरह जलाकर राख बनाई जाती है। पाकिस्तान में स्थित कुछ इलाकों में मुसलमान लोग हड्डी को ईंधन की तरह काम में लेते हैं। हड्डी और लकड़ी साथ-साथ जलाई जाती है। यह राख रुपया-दो रुपया मन बिकती है। हड्डी के आटे की अपेक्षा राख कुछ सस्ती बिकती है। किंतु राख में नोषजन बिल्कुल ही नहीं रहता है। इसलिए आटे की अपेक्षा राख कुछ घटिया दर्जे की होती है। राख में सिर्फ चूना और फासफरस रहता है। शुद्ध राख में केवल ट्राय कैलशियम फासफेट रहता है। बाजार में बिकनेवाले पदार्थ में यह ८० प्रतिशत पाया जाता है। यह तुरंत ही घुल जाने की अवस्था में रहता है। अतएव किसानों की दृष्टि से यह एक उत्तम खाद है। यह केवल फासफेटयुत खाद ही है।

हड्डी का कोयला भी खाद की तरह काम में लिया जाता है। शकर

के कारखानों में मैल छांटने के लिए इस कोयले का उपयोग किया जाता है। उपयोग में लिये जाने के बाद यह कोयला खाद के काम में आ सकता है। सौ मन हड्डी जलाने के लिए बीस मन से सत्तर मन तक लकड़ी की जरूरत पड़ती है। जली हुई हड्डी का महीन चूरा खेत में डाला जाता है। जलाने से इसमें का नोषजन नष्ट हो जाता है।

सबसे नीचे घास-फूस, सनेटी, तिलौंजा आदि की तह देकर उसपर हड्डी जमा दी जाती है। हड्डी पर ईंधन बिछाया जाता है और तब आग लगा दी जाती है। किंतु इस रीति से पूरी-की-पूरी हड्डी जल नहीं पाती है इसलिए चूना पीसने के घट्टे या ऊखल में डालकर चूरा कर लिया जाता है। एक एकड़ के लिए लगभग तीन मन चूरा काफी है। इसमें प्रतिशत १·५ नोषजन और ३३ फासफरिक एसिड रहता है।

हड्डी का सुपरफासफेट—हड्डी पानी में गलती नहीं है। इसलिए इसपर गंधकाम्ल से क्रिया की जाती है। इस रीति से तैयार की गई खाद को ही सुपरफासफेट कहते हैं। सुरफासफेट तैयार करना भारतीय किसान की शक्ति से बाहर है। फिर भी, केवल जानकारी के लिए सुपर-फासफेट तैयार करने की रीति नीचे दी जाती है।

यह खाद मिट्टी की नांद या लकड़ी के पीपे में तैयार की जा सकती है। हड्डी की राख या हड्डी का चूरा जितना लिया जाय, उसका आधा गंधक का तेजाब लिया जाय। बरतन में एक तह हड्डी की राख की और दूसरी तह हड्डी के चूरे की दी जाय। नांद या पीपे का $\frac{1}{2}$ भाग खाली रखा जाय। बरतन में पानी डालकर लकड़ी से पदार्थों को तेजी से चलाया जाय। इसके बाद धीरे-धीरे गंधक का तेजाब डाला जाय और तेजाब डालते समय पदार्थों को लकड़ी के डंडे से तेजी से चलाया जाय। गंधक के तेजाब से शरीर जल जाता है। इसलिए काम करते समय बहुत ही सावधानी बरती जानी चाहिए। तेजाब डालने पर गरम भाप निकलने लगती है। तेजाब डाल देने के बाद खूब तेजी से अच्छी तरह चला देने के बाद मिश्रण को पड़ा रहने दिया जाय। ठंढा हो जाने पर निकालकर सुखा लिया जाय। इसे पीपों या बोरों में भरकर रखते हैं। यही सुपरफासफेट है। फल-झाड़, गेहूं, आलू, विदेशी तरकारियों आदि को यह खाद पानी में घोलकर देने से

काफी फायदा पहुंचता है। इस प्रकार तैयार की गई खाद पांच-सात रुपया मन पड़ जाती है। बहुत बड़े पैमाने पर बनाई जाय, तो काफी सस्ती पड़ेगी।

प्रति एकड़ दो से सात मन तक खाद दी जाती है। जिस जमीन में चूना या फासफरस का अंश कम हो उसे ही यह खाद दी जानी चाहिए।

बोनमील और सुपरफासफेट ही ऐसी खादें हैं, जिनकी मांग काफी बढ़ गई है। सुपरफासफेट का असर तुरंत नजर नहीं आता है, इसलिए इसकी मांग जरा कम ही है। इसके अलावा हाथ से खेत में बिखेरकर देने से इसका असर अच्छा नहीं होता है। बंगाल के वर्धमान जिला, खाशी और जांटिया पहाड़ी इलाकों , तथा बंबई के समुद्र-तटवर्ती प्रदेशों में धान को हड्डी के चूरे की खाद दी जाती है। पश्चिमी बंगाल और असम के किसान इस खाद से होनेवाले लाभों से भली प्रकार परिचित हैं और यह बात भी वे जान गये हैं कि बाद की फसलों को इस खाद से काफ़ी फायदा पहुंचता है। सभी राज्यों में यह खाद ज्यादातर बागवानी की फसलों को ही दी जाती है। निसिफोस, अमोफोस और अमोनियम सलफेट भी धीरे-धीरे जड़ जमाते जा रहे हैं।

मध्य प्रदेश में सुपरफासफेट देने से धान की उपज में काफी वृद्धि हुई है। पश्चिमी बंगाल और असम के कुछ इलाकों में तथा बंबई में दूसरे प्रकार की खादों में मिलाकर ही काम में लेते हैं। पूना के आसपास के प्रदेशों में यह खाद आलू की फसल को दी जाती है।

खनिज फासफेट—कॉप्रोलाइट्स (coprolites) छोटे-छोटे गोल-कंकर के रूप में ही मिलता है। इसमें 'फासफेट ऑफ लाइम' अशुद्ध रूप में रहता है। इसमें हड्डी के टुकड़े, शार्क मछली के दांत आदि भी पाये जाते हैं। आजकल इसकी मांग बंद-सी हो गई है। इसमें ५५ प्रतिशत तक कैलशियम फासफेट, १० प्रतिशत कैलशियम कार्बोनेट और ३ प्रतिशत कैलशियम क्लोराइड रहता है। इससे सुपरफासफेट बनाया जाता है। वेस्ट इण्डीज आदि द्वीपों में मिलनेवाले इस खनिज में फासफेट बहुत ज्यादा मात्रा में रहता है और नोषजन का तो अभाव ही है। लोबोस द्वीप में मिलने-वाले खनिज में प्रतिशत २ नोषजन और प्रतिशत ६० तक फासफेट ऑफ

लाइम पाया जाता है। क्रिसमस द्वीप के खनिज में नोषजन का अभाव ही है। अफ्रिका में प्राप्त खनिज में ६५ प्रतिशत कैलशियम फासफेट और बहुत ही थोड़े अंश में लोहा और अल्यूमिना पाया जाता है। खनिज फासफेट सुपरफासफेट बनाने के ही काम में आता है।

खनिज फासफेट नैसर्गिक रूप में खाद के काम में नहीं लिया जाता है। प्रयोगों से पाया गया है कि महीन पीसा हुआ खनिज फासफेट, अमोनियम सलफेट में मिलाकर काम में लिया जाय, तो फसलें खाद को बहुत जल्दी ग्रहण कर लेती हैं, कारण कि इस मिश्रण के कारण मिट्टी में कुछ रासायनिक क्रियाएं होती हैं और फासफरिक एसिड पानी में घुल जाता है।

विदेशों में पहले हड्डी से ही सुपरफासफेट बनाया जाता था। किंतु खनिज फासफेट का पता चल जाने पर इसी से सुपरफासफेट तैयार किया जाने लगा है। यह कई ग्रेड का बनाया जाता है और जुदे-जुदे ग्रेड के पदार्थ में घुलनशील फासफेट या सुपरफासफेट का परिमाण भी न्यूनाधिक होता है। खूब सूखा हुआ और भुरभुरा पदार्थ ही अच्छा माना जाता है।

सुपरफासफेट दो प्रकार का होता है—इकहरा और दुहरा। इकहरे में १६ प्रतिशत तक फासफरिक एसिड रहता है और दुहरे में ४५ प्रतिशत तक। सुपरफासफेट में के भोज्य पदार्थों का प्रतिशत ३० ही पौधे तुरंत ग्रहण कर पाते हैं। शेष अंश मिट्टी में संग्रहीत रहता है जो धीरे-धीरे पौधों को मिलता रहता है। जमीन में चूना मौजूद हुआ, तो संग्रहीत अंश भी काम में आ जाता है। यदि चूना कम हुआ तो, मिट्टी में के लौह और अल्यूमिनम के संयोग से यह बेकार हो जाता है। इसलिए मिट्टी में के चूने के परिमाण पर सदा ध्यान रखा जाना चाहिए। खेत में डालने से पहले यह खाद चूना, बेसिक स्लैग या लकड़ी की राख में हरगिज नहीं मिलाई जानी चाहिए। इनके मिलाने से खाद में के घुलनशील भोज्य पदार्थ अघुलनशील अवस्था में आ जाते हैं।

बेसिक स्लैग

बेसिक स्लैग, बेसिक सिंडर, थामस फासफेट मील, थामस फासफेट पाउडर आदि भिन्न-भिन्न नामों से बाजार में बिकनेवाला यह पदार्थ भिन्न-

भिन्न साधनों द्वारा प्राप्त किया जाता है तथा इसकी किस्में भी भिन्न-भिन्न होती हैं। पोलाद बनानेवाले कारखानों में मैल आदि के रूप में ही यह मिलता है। हलकी किस्म के लोहे से पोलाद बनाते समय यह प्राप्त होता है। कारखानों में यह किस प्रकार प्राप्त होता है, इसपर यहां विचार करने की आवश्यकता नहीं है। पोलाद बनाने में एक प्रकार के चूने के पत्थर का उपयोग किया जाता है। इसलिए इसमें लोहे और चूने का अंश मौजूद रहता है और फासफरस भी कुछ मात्रा में पाया जाता है।

भिन्न-भिन्न नमूनों में इसमें पाये जानेवाले पदार्थों का प्रतिशत परिमाण न्यूनाधिक होता है। यह परिमाण कच्चे लोहे में फासफरस के प्रतिशत परिमाण और 'पिग आयरन' में मिलाये गये पदार्थों में के फासफरस की प्रतिशत मात्रा पर ही निर्भर करता है। पांच या छः भाग 'पिग आयरन' में एक भाग चूना मिलाये जाने से बेसिक स्लैग के तत्वों की मात्रा पर असर पड़ता है। इससे कम मात्रा में चूना मिलाया जाय, तो फासफेरिक खाद की दृष्टि से बेसिक स्लैग का दर्जा काफी बढ़ जाता है। इस संबंध में अधिक लिखना विषयांतर ही होगा।

बेसिक स्लैग में औसतन १६ प्रतिशत फासफरिक एसिड पाया जाता है, जिसका प्रतिशत ८० भाग घुलनशील अवस्था में होता है। सिलिका और फासफरिक एसिड में $\frac{३}{३}$ भाग के लगभग चूना (कैलशियम ऑक्साइड) रहता है। चूने के अलावा लोहा और 'मैगनेटिक ऑक्साइड ऑफ आयरन' भी पाया जाता है, जो लौह चुंबक की सहायता से निकाल लिया जाता है। इसमें 'ट्राय कैलशियम फासफेट' नहीं होता है। कारबन-डाय-ऑक्साइड (कार्बन-द्वि-ओषिद) या दूसरे हलके क्षार का इस पर तुरंत ही असर पड़ता है। ट्राय कैलशियम फासफेट के किसी अन्य रूप की अपेक्षा बेसिक स्लैग में का फासफरिक एसिड, मिट्टी में स्थित पानी में जल्दी घुल जाता है। फिर भी यह खाद सुपरफासफेट से नीचे दरजे की ही मानी जाती है।

वही पदार्थ खाद की तरह काम में लिया जाना चाहिए, जो एक वर्ग-इंच में सौ छेदवाली छलनी से प्रतिशत ९० छनकर निकल आता है। बाजार में, सामान्यतः, ८० प्रतिशत भाग छनकर निकल आनेवाला पदार्थ ही बेचा जाता है। कारखाने में काम में लिये गये लोहे में फासफरिक

एसिड की जितनी मात्रा होती है उसीपर बेसिक स्लैग में के फासफरिक एसिड का परिमाण निर्भर करता है। बाजार में १९ प्रतिशत से २३ प्रतिशत तक फासफरिक एसिडवाला पदार्थ मिल जाना असंभव नहीं है, जो पांच प्रतिशत 'ट्राय कैलशियम' के बराबर होता है।

मटियार भूमि में यह खाद बहुत ही अच्छा असर दिखाती है, कारण कि इसमें जलांश बहुत अधिक मात्रा में होता है और बेसिक स्लैग में के फासफेट को घुलनशील अवस्था में लाने के लिए इसकी अत्यावश्यकता है। इस खाद में चूने का अंश रहता है और मटियार भूमि में चूने का अंश नहीं के बराबर ही होता है। बलुआर और जैव पदार्थयुत भूमि में भी, यदि वह बिल्कुल ही सूखी न हो, यह खाद अच्छा असर दिखाती है। इसे देने के बाद मिट्टी में रासायनिक और भौतिक परिवर्तन होते हैं, जो फसल के लिए लाभदायक ही हैं। अम्लता बढ़ने की आशंका होने पर इस खाद का उपयोग करना लाभदायक है। हलकी किस्म की जमीन में किसी प्रकार की फासफेटयुत खाद देने से पैदावार अच्छी आती है। मूली, शलजम आदि फसलों को इससे लाभ पहुंचता है। दलहन-फसलों के लिए भी यह एक अच्छी खाद है।

इसका असर चूरे के कणों के बारीकपन पर ही अवलंबित रहता है। यदि कण बहुत ही महीन हों तो प्रतिशत कम मात्रा में फासफरिक एसिड मौजूद होने पर भी परिणाम अच्छा ही निकलता है।

सुपरफासफेट खरीदते समय केवल एक ही बात पर—खाद में के घुलनशील फासफेट के प्रतिशत परिमाण पर ही—ध्यान देना पड़ता है। किंतु बेसिक स्लैग खरीदते समय तीन बातों पर ध्यान देना अत्यावश्यक है। (१) इसमें विद्यमान फासफेट का प्रतिशत परिमाण, (२) घुलनशील फासफेट की प्रतिशत मात्रा, (३) और खाद के कणों का अधिक से-अधिक महीन होना। कणों के महीनपन पर ही खाद में के घुलनशील फासफेट का प्रतिशत परिमाण निर्भर करता है।

संसार-प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ० एन० आर० धर ने भारत की नैशनल अकादमी ऑफ साइंस के एक अधिवेशन में फासफेटयुत खादों पर विवेचन करते हुए कहा है कि टाटा के लोहे के कारखाने से निकलनेवाला बेसिक

स्लैग बेकार ही जाता है। इसमें ८ से ९ प्रतिशत फासफेट है। अमेरिका के बाजारों में बिकनेवाले बेसिक स्लैग में ८ से १० प्रतिशत तक फासफेट पाया जाता है। प्रयाग विश्वविद्यालय और शीलाधर रसायन-शाला में किये गये प्रयोगों से पाया गया है कि फासफेट को गोबर, कचरा-कूड़ा, भूसा, पत्ते, घास, हरी खाद, लकड़ी का बुरादा आदि में मिलाकर खेत में डाला जाय तो मिट्टी में वातावरण में के मुक्त नोषजन का शोषण कर लेने की क्षमता आ जाती है। जैव खादों में कैलशियम फासफेट मिलाने से नोषजन के यौगिकों का निर्माण हो जाता और फासफेट व पोटाश भी घुलनशील अवस्था में आ जाते हैं एवं मिट्टी में जैव तत्त्व और नोषजन का भंडार बढ़ जाता है। अतएव, हड्डी का अधिकाधिक उपयोग किया जाना इष्ट है। अमोनियम सलफेट देने से मिट्टी खराब हो जाती है। जैव पदार्थ कदापि जलाये नहीं जाने चाहिए। इन्हें तो बेसिक स्लैग, हड्डी, खनिज फासफेट आदि में मिलाकर खेतों में ही डालना चाहिए। ऐसा करने से ऊसर और अम्लवाली जमीनें हमेशा के लिए सुधर जाती हैं।

अन्य फासफेटयुत खाद

निसिफास—फासफरिक एसिड पुरानेवाली यह खाद दो प्रकार की होती है। पहले प्रकार की खाद में १४ प्रतिशत नोषजन और ४० प्रतिशत फासफरिक एसिड रहता है और दूसरे प्रकार की खाद में १८ प्रतिशत नोषजन और १८ प्रतिशत फासफरिक एसिड होता है। इसे दूसरी किस्म की खादों में मिलाकर ही काम में लाते हैं—अकेला शायद ही कभी खेत में डाला जाता है।

फासफेट ऑफ जिपसम—जिलेटिन बनानेवाले कारखानों से यह प्राप्त होता है। हलकी जमीनों को इस खाद से काफी फायदा पहुंचता है। विबोर्ग फासफेट और वाल्टर फासफेट पश्चिमी देशों में काम में लिये जाते थे। किंतु बेसिक स्लैग और सुपरफासफेट ने इनका महत्व बहुत ही कम कर दिया है।

: ८ :

पोटाशवाली खादें

फसलें जमीन में से पोटाश बहुत अधिक परिमाण में ग्रहण करती हैं। जमीन में इस तत्व की कमी होने पर फसल की बाढ़ पर बुरा असर पड़ता है, किंतु जमीन में इस तत्व का अटूट खजाना है। अतएव इसकी कमी शायद ही कभी महसूस होती है। खेती के मामूली तरीकों पर अमल करते रहने से, जितना पोटाश फसल द्वारा जमीन में से ग्रहण कर लिया जाता है, उसकी पूर्ति गोबर-घूरे की खाद से सहज ही हो जाती है। इसलिए उर्वरक के रूप में पोटाश देने की आवश्यकता शायद ही कभी महसूस होती है। पोटाश देने से लाभ ही होता है और कुछ फसलों के लिए इसका देना लाभदायक भी साबित हुआ है।

कृषि-संबंधी रसायन-शास्त्र में पोटाश शब्द का उपयोग, 'पोटाशियम ऑक्साइड' के लिए ही प्रयुक्त होता है। रसायनशाला में मिट्टी, खाद आदि का विश्लेषण करने पर इसे इसी नाम से व्यक्त किया जाता है। इसका यह मतलब हरगिज नहीं है कि जिस पदार्थ का विश्लेषण किया गया है, उसमें यह पदार्थ पोटाश के यौगिक के रूप में मौजूद हो।

पोटाशयुत खनिज, पौधों की राख (लकड़ी की राख) और पोटाश के लवणों से ही पोटाश के यौगिक प्राप्त किये जाते हैं। पोटाश की खदानों का पता चलने तक लकड़ी की राख ही एकमात्र ऐसा पदार्थ रहा है, जो पोटाश की कमी को पूरा करने के लिए खाद के काम में लाई जाती रही है। भारत का शोरा या नाइट्रेट ऑफ पोटाश भी सदियों से खाद का काम देता रहा है। भारतवासी सैकड़ों वर्षों से राख की उपयोगिता से भली प्रकार परिचित हैं। किंतु राख बहुत ही कम मात्रा में मिलती है; यही कारण है कि किसान इससे बहुत ही कम फायदा उठा पाते हैं।

जर्मनी, इंग्लैंड आदि देशों में पोटाश की खदानें मिलने के बाद से ही

लोगों का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ है। अनुमान किया गया है कि गरमी या अन्य कारणों से समुद्र या बड़ी झील के सूख जाने से ये खदानें अस्तित्व में आई हैं। इनमें सोडियम, पोटाशियम, मैगनेशियम और कैल-शियम के लवण भी मिलते हैं। ये भिन्न-भिन्न युगों में निर्माण हुई हैं। पोटाश भिन्न-भिन्न खनिज पदार्थों के रूप में प्राप्त होता है। पोटाशयुत चट्टानों के धीरे-धीरे चूर-चूर होकर मिट्टी के रूप में परिवर्तित हो जाने के कारण ही जमीन में पोटाश का संचय हो पाया है। यह बहुत ही धीमी गति से घुलन-शील अवस्था को प्राप्त होता है और यह इस रूप में पौधों द्वारा ग्रहण भी नहीं किया जाता है।

अभी तक यह निश्चित नहीं हो पाया है कि पोटाश की पूर्ति करने के लिए किस खनिज या उद्भिज पदार्थ का उपयोग किया जाना चाहिए, कारण कि जमीन की किस्म, आबहवा, जमीन का पोत, जमीन में इस तत्व का प्रतिशत परिमाण आदि पर ही खाद की किस्म निर्भर करती है।

मिट्टी में मौजूद पोटाश के सभी यौगिक पानी में जल्द घुल जाते हैं, जिससे खाद का कुछ अंश घुलकर नष्ट हो जाने की संभावना रहती है। जिस जमीन में गीली मिट्टी और जैव तत्व की मात्रा अधिक होती है उसकी शोषण-शक्ति भी उसी मान से अधिक होती है।

पौधे के जीवन में पोटाश को एक विशेष स्थान प्राप्त है। अन्न-परिपाक क्रिया (Process of Assimilation) में पोटैश का हाथ है। ही पोटाश की कमी के कारण कर्बोज, मंड, शर्करा, छिद्रोज आदि का बनना कम हो जाता है। जिन फसलों में कर्बोज अधिक मात्रा में पाया जाता है, उन्हीं के भोजन में पोटाश का अधिक मात्रा में होना आवश्यक है।

नोषजन या फासफरिक एसिड की कमी से नाज के दाने छोटे होते हैं, लेकिन उनकी बाढ़ पूर्ण हो जाती है। पोटाश की कमी या अभाव में दाने छोटे रह जाते हैं और उनकी बाढ भी पूर्ण नहीं हो पाती है। दाने में मंड नहीं भर पाता है, जो दाने का मुख्य भाग है।

पोटाश से सोडियम नाइट्रेट के समान ही उपज बढ़ जाती है। सोडियम नाइट्रेट से मिट्टी में का पोटाश घुलनशील अवस्था में आ जाता है, जिससे पोटाश की खाद देने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती है।

पोटाश देने से द्वि-दल जाति की फसलें खूब बढ़ती हैं। इससे शोषण-क्रिया तेजी से होने लगती है। जड़ों पर के जीवाणुओं को कर्बोज काफी मात्रा में मिलने लगता है, जिससे उनकी नोषजन ग्रहण करके पौधों को देने की शक्ति बढ़ जाती है और नोषजन ग्रहण करने की क्रिया तेजी से होने लगती है। पोटाश की कमीवाली जमीन में पोटाश खाद का असर स्पष्ट दिखाई देता है।

पोटाश की खाद देने से पौधों की फंगस रोग का सामना करने की क्षमता बढ़ जाती है। जिस फसल को पोटाश पर्याप्त मात्रा में मिल जाता है, उसपर फंगस रोग बहुत ही कम आक्रमण करते हैं और रोग का जोर भी बहुत ही कम हो जाता है। ज्यादा नोषजन दे दिया जाने पर भी, पोटाश के असर के कारण, फसल ज्यादा तंदुरुस्त रहती है। पोटाश न मिलने पर गेहूं को गैरवा रोग लग जाता है। पोटाश कम मिलने पर पौधे पर रोग जल्दी घातक आक्रमण कर देते हैं। जिस फसल को पोटाश दिया जाता है, वह कुछ देरी से पकती है।

मिट्टी में के कैलशियम कार्बोनेट के साथ पोटाश के यौगिकों का संयोग हो जाने पर पोटाशियम कार्बोनेट तैयार होता है, जिससे मिट्टी के कण एक दूसरे से मजबूती से चिपक जाते और बहुत कड़े हो जाते हैं तथा जुताई में बैलों को ज्यादा जोर पड़ता है।

लकड़ी की राख की खाद

कुछ वर्षों पहले तक पोटाश की पूर्ति के लिए एकमात्र लकड़ी की राख ही काम में ली जाती थी। कई देशों में आज भी इसे ही काम में लेते हैं। पौधों द्वारा जमीन में से ग्रहण किये गये पोटाश का एक बड़ा भाग राख के रूप में सुरक्षित रह जाता है। छोटी और नवजात शाखाओं की राख में, जो ईंधन का काम दे ही नहीं सकती हैं, पोटाश अधिक मात्रा में रहता है। अतएव राख के लिए इन्हें ही जलाया जाना चाहिए।

सभी प्रकार की वनस्पति और उनके अवशेष—घास-पात, भूसा आदि भी राख की खाद की तरह काम में ली जानी चाहिए। समुद्री वनस्पति को जलाने से उनमें का नोषजन नष्ट हो जाता है। अतएव इनकी

राख नहीं बनाई जानी चाहिए। समुद्र में उगी हुई हरी वनस्पति और अन्य हरी वनस्पतियों के छोटे-छोटे टुकड़े करके खेत की मिट्टी में गाड़ दिये जायं, या गोबर-घूरे की खाद के ढेर में मिलाकर सड़ा लिया जाय तो अधिक लाभ-दायक खाद बन सकती है। इन वनस्पतियों को सड़ाकर तैयार की गई खाद से पौधों के भोज्य पदार्थ का संचय तो बढ़ता ही है, साथ ही जैव तत्व से जमीन के भौतिक गुणों में भी वृद्धि होती है। पोटाशियम कार्बोनेट के होने के कारण कुछ बुरा असर अवश्य ही पड़ता है। यह सही है कि पौधों की राख उतना तेज असर नहीं डालती है और अम्लता का खराब असर भी बहुत-कुछ दूर हो जाता है। निराई-गुड़ाई में उखाड़े गये पौधों तथा रोगी और खराब पौधों को उखाड़कर तुरंत ही जला देने से खर-पतवार और रोग तो समूल नष्ट हो ही जाते हैं, किंतु साथ ही राख की खाद भी प्राप्त हो जाती है। जलाये जानेवाले पौधे इतने कम होते हैं कि बहुत कम मात्रा में ही नोषजन नष्ट होता है। राख भी इतनी थोड़ी होती है कि उसके अच्छे-बुरे असर का कोई प्रभाव ही नहीं पड़ पाता है।

किसी पदार्थ को जलाने से नोषजन, ओषजन, उज्जन आदि उड़कर वातावरण में मिल जाते हैं और पोटाश, मैगनेशिया आदि राख में बचे रहते हैं। मिट्टी में के अघुलनशील भोज्य पदार्थों को घुलनशील अवस्था में लाने में राख से काफी सहायता मिलती है। चूने से पौधों के जल जाने का डर रहता है, किंतु राख से पौधों को किसी प्रकार की हानि नहीं पहुंचती है। चूने से मिट्टी में का नोषजन अमोनिया के रूप में उड़ जाता है। राख इसे उड़ने नहीं देती है। चूने का बहुत कम अंश ऐसा है, जो पौधे के भोज्य पदार्थ का काम देता है। किंतु राख का पूरा अंश पौधों के पोषण और वृद्धि में सहायक होता है। राख की खाद देने से चिकनी मिट्टीवाले खेत सुधर जाते हैं।

यह खाद चाहे जब दी जा सकती है। गोबर-घूरे की खाद के ढेर में मिला देने से राख जल्दी सड़ जाती है और उसमें के अमोनिया को उड़ने नहीं देती है। पाखाना, पेशाब आदि गंदी चीजों पर राख डालने से उनकी दुर्गंध दब जाती है और उनमें का नोषजन भी उड़ नहीं पाता है।

सनेटी, बनसटी, तिलौंजा, पत्ते, भूसा, कांटे आदि जलाकर बनाई

गई राख खेत में फैलाकर तुरंत ही जोतकर मिट्टी में मिला दी जानी चाहिए। गेहूं, तमाखू आदि फसलों को राख की खाद से फायदा पहुंचता है।

अवां की राख—खपरैल, मिट्टी के बर्तन, ईंट आदि पकाने के लिए अवां जलाया जाता है। खपरैल आदि निकाल लेने के बाद अवां की राख खेत में डाली जानी चाहिए। इसमें सभी प्रकार के खनिज तत्व बने रहते हैं।

पत्थर के कोयले की राख में पोटाश बहुत ज्यादा मात्रा में मौजूद रहता है। जहां मिल सकती हो, इसे अवश्य ही खाद के काम में लेना चाहिए।

कोयला भी एक उत्तम खाद है। इससे पौधों को कार्बन मिलता है। गोबर या पत्तों की राख में कोयला का चूरा मिलाकर गमले भरे जाते हैं। विष्टा की खाद बनाने में भी इसका उपयोग किया जाता है। इससे दुर्गंध दब जाती है और अमोनिया भी उड़ने नहीं पाता है।

लकड़ी की राख में १० प्रतिशत के लगभग पोटाश रहता है। धान के पौधों के डंठल (पयाल) बहुत दिनों में सड़ते हैं। इनकी राख खाद के काम में लाई जा सकती है। इसमें दो प्रतिशत के लगभग फासफरिक एसिड और तीन प्रतिशत के लगभग पोटाश रहता है। मक्का और कुसुम के डंठल तथा केलों के पत्तों में पोटाश कुछ अधिक मात्रा में पाया जाता है। सांठे की चिपटी रस उबालने के लिए भट्टी में जलाई जाती है। इस राख में ४ प्रतिशत फासफरिक एसिड और १० प्रतिशत तक पोटाश मौजूद रहता है। कई जगह महुआ की खली जलाई जाती है। इस राख में १२ प्रतिशत तक फासफरिक एसिड और बीस प्रतिशत तक पोटाश पाया जाता है। ये दोनों ही घुलनशील अवस्था में रहते है। अतएव यह राख 'पोटाश' या फासफरिक एसिड की पूर्ति के लिए विशेष खाद की तरह काम में ली जा सकती है।

गाजर, मूली आदि जड़वाली और आलू, चुकंदर, तमाखू आदि फसलों को राख की खाद काफी लाभ पहुंचाती है।

ज्वार, मक्का, कुसुम आदि के पांचसौ सेर डंठलों से करीब नौ सेर पोटाश प्राप्त होता है। बिनौले के छिलकों की राख में ३० प्रतिशत तक पोटाश घुलनशील अवस्था में रहता है। अनुभव से पाया गया है कि पौधे की जड़ें खोलकर खली और राख की खाद देने से फल-झाड़ों को फल

आना शुरू हो जाते हैं और फल भी मोटे, मीठे तथा बहुत ही स्वादिष्ट होते हैं ।

जिपसम या कैलशियम सलफेट (हरसोंठ)

जिपसम को राजस्थान के जोधपुर प्रदेश में 'हरसोंठ' कहते हैं । जिपसम, 'रवेदार सलफेट ऑफ लाइम, या लैंड प्लास्टर' (crystallised sulphate lime or land plaster) कुछ फसलों को लाभ पहुंचाते हैं। जिपसम को 'प्लास्टर ऑफ पैरिस' भी कहते हैं। इसमें गंधक होता है । दलहन और अन्य कुछ फसलों को, जो पोटाश पर निर्भर करती हैं, जिपसम देने से लाभ पहुंचता है । जिपसम में 'कैलशियम सलफेट' का मिश्रण तैयार होता है, जो मिट्टी में के पानी में 'पोटाशियम सलफेट' का घोल बनाता है। जिपसम की खाद देकर तैयार की गई फसल की राख में पोटाश अधिक मात्रा में रहता है । जिपसम से करीब-करीब वही असर पहुंचता है, जो पोटाश के लवण देने से होता है । शलजम, गोभी, चुकंदर, मिर्चा, मूली, तमाखू, आलू, बैंगन आदि को यह खाद दी जाती है । इस खाद से गन्ने में रस की मात्रा बढ़ जाती है । जिन जमीनों में कलशियम के लवणों की कमी होती है, उनमें चूने की पूर्ति के लिए जिपसम दिया जाता है । दलहन की फसलों के लिए यह लाभदायक माना जाता है ; किंतु इसे चूने के स्थान पर उपयोग में नहीं लाया जा सकता है ।

इस खाद का एकमात्र गुण है जमीन में के पोटाश को घुलनशील अवस्था में ला देना । इस खाद के देने से चिकनी मिट्टीवाली जमीनें खुल जाती हैं । जमीन का बल बढ़ जाता और पौधे पुष्ट होते हैं । रेहवाली जमीनों में सोडियम कार्बोनेट होता है, जो पौधों के लिए विष है । जिपसम की खाद से सोडियम कार्बोनेट का जहरीला असर मिट जाता है । ऊसर जमीन को फसल बोने लायक बनाने में यह खाद बहुमूल्य प्रमाणित हुई है ।

प्रति एकड़ सात-आठ मन दी जाती है । महीन चूरा करके मिट्टी या राख में मिलाकर अच्छी तरह जोते हुए खेत में फैलाकर जुताई कर दी जाती है । इस खाद के देने से जमीन में पोटाश और चूने की मात्रा बढ़ जाती है । ऊपर बताई गई फसलों के अलावा तिल, कपास आदि को भी इस खाद

से लाभ पहुंचता है। प्रयोगों से पाया गया है कि भिंडी की हरी खाद देने के बाद जिपसम देने से गेहूं की फसल अच्छी आती है।

रोमन, ग्रीक आदि प्राचीन राष्ट्रों में भी जिपसम का खाद की तरह उपयोग किया जाता था। विदेशों में आलू और लौंग को यह खाद दी जाती है।

'राब या शीरे की खाद' शीर्षक में बतलाया गया है कि ऊसर जमीन को खेती योग्य बनाने के लिए जिपसम की खाद देने से प्रति एकड़ सात-आठसौ रुपया खर्च बैठता है। राब या शीरे की खाद से यही कार्य कम खर्च में किया जा सकता है।

अन्य उर्वरक

इस शीर्षक के अंतर्गत दो-चार ऐसी उर्वरकों के संबंध में अत्यंत ही संक्षेप में लिखा गया है, जो भारत में कभी-कभी ही खाद की तरह काम में ली जाती हैं। केवल जानकारी देने के लिए ही ऐसा किया गया है।

कैलशियम नाइट्रेट—सोडियम नाइट्रेट के समान ही यह बहुत ही जल्दी असर दिखाता है। इस खाद के देने से नोषजन के साथ-ही-साथ चूने की भी पूर्ति की जा सकती है। इसमें १३ प्रतिशत तक नोषजन रहता है। यह पानी में बहुत जल्द घुल जाता है।

अमोनियम क्लोराइड—३२ प्रतिशत शुद्ध अमोनियायुत उर्वरक बहुत ही महंगी बिकती है। इसलिए यह बहुत ही कम काम में ली जाती है। इस उर्वरक का उपयोग करने से फसल को नोषजन और नमक प्राप्त होता है।

गैस-लिकर—एक टन कोयला से दस गैलन गैस-लिकर प्राप्त होती है, जिसमें ३½ से ६ औंस तक अमोनिया प्राप्त होता है। इसे पानी में मिलाकर काम में लेते हैं। इस खाद से घास-चारा की फसल को खूब फायदा पहुंचता है। लकड़ी का बुरादा या सूखे पत्तों के महीन चूरे में मिलाकर ही काम में लेना लाभदायक है।

केनीट—केनीट में पोटाशियम सलफेट प्रतिशत ३० और मैगनैशियम क्लोराइड १४ प्रतिशत के लगभग होता है। यह खाद हलकी जमीन में

ही दी जाती है। खली, हड्डी, गोबर की खाद आदि में मिलाकर मिट्टी में मिला देने से जमीन की उत्पादन शक्ति काफी बढ़ जाती है। आलू और छीमीदार फसलों के लिए यह एक अच्छी खाद है। प्रति एकड़ में दो से चार मन तक दी जाती है।

पोटाशियम सलफेट—इसमें ५४ प्रतिशत तक पोटाशियम रहता है। पोटाश की कमीवाली जमीनों में ही यह खाद दी जाती है। आलू, लहसुन, सूरण, शकरकंद, रतालू, आदि कंदवाली फसलों को इस खाद से काफी फायदा पहुंचता है। प्रति एकड़ पचास सेर से सौ सेर तक दी जाती है। इसे किसी प्रकार की दूसरी खाद में मिला सकते हैं। अकोला का अनुभव है कि प्रति एकड़ ३५ सेर खाद देने से मूंगफली की पैदावार बढ़ जाती है। इस खाद से ईख में शर्करांश (ईक्षुशर्करा) की मात्रा बढ़ जाती है और ग्लुकोज का परिमाण घट जाता है। जौ, गेहूं, आलू, गोभी, टमाटर, मिर्च, तमाखू आदि फसलों को इस खाद से काफी लाभ पहुंचता है।

पोटाशियम कार्बोनेट—यह लकड़ी की राख में रहता है। बैंगन, लाल मिर्च, फूलगोभी, तमाखू, कपास, तिल्ली, अरहर, टमाटर आदि को फी एकड़ १० से २० मन तक दिया जाता है। लकड़ी की राख की खाद देने से फसल को यह पदार्थ मिल जाता है।

सोडियम सलफेट—नाइट्रिक एसिड बनानेवाले कारखानों में यह पदार्थ प्राप्त होता है। आलू, ज्वार, बाजरा, गेहूं, मक्का और दलहन फसलों को यह पदार्थ गोबर की खाद में मिलाकर दिया जाता है। यदि केवल यही उर्वरक दिया जाने को हो, तो फी एकड़ दो से चार मन तक दिया जाता है। हलके किस्म की जमीनों को सुधारने के लिए इसका उपयोग किया जाता है।

सोडियम कार्बोनेट—पक्षियों की बीट या हड्डी के चूरे में मिलाकर देने से मिट्टी में रहनेवाले और फसल को हानि पहुंचानेवाले कीड़े मर जाते हैं। फी एकड़ दो से चार मन तक दिया जाता है। इसे देने से पौधे तंदुरुस्त रहते हैं।

मैगनेशियम सलफेट—बहुत ही कम खेत ऐसे हैं, जिनकी मिट्टी में यह पदार्थ मौजूद नहीं रहता है और यही कारण है कि इसके देने से

फसल को विशेष लाभ नहीं पहुंचता है। इंगलैंड आदि देशों में आलू को यह खाद दी जाती है।

पोटाशियम क्लोराइड—५० प्रतिशत वाला यह पदार्थ पोटाशियम सलफेट के समान ही गुणकारी है। फी एकड़ ५० सेर से १०० सेर तक दिया जाता है।

फासफरस और पोटाश की पूर्ति करनेवाली खादें फसल बोने से पांच-सात दिन पहले ही खेत में डाली जानी चाहिए। बीज बोने के साथ-ही-साथ यह खाद देनी हो, तो बीज से तीन-चार इंच की दूरी पर ही दी जानी चाहिए। बीज के पास देने से वह जल जाता और अंकुरित नहीं होता है।

मैंगेनिज—पौधे की बनावट में यह भी योगदान करता है। अति सूक्ष्म मात्रा में देने से पौधों की बाढ़ तेजी से होती है। किंतु खाद के रूप में इसका उपयोग करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती है।

सिलिकेट्स—कई जाति के पौधों की राख में 'सिलिका' (शैलम्) कुछ अधिक मात्रा में पाया जाता है। नाज की फसलों के भूसे में तो यह ज्यादा मिकदार में पाया जाता है और यकीन किया जाता है कि इससे पौधे के तना-शाखा में ज्यादा कड़ापन आ जाता है। फिर भी खाद के रूप में इसका उपयोग करने की आवश्यकता नहीं है।

मैगनेशियम सलफेट—संसार में ऐसी जमीनें बहुत ही कम हैं, जिनमें यह तत्व नहीं रहता है। और यही कारण है कि खाद के रूप में मैगने-शियम के लवणों को देने की शायद ही कभी एकाध बार जरूरत पड़ती है। केनाइट और पोटाशियम के अधिकांश लवणों में मैगनेशियम के यौगिक थोड़ी मात्रा में मौजूद रहते हैं। इंगलैंड आदि कुछ देशों में यह खाद आलू को दी जाती है।

अधिक मात्रा में देने पर हानि ही होती है। गेहूं, बाजरा आदि में मैग-नेशियम मौजूद रहता है। अतएव, इन फसलों को यह खाद दी जा सकती है। जबतक दूसरी खादें मिलती हों, इसे काम में न लेना ही अच्छा है। इस खाद के देने से मिट्टी में का पोटाश घुलनशील अवस्था में आ जाता है। किंतु यह काम तो नमक देकर कम खर्च में ही किया जा सकता है।

आइरन-सलफेट—लोहा और गंधक की तेजाब के योग से यह पदार्थ

बनता है। पौधों के पत्तों का गहरा हरा रंग पत्तों में बननेवाले क्लोरोफिल (हरित) पर निर्भर करता है, और मिट्टी में के लोहे के अंश पर ही क्लोरोफिल का रंग निर्भर करता है। जिस जमीन में लोहे का अंश ज्यादा होता है, उसपर खड़ी हुई वनस्पति के पत्ते गहरे हरे होते हैं। पत्तों का फीका हरा रंग लोहे की कमी को सूचित करता है। पौधों के कुछ बड़े हो जाने पर ही यह खाद दी जाती है। वर्षा में भी इसका उपयोग किया जा सकता है। इसे देने से मिट्टी में का अमोनिया और फासफरिक एसिड सुरक्षित रहते हैं और गेरुवा, माहू आदि नष्ट हो जाते हैं। अमोनियम सलफेट के साथ मिलाकर काम में लेने से जमीन में का खट्टापन नष्ट हो जाता है। प्रति एकड़ दो मन से चार मन तक दिया जाता है।

पौधे को लोहा बहुत ही कम मात्रा में आवश्यक होता है। ऐसी जमीनें बहुत ही कम हैं, जिनकी नौ इंच गहराई तक की मिट्टी में दो प्रतिशत घुलनशील लौह-ओषिद (Oxide of Iron) न हो। इसलिए लोहे की पूर्ति करनेवाले उर्वरक देने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती है।

खाद की तरह इसका उपयोग करने से फसल को किसी प्रकार का प्रत्यक्ष लाभ नहीं पहुंचता है। कुछ फसलों पर इसका अच्छा असर पड़ता है। कुछ विशेषज्ञों का मत है कि इसे देने से मिट्टी की रसायनशाला में फेरिक एसिड का निर्माण होता है, जिसके प्रभाव से फसलों को लाभ पहुंचता है।

: ९ :

कुछ आवश्यक बातें

पौधे मिट्टी में से नोषजन, फासफेट और पोटाश ग्रहण करके पोषण पाते और फल-बीज का निर्माण करते हैं। इन तीनों में से किसी एक का परिमाण घट जाने पर पैदावार काफी घट जाती है। नैसर्गिक योजना के अनुसार मिट्टी में एक निश्चित अनुपात में इनका मौजूद रहना अनिवार्य है। इस निश्चित अंश से अधिक मात्रा ही पौधे ग्रहण करते हैं। इस अनुपात में गड़बड़ हो जाने पर जमीन की उर्वरा शक्ति काफी घट जाती है। इस संबंध में हम लिख आये हैं। मिट्टी के विश्लेषण पर भी बहुत-कुछ लिखा जा चुका है।

जैव पदार्थ की पूर्ति कर देने से मिट्टी का पोत सुधर जाता है। सेंद्रिय खाद को अधिक मात्रा में काम में लाने पर भी लाभ ही होता है। इनका स्थान उर्वरक या विशेष खाद ले ही नहीं सकते हैं। जमीन में जैव खाद देना अनिवार्य ही है। यदि मिट्टी में जैव पदार्थ आवश्यक परिमाण में विद्यमान न होंगे, तो उर्वरक अपना काम ठीक तरह से पूरा नहीं कर सकेंगे। मोटे तौर से कहा जा सकता है कि भारत की जमीन में साधारणतः जैव पदार्थ और नोषजन की कमी है और कुछ प्रांतों में फासफरिक एसिड की कमी भी महसूस होती है।

वनस्पति पोषक भोज्य पदार्थोंयुत खादों में कौन-सी खाद देने से कम-से-कम खर्च में ज्यादा-से-ज्यादा फायदा उठाया जा सकता है, यह बात जान लेना हरेक किसान के लिए आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है। खाद के सस्ते होने का निर्णय उस खाद की बाजार की कीमत पर निर्भर नहीं है। नोषजन, पोटाश या फासफरिक एसिड की एक पौंड की कीमत पर से ही सस्तेपन का निर्णय किया जाना चाहिए।

१. गोबर की खाद एक गाड़ी में ५०० सेर के लगभग आती है, जिससे पांच पौंड नोषजन प्राप्त होता है। एक गाड़ी खाद की तीन रुपया कीमत पड़ती है। इस दर से एक पौंड नोषजन की कीमत लगभग दस आना बैठती है।

२. अंडी की खली में पांच प्रतिशत नोषजन रहता है और सौ पौंड खली की कीमत ६ रुपया ६ आना है, तो एक पौंड नोषजन एक रुपया पांच आना में मिल जाता है।

३. एक एकड़ जमीन में सन की हरी खाद देने में लगभग ३० रुपया खर्च बैठता है, जिससे खेत को लगभग सौ पौंड नोषजन प्राप्त हो जाता है। एक पौंड की कीमत लगभग पांच आना आती है।

४. आठ प्रतिशत नोषजनवाली १०० पौंड मूंगफली की खली लगभग साढ़े पांच रुपया में मिलती है। एक पौंड नोषजन करीब ग्यारह आना में पड़ जाता है।

५. बीस प्रतिशत नोषजनवाला अमोनियम सलफेट नामक उर्वरक २५ रुपया में सौ पौंड मिलता है। इस उर्वरक से लगभग सवा रुपया में एक पौंड नोषजन जमीन को दिया जा सकता है।

६. पंद्रह प्रतिशत नोषजनवाले सौ पौंड सोडियम नाइट्रेट की कीमत ३० रुपया लगती है। इस प्रकार एक पौंड नोषजन दो रुपये में खरीदा जा सकता है।

खनिज या रासायनिक या कृत्रिम खाद को, 'इंजेक्शन' के समान ही, त्वरित फलदायक के रूप में ही, आवश्यकतानुसार काम में लिया जाना चाहिए।

खेत का ऊंची जगह पर स्थित होना, खेत की सतह नीची होना, वर्षा-मान, बारानी या सिंचाई की फसल लेना आदि पर पूर्णरूपेण विचार करके ही खाद चुनी जानी चाहिए। थोड़ी-सी ढालू जमीन में, पानी का निताार अच्छा होने के कारण मिट्टी में हवा-पानी खुलकर खेलते हैं, जिससे खाद का असर बहुत जल्द होता है। सिंचाई की फसल को बोनी से सात-आठ दिन पहले ही खाद दी जानी चाहिए। फसल की बाढ़ जोरों पर हो तभी फसल को भरपूर भोजन मिलना चाहिए।

रोपे गये धान के पौधे प्रथम १५ दिन में बहुत तेजी से बढ़ते हैं। इस समय यदि तुरंत ही ग्रहण कर लिये जा सकनेवाली खाद दे दी जाय, तो पौधों की बाढ़ और भी तेजी से होती है। रोप लगाने से पहले हरी खाद दी जाय और रोप लगाने के आठ दिन बाद अमोनियम सलफेट दे दिया जाय तो पैदावार काफी ज्यादा आती है। फूल आने से १५ दिन पहले भी पौधों की बाढ़ तेजी पर होती है। ऐसे समय खाद देनी अत्यावश्यक है।

कपास की बाढ़ बीज बोने के १५ दिन बाद और फूल बैठने के वक्त जोरों पर रहती है। ज्वार को बोने के बाद और भुट्टे निकलने के वक्त ज्यादा खुराक की जरूरत होती है। बालियां निकलने के आठ-दस दिन पहले गेहूं की बाढ़ तेजी पर होती है। हरेक फसल की विशेषता का अध्ययन करना नितांत आवश्यक है। फिर भी, मोटे तौर से कहा जा सकता है कि बोने से १०-१५ दिन बाद और फूल आने से १०-१५ दिन पहले, पौधों के पोषण की दृष्टि से, काफी खुराक पहुंचाने का प्रबंध किया जाना परमावश्यक है।

गोबर-घूरे की खाद, अन्य सेंद्रिय खाद, हड्डी का चूरा, और सुपर-फासफेट हमेशा, फसल बोने से पहले ही खेत में फैलाकर मिट्टी में मिला देने चाहिए। खली का चूरा फसल बोने से लगभग १५ दिन पहले दिया जाय। सड़ी हुई खली, आवश्यकतानुसार, चाहे जब दी जा सकती है। अमोनियम सलफेट फसल बोने से आठ-दस दिन पहले और सोडियम नाइट्रेट दो-तीन दिन पहले भी दिये जा सकते हैं। आबपाशी की फसलों को सिंचाई करने के एक दिन पहले दिये जायं। खाद देने के बाद यदि पानी की कमी रही और फसल को आवश्यकतानुसार पानी नहीं मिला तो खाद के गलने और मिट्टी में होनेवाली रासायनिक क्रियाओं के कारण पौधे जल जायंगे।

रासायनिक और कृत्रिम खादों को मिलाकर काम में लेने का आम रिवाज है। कई प्रकार के खाद ऐसे हैं, जिनके मिलाने से होनेवाली रासा-यनिक क्रियाओं के कारण उनमें के उपयोगी तत्व नष्ट हो जाते हैं या अघुलन-शील अवस्था सें आ जाते हैं, जिससे पौधे उन्हें ग्रहण कर नहीं सकते हैं।

अनुभव से पाया गया है कि खाद का मिश्रण तैयार करते समय नीचे लिखी हुई बातों पर अवश्य ही ध्यान दिया जाना चाहिए :

अ—(१) अमोनियम सलफेट में चूना, कैलशियम नाइट्रेट या बेसिक स्लैग कदापि नहीं मिलाया जाना चाहिए :

(२) हड्डी का महीन चूरा और चूने का मिश्रण न किया जाय।

(३) गोबर की खाद में कैलशियम नाइट्रेट न मिलाया जाय।

ब— नीचे लिखी खाद मिलाने में हर्ज नहीं है। किंतु तैयार किया गया मिश्रण तुरंत ही खेत में दे दिया जाना चाहिए :

(१) कैलशियम नाइट्रेट और सोडियम नाइट्रेट

(२) कैलशियम नाइट्रेट और केनाइट

(३) कैलशियम नाइट्रेट और पोटाशयुत खाद

(४) बेसिक स्लैग और पोटाशयुत खाद

क— नीचे लिखे हुए खाद एक दूसरे में मिलाकर कुछ दिनों तक रख छोड़ने में हर्ज नहीं है—

(१) अमोनियम सलफेट और सुपरफासफेट

(२) अमोनियम सलफेट और बोनमील

(३) अमोनियम सलफेट और पोटाशयुत खाद

(४) अमोनियम सलफेट और सोडियम नाइट्रेट

(५) अमोनियम सलफेट और केनाइट

(६) चूना और सोडियम नाइट्रेट

(७) हड्डी का महीन चूरा और सुपरफासफेट

मक्का, ज्वार, बाजरा, गेहूं, ईख आदि एक-दल वर्ग के पौधे हैं। इन पौधों की जड़ें जमीन में ज्यादा गहरी नहीं पैठती हैं। इनकी जड़ें जमीन के ऊपरी धरातल में के भोज्य पदार्थों को ग्रहण करके ही पौधों का पोषण करती हैं। इनको ज्यादा नोषजन की जरूरत होती है। इसलिए इन फसलों को ऐसी खादें दी जानी चाहिए, जिससे आवश्यक नोषजन की पूर्ति हो जाय और वह भी हो घुलनशील अवस्था में। नोषजन के अभाव में पौधों की बाढ़ रुक जाती है, जिससे वे कमजोर हो जाते हैं और पैदावार भी कम

आती है। कमजोर पौधों को रोग जल्द लग जाते हैं और कीड़ों का उपद्रव भी बढ़ जाता है।

खाद का घोल

अनुभव से पाया गया है कि किसी प्रकार की ताजी या सड़ी हुई खाद को पानी में घोलकर सींचने से बहुत ज्यादा फायदा पहुंचता है। पौधे अपना भोजन घोल के रूप में ग्रहण करते हैं, इसलिए खाद के घोल का असर तुरंत दिखाई देता है।

मिट्टी की नांद, बड़ा पीपा या बड़ी बाल्टी में एक भाग खाद में तीस भाग पानी मिलाकर खूब चलाया जाय और तब चौबीस घंटे तक पड़ा रहने दिया जाय। बाद में बड़े छेदवाली छलनी से छान लिया जाय। पौधों की जड़ों पर की मिट्टी हटाकर झाड़ की 'गिजा' मुताबिक यह घोल सींचकर ऊपर मिट्टी ढक दी जाय। जिस मौसम में पौधों की बाढ़ जोरों पर हो और रस का प्रवाह तेज गति से जारी हो, उसी समय खाद का घोल सींचा जाना चाहिए। जबतक फल बैठना शुरू न हो, हर दसवें दिन घोल सींचते रहने से फल ज्यादा बैठते हैं।

ताजी लीद की खाद गरम होती है। इसका घोल पौधों को काफी फायदा पहुंचाता है। सड़ी हुई खाद न मिल सकती हो तो ताजे गोबर या लीद आदि का घोल दिया जा सकता है। ईख, तरकारी आदि फसलों को गोबर, खली, लीद आदि सिंचाई की नाली में बहकर खेत में जानेवाले पानी में घोल दिया जाय।

अनुभव से आम, नारंगी आदि फल-झाड़ों के लिए नीचे लिखी हुई खाद बहुत ही लाभदायक पाई गई है—

(१) चार मन अंडी की खली का चूरा, एक मन छानी हुई राख, आधा मन कली का चूना, और आठ मन गोबर को अच्छी तरह से मिलाकर एक पक्के हौज में भरकर ढक दिया जाय। पंद्रह दिन बाद पानी डालकर इस मिश्रण को अच्छी तरह उलट-पुलटकर मिलाकर ढक दिया जाय। पानी इतना डाला जाय कि खाद अच्छी तरह से गीली हो जाय। लगभग दो मास में खाद सड़कर काम में लेने लायक हो जायगी। जड़ें खोलकर हर झाड़ को पांच सेर से दस सेर तक दिया जाय।

(२) चार भाग गोबर, एक भाग लकड़ी की राख, और ½ भाग चूना अच्छी तरह से मिलाकर एक पक्के हौज में भरकर काफी पानी डालकर ढक दिया जाय। लगभग दो मास में खाद सड़कर तैयार हो जायगी। फल-झाड़ों के लिए यह खाद बहुत ही लाभदायक पाई गई है।

खाद देने का तरीका

अकसर पूछा जाता है कि किस फसल को कौन-सी खाद दी जानी चाहिए या किन-किन खादों का मिश्रण किस फसल को फायदा पहुंचाता है? इसका उत्तर देना संभव नहीं है, कारण कि स्थानीय परिस्थिति, जमीन की किस्म, वर्षामान, तापमान आदि पर ही उपज निर्भर करती है। बाजारों में भिन्न-भिन्न फसलों के लिए जो खादें बिकती हैं, वे उन फसलों को फायदा जरूर ही पहुंचाती हैं, किंतु सभी किस्म की जमीनों के लिए एक ही किस्म की खाद लाभदायक नहीं हो सकती है; इसलिए ऐसी खादों को खरीदना एक तरह से फिजूलखर्ची ही है। हरेक किसान को खाद देने के सिद्धांतों से पूर्ण परिचय प्राप्त कर लेना चाहिए, ताकि वह कम खर्च में अपनी जोत की जमीन की किस्म, जलवायु और अन्य स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल उत्तम खाद का चुनाव करने में समर्थ हो सके। फसल-चक्र, जमीन की किस्म, खेती करने का तरीका, किसी खास फसल के बोने का उद्देश्य आदि पर भी पूर्ण विचार कर लेना आवश्यक है। इसलिए एकमात्र कृषि-प्रयोगशालाओं में किये गये प्रयोगों के आधार पर खाद का चुनाव करना फायदेमंद नहीं है। फसल की किस्म, पैदावार को जल्द-से-जल्द बाजार में पहुंचाने का इरादा, बाजार का पास या दूरी पर होना, आबपाशी का जरिया, जमीन का लगान, मजदूरी की दर, आदि पर पूरी तरह से विचार करके ही खाद का चुनाव किया जाना इष्ट है।

हर साल किस फसल द्वारा कौन-कौन से भोज्य पदार्थ किस मात्रा में ग्रहण कर लिये जाते हैं, यह जान लेना ही पर्याप्त नहीं है। अनुभव, जोत की जमीन की उपज आदि संबंधी जानकारी और बाजार की हालत आदि पर ध्यान रखकर ही यह निश्चित किया जाना चाहिए कि प्रयोगों से प्राप्त ज्ञान किस सीमा तक लाभदायक प्रमाणित हो सकता है।

विशेष खाद या रासायनिक खाद महंगे पड़ते हैं। इनका उपयोग करनेवाले को ज्यादा खर्च करना पड़ता है। अतएव इनका उपयोग करने से पहले यह जान लेना जरूरी है कि इनसे कितना लाभ प्राप्त किया जा सकता है। हमारा रोज का अनुभव है कि एक किसान खाद से काफी फायदा उठा लेता है तो एक दूसरा किसान, जिसकी जमीन पहले किसान की जमीन के समान ही है, उसी खाद को उतनी ही मात्रा में काम में लाकर भी उतनी पैदावार प्राप्त नहीं कर सकता है। इसमें खाद का कोई दोष नहीं है। जुताई का भी असर पैदावार पर पड़ता है। खूब जुताई करके मिट्टी पोली और भुरभुरी नहीं की गई, तो खाद का बहुत ही कम असर पड़ेगा। पोली व भुरभुरी मिट्टी में हवा, धूप, पानी आदि के प्रभाव और संयोग से भोज्य पदार्थ अत्यधिक मात्रा में घुलनशील अवस्था में आ जाते हैं, जिससे पर्याप्त भोजन मिलने से पौधे खूब पुष्ट होते हैं और पैदावार ज्यादा आती है। जुताई, निराई-गुड़ाई, कुलपाई, सिंचाई आदि कामों में किसान जितनी ही कम मिहनत व खर्च करता है, पैदावार भी उसी मान से कम आती है। ऐसी अवस्था में खाद को दोष देना व्यर्थ है।

उष्ण और शीतोष्ण कटिबंध के प्रदेशों की जल वायु और भूमि भिन्न-भिन्न प्रकार की है। इसलिए प्रत्येक देश और प्रदेश में एक जुदे ही दृष्टिकोण को सामने रखकर विचार करना पड़ता है। उष्ण प्रदेशों में मिट्टी में के भोज्य पदार्थों को घुलनशील अवस्था में बदलने का कार्य ज्यादा तेजी से जारी रहता है। काफी तरी मौजूद होने पर जैव पदार्थ तेजी से सड़ते हैं। समशीतोष्ण जलवायुवाले प्रदेशों की अपेक्षा इन प्रदेशों की भूमि में के नोषजनयुत सभी सेंद्रिय तत्वों को पौधे बहुत ही जल्द और पूरी तरह से उपयोग में ले लेते हैं। उष्ण कटिबंध के प्रदेशों में मिट्टी में के पानी का ताप-क्रम कुछ ऊंचा रहता है। मिट्टी में कार्बन-द्वि-ओषिद ज्यादा बनता है। जमीन में के खनिज तत्व ज्यादा तेजी से अन्य पदार्थों में परिवर्तित हो जाते हैं। यही कारण है कि इन प्रदेशों की मिट्टी में पाये जानेवाले नोषजन और फासफरिक एसिड अधिक परिमाण में ग्रहण करने योग्य अवस्था को प्राप्त हो जाते हैं। सेंद्रिय पदार्थों की इस कमी की पूर्ति के साधन जुटाना अत्यंत आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है।

वर्षा का भी अच्छा अध्ययन किया जाना चाहिए। यदि मिट्टी सूखी हो, या उसमें आवश्यकता से अधिक पानी मौजूद हो, तो खाद का कुछ भी असर पड़ नहीं सकता है। इसलिए नोषजनयुत कृत्रिम या रासायनिक खादें फसलों को तभी दी जानी चाहिए, जब न बारिश हो और न मिट्टी ही सूखी हो। उर्वरक देने के बाद शीघ्र ही वर्षा हो जाने पर ये पानी से घुलकर बह जाते हैं या जमीन में ज्यादा गहराई पर उतर जाते हैं और इस प्रकार पौधों की जड़ों की पहुंच के बाहर चले जाते हैं। अतएव, ये खादें तभी दी जानी चाहिए, जबकि इनके घुलकर पौधों की जड़ों की पहुंच के बाहर चले जाने की बहुत ही कम संभावना हो।

खाद और पानी का संबंध

पानी के बिना खाद पौधों के उपयोग में आ ही नहीं सकती है। पौधों की जड़ों पर के महीन रोएं मिट्टी के कण पर के जलावरण में घुले हुए भोज्य पदार्थों को ग्रहण करके पौधों की देह में पहुंचाते हैं। अतएव खाद दी गई फसल को काफी पानी पहुंचाना नितांत आवश्यक है। काफी नमीवाली जमीन में से ही फसलें खाद का अंश ग्रहण कर सकती हैं। इसलिए वर्षा शुरू होने से पहले ही खाद दिया जाना चाहिए। सिंचाई की फसलों को भी फसल बोने से एक माह पहले ही खाद दे देना चाहिए। स्मरण रखना चाहिए कि खाद के बिना सिंचाई की फसलों से काफी उपज ली ही नहीं जा सकती है। सिंचाई का समुचित प्रबंध किये बिना खाद देना व्यर्थ-सा ही है। जरूरत के मुताबिक खाद देने और सिंचाई करने से ही फल-झाड़ों और साग-सब्जी की फसलों से काफी फायदा मिल सकता है।

निराई गुड़ाई

निराई-गुड़ाई करके खेत की मिट्टी ढीली किये बिना, खाद और सिंचाई से जितना चाहिए, उतना लाभ प्राप्त नही किया जा सकता है। खोदकर मिट्टी पोली करने से गुड़ाई से मिट्टी में हवा प्रवेश करती है, जिससे मिट्टी के अंदर रासायनिक परिवर्तन होते रहते हैं और भोज्य पदार्थ घुलन-शील अवस्था में आ जाते हैं। इसलिए पानी देने के दो-चार दिन बाद ही

गुड़ाई करके ऊपर की मिट्टी ढीली कर दी जानी चाहिए। इससे जड़ों के पास की मिट्टी नम बनी रहती है और सिंचाई कम करनी पड़ती है।

फसल में खड़े खर-पतवार को उखाड़ फेंकने और जड़ों के आसपास की मिट्टी ढीली करने के लिए ही निराई की जाती है। फसल की कतारों में खड़े खर-पतवार को हाथ से उखाड़ फेंकने के बाद डौरा-कुलपा दे देने से फसल की कतारों के बीच की जमीन की मिट्टी कम खर्च में ढीली की जा सकती है। लंबी कतारों में बोई गई फसल के खेतों में ही डौरा-कुलपा दिया जा सकता है।

: १० :

विभिन्न फसलों के लिए उपयोगी खादें

कुछ फसलों के लिए उपयुक्त खादों पर इस अध्याय में विचार किया जायगा। भिन्न-भिन्न फसलों के शीर्षक के अंतर्गत खाद के नुस्खे दिये गये हैं। उन्हें रामबाण की तरह अचूक नहीं मान लिया जाना चाहिए, कारण कि खाद का असर तो तापमान, वर्षामान, जमीन की किस्म, जुताई, उपयुक्त समय पर पर्याप्त पानी बरसना, सिंचाई आदि पर ही पूर्णरूपेण निर्भर करता है। यहां जो जानकारी दी जा रही है वह तो केवल मार्ग-दर्शन के हेतु ही दी जा रही है।

गन्ना

गन्ने की फसल पर अनेकानेक प्रयोग किये गये हैं और भिन्न-भिन्न देशों में अलग-अलग नतीजे निकले हैं। फिर भी सभी प्रयोगों के आधार पर एक सामान्य नतीजे पर पहुंचा जा सकता है।

गन्ना बोने से पहले धीरे-धीरे गलनेवाली नोषजनयुत खाद ही दी जानी चाहिए। प्रति एकड़ सौ पौंड नोषजन देना आवश्यक है। खड़ी-फसल को पचास पौंड नोषजन सलफेट ऑफ अमोनिया या सोडियम नाइट्रेट द्वारा ही दिया जाना चाहिए। दोनों में से कौन-सा उर्वरक देना अधिक लाभदायक होगा, यह बात जमीन की किस्म पर ही निर्भर रहेगी। आवश्यकता से अधिक नोषजन देने से फसल देरी से पकेगी और रस भी कुछ घटिया दर्जे का ही होगा। कुछ किस्म की जमीनों में सलफेट ऑफ पोटाश ज्यादा फायदा पहुंचाता है। फासफेट की उतनी जरूरत नहीं रहती है। फिर भी कुछ किस्म की काली जमीनों में सुपरफासफेट देना लाभदायक है।

अनुभव से पाया गया है कि फसल बोने से पहले पूरी तरह गली हुई

गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद दी जाय। फसल बोने से १५-२० दिन पहले गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद और खली का महीन चूरा मिलाकर देना लाभदायक है। प्रयोगों से पाया गया है कि एक एकड़ गन्ने की फसल को ६२ सेर नोषजन, ५० सेर स्फुर (फासफरिक एसिड), १८३ सेर पांशुज क्षार (पोटाश), ४० सेर चूना और ३४ सेर मग्न की जरूरत होती है। किंतु भोज्य पदार्थों की मात्रा प्रति एकड़ पैदावार पर निर्भर करती है। उत्तर प्रदेश का अनुभव है कि फी एकड़ २०० सेर सोडियम नाइट्रेट, सौ सेर सलफेट ऑफ पोटाश और करीब १५० सेर सुपरफासफेट देना जरूरी है। बिहार में पोटाश की पूर्ति के लिए केनीट, मुरिएट ऑफ पोटाश दिये जाते हैं, जिससे रस में शकर की मात्रा बढ़ जाती है और शकर का दाना छोटा पड़ जाता है। सुपरफासफेट देने से रस ज्यादा मीठा हो जाता है, जिससे शकर की मात्रा बढ़ जाती है। जरूरत से ज्यादा नोषजन देने से फसल देरी से पकती है, रस फीका पड़ जाता, रवा घट जाता और गुड़ भी घटिया दर्जे का होता है। नील के खेत में बोई गई गन्ने की फसल की पैदावार ज्यादा आती है और पौधे ऊंचे बढ़ जाते हैं, किंतु गुड़ घटिया दरजे का बैठता है। हरी खाद देना भी फायदेमंद है। प्रति एकड़ दो हजार सेर महुवा की खली या एक हजार सेर नीम की खली का चूरा, आधा फसल बोने से पहले और आधा फसल बोने से दो माह बाद, खेत में बिखेरकर मिट्टी में मिला देना लाभदायक है।

पूना की ओर अमोनियम सलफेट गन्ने के लिए एक उत्तम खाद मानी जाती है। इसे जैव खाद में मिलाकर ही देते हैं। हरी खाद देने से प्रति एकड़ १०० से १२० पौंड तक नोषजन बहुत ही कम खर्च में पुराया जा सकता है। फासफेट की कमीवाली जमीनों में निसिफास देना लाभदायक है। इस फसल को प्रति एकड़ ३०० से ३५० पौंड तक नोषजन देना आवश्यक है, इस बात को ध्यान में रखकर ही खाद का प्रबंध किया जाना चाहिए।

बोनी से पहले २५-३० गाड़ी गोबर की खाद दी जाय। बीज बोने के तीन-चार सप्ताह बाद २५० पौंड अमोनियम सलफेट दिया जाय। इसके चार-पांच सप्ताह बाद दोसौ पौंड खली में १२५ पौंड अमोनियम सलफेट

मिलाकर दिया जाय। इसके बाद पचास पौंड नोषजन खली के रूप में देकर पौधों की जड़ों पर मिट्टी चढ़ा दी जाय। बंबई राज्य के मांजरी पर इसी रीति का अवलंबन किया जाता है।

अंकुर जमीन से बाहर निकल आने के दो-तीन सप्ताह बाद खाद दे देने से नवजात पौधे तेजी से बढ़ते हैं जिससे भोज्य पदार्थ की मात्रा घट जाती है। इसलिए दूसरी बार फिर खाद देना अत्यावश्यक है। अगस्त-सितंबर में खाद देने से पौधों की बाढ़ अच्छी होती है।

कहीं-कहीं १५० पौंड अमोनियम सलफेट बीज बोते समय और १५० से ३०० पौंड तक अमोनियम सलफेट जड़ों पर मिट्टी चढ़ाने से पहले देकर मिट्टी चढ़ाई जाती है।

बंबई राज्य के पाड़ेगांव कृषि-क्षेत्र पर किये गये प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि काली जमीन में अमोनियम सलफेट देने से जैव खाद और उर्वरक के मिश्रण से प्राप्त हुई उपज की अपेक्षा १५५ प्रतिशत तक उपज बढ़ जाती है। उर्वरक द्वारा नोषजन देने से ११७ प्रतिशत के लगभग ही पैदावार बढ़ पाती है। नोषजन और फासफेटयुत उर्वरक मिलाकर देने से लाल मिट्टीवाली जमीन में गेहूं की पैदावार २५ प्रतिशत बढ़ जाती है। कलई से बनी जमीन में उर्वरक द्वारा नोषजन देने से ७८ प्रतिशत पैदावार ज्यादा आती है। केवल फासफेट देने से ऐसी जमीनों की पैदावार में बहुत ही कम वृद्धि हो पाती है।

पश्चिमी बंगाल में १५० मन गोबर की खाद में ४ मन सुपरफासफेट मिलाकर देने या ६ मन खली के चूर्ण में ४ मन सुपरफासफेट मिलाकर देने से प्रति एकड़ दो हजार मन गन्ने की उपज प्राप्त की जा सकी है।

बंबई राज्य में फसल बोने से पहले ४० गाड़ी गोबर की खाद या ३० गाड़ी सोनखाद (पुडरेट या विष्टा की खाद) दी जाती है और फसल बो देने के बाद नीचे लिखी रीति से खाद देना फायदेमंद साबित हुआ है।

(१) फसल की उम्र बीस दिन की हो जाने के बाद २५० पौंड अमोनियम सलफेट पौधों की जड़ों पर डालकर खुरपी से मिट्टी में मिला दिया जाता है। इसे पानी में घोलकर जड़ों में सींचना ज्यादा फायदेमंद पाया

गया है। लकड़ी की खूंटी की सहायता से प्रत्येक पौधे की जड़ के पास खड्डा बना दिया जाता है। खाद का घोल इन गढ़ों में भरकर सींचा जाता है। इस रीति को अपनाने से समय, श्रम और पैसा ज्यादा खर्च होता है।

(२) फसल बोने के लगभग सवा महीने बाद ६ प्रतिशत नोषजन-वाली कुसुम, मूंगफली आदि की खली का महीन चूर्ण चारसौ या छःसौ पौंड १२५ पौंड अमोनियम सलफेट में मिलाकर पानी सींचने की नालियों में फैलाकर गुड़ाई करने के बाद तुरंत ही सिंचाई कर दी जाती है।

(३) फसल की उम्र पांच महीने की हो जाने के बाद पचास पौंड नोषजन खली के महीन चूर्ण के रूप में देकर पौधों की जड़ों पर मिट्टी चढ़ा दी जाती है।

इस रीति से खाद देने से प्रति एकड़ उपज ज्यादा आती है और रस में शर्करांश की मात्रा भी बढ़ जाती है। नीचे लिखी हुई रीति से खाद देना भी फायदेमंद पाया जाता है।

(अ) फसल बोने से बीस दिन पहले २५ गाड़ी गोबर की खाद या २० गाड़ी सोनखाद खेत में फैलाकर जुताई कर दी जाय।

(ब) फसल बो देने के २५ दिन बाद प्रति एकड़ १८० पौंड अमोनियम सलफेट सिंचाई की नालियों में फैलाकर पानी दे दिया जाय।

(स) फसल की उम्र लगभग पांच माह की हो जाने पर ४० पौंड नोषजन की पूर्ति करे इतना खली का महीन चूर्ण पौधों की जड़ों पर डालकर मिट्टी चढ़ा दी जाय।

बंबई की थारसा कृषि प्रयोगशाला में फसल बोने से पहले १२०० पौंड खली का महीन चूर्ण फैलाकर जुताई कर दी गई। फसल बोने के बाद गरमियों में २४०० पौंड खली के चूर्ण की खाद दी गई। पत्ते आदि छील कर तौला गया तो पैदावार प्रति एकड़ ३५ टन बैठी। प्रति एकड़ लगभग ९०० मन गन्ना ज्यादा पैदा हुआ। शिंदेवाही में प्रति एकड़ २८ मन रेंडी की खली आधी-आधी दो बार में देने से सब खर्च घटाकर लगभग चारसौ रुपया मुनाफा रहा। एक एकड़ जमीन पर ७ हजार भेड़ें बिठाने के बाद १५ मन तिल की खली की खाद देने से ३७०० पौंड गुड़ ज्यादा पैदा

हुआ। १० टन हरी खाद देने के बाद १२०० पौंड तिल की खली के महीन चर्ण में २५० पौंड सुपरफासफेट मिलाकर देने से, सब खर्च घटाने पर, लगभग ४२५ रुपया मुनाफा रहा।

नीचे लिखी हुई खाद देना भी लाभदायक है—

(१) तीन मन अंडी की खली में दस मन हड्डी का महीन चूरा मिलाकर फसल बोने से एक माह पहले खेत में फैलाकर मिट्टी में मिला दिया जाय।

(२) पांच मन सुपरफासफेट, डेढ़ मन अमोनियम सलफेट और डेढ़ मन पोटैशियम सलफेट मिलाकर दिया जाय।

(३) फसल बोने से पहले ३५० मन सोनखाद दिया जाय।

कई कारणों से रस वाहिनी नालिकाओं में धीरे-धीरे कुछ ऐसी रुकावटें पैदा हो जाती हैं, जिससे पोषक तत्वों का संचार भली प्रकार हो नहीं पाता है। यदि विद्युत् प्रयोग द्वारा इस रुकावट को दूर किया जा सके, तो पोषक तत्व सुचारु रूप से पहुंचने लगते हैं। यही विद्युत्-संस्कार का रहस्य है।

विद्युत्-संस्कार के लिए बिजली की कुछ चिनगारियों की ही आवश्यकता होती है, जो एक छोटे-से मैगनेटो से अभीष्ट समय तक निर्दिष्ट स्थान पर सरलता से पैदा की जा सकती हैं। इसके लिए ६ से १३ वोल्ट का मैगनेटो अच्छा पाया गया है।

ईख के कैंडों को संस्कारित जल में भिगोकर बोना लाभदायक है। फसल को संस्कारित जल सींचने से ईख मोटी और बड़ी होती है। सिंचाई की नाली में बिजली की चिनगारियां छोड़कर जल संस्कारित किया जाता है। फसल की दो कतारों के दोनों ओर बल्लियां गाड़कर पौधों को छूता हुआ लंबा तार बांध दिया जाय और तार में बिजली की चिनगारियां छोड़ी जायं। अमेरिका में खड़ी फसल पर लोहे की जाली से ढंककर बिजली छोड़ते हैं। इससे पौधों की खूब बाढ़ होती है और पैदावार भी ज्यादा आती है। लेकिन इस सबके बाद यह समझ लेना चाहिए कि कृषि प्रयोग-क्षेत्रों और अनुसंधानशालाओं में किये गये प्रयोगों के परिणाम तो केवल मार्ग-दर्शन का ही काम करते हैं और इसी रूप में ही इनका उपयोग किया जाना चाहिए।

धान

जिस जमीन में प्रतिवर्ष धान की फसल ली जाती हो, उसमें जैव खाद के साथ-साथ फासफेटयुत खाद अवश्य ही दी जानी चाहिए। दो हजार पौंड साल पैदा करने के लिए २८ पौंड नोषजन, २० पौंड फासफरिक एसिड और ६० पौंड पोटाश खर्च होता है।

कुछ स्थानों पर धान में तालाब की कांप की खाद दी जाती है। कहीं-कहीं राख भी देते हैं, किंतु इससे तो केवल पोटाश ही मिलता है। प्रति एकड़ ६० गाड़ी कांप या कलई देने से फसल को सभी भोज्य पदार्थ मिल जाते हैं।

रायपुर (मध्य प्रदेश) का अनुभव है कि नोषजन और फासफरिक एसिड बराबर-बराबर दिये गये तो पैदावार काफी बढ़ जाती है। सौ पौंड अमोनियम सलफेट और सौ पौंड फासफेटयुत खाद देना लाभदायक पाया गया है। पांच मन मूंगफली की खली के चूर्ण में एक मन हड्डी का महीन चूर्ण मिलाकर देना भी लाभदायक है।

हरी खाद के साथ-ही-साथ हड्डी के महीन चूरे की खाद देना फायदेमंद पाया गया है। इस फसल को स्फुरयुत खाद की ज्यादा जरूरत होती है, अतएव सुपरफासफेट अवश्य ही दिया जाना चाहिए।

प्रांगारिक और रासायनिक खादों का मेल बिठाना नितांत आवश्यक है। सन, ढेंचा, शेवरी आदि की हरी खाद या जंगली पौधों के हरे पत्ते जमीन में गाड़ने और अमोनियम सलफेट देने से इस फसल की पैदावार काफी बढ़ जाती है। कहीं-कहीं फासफरिक एसिड (भास्वराम्ल) देना भी आवश्यक होता है।

कृषि-पंडितों का अनुभव—(१) श्री जे० सी० पानी, निवासी मानिया, जिला मिदनापुर ने अप्रैल के प्रारंभ में १०० मन गोबर की खाद खेत में फैलाकर मिट्टी में मिला दी और दूसरे सप्ताह में ३ मन हड्डी का महीन चूर्ण दिया। सन १९४९-५० में फी एकड़ ७३ मन ३० सेर धान पैदा हुआ।

(२) मद्रास राज्य के जिला सलेम के ग्राम गोंडा के श्री के० वेल्लय्या ने सन १९५०-५१ में प्रति एकड़ १२ हजार पौंड गीली घास या आठ हजार

पौंड सूखी धान प्राप्त की। प्रति एकड़ २५ गाड़ी झाड़ों के हरे पत्ते, २५ टन कम्पोस्ट और १५ टन गोबर की खाद दी गई थी। हरे पत्ते मिट्टी में गाड़े गये और तब ११२० पौंड हड्डी का महीन चूर्ण और ८४० पौंड अमोनियम सलफेट मिलाकर दिया गया था।

रोप या पौध लगाने के १५ दिन पहले हरे पत्ते जमीन में गाड़े गये और एक दिन पहले कम्पोस्ट और गोबर की खाद दी गई। मूंगफली की खली का चूर्ण और हड्डी का चूर्ण देकर कीचड़ मचाया गया। रोपे लगाने के २० दिन बाद दूसरी बार मिश्र खाद दी गई। दूसरी बार निराई करने के दस दिन बाद ६७२ पौंड अमोनियम सलफेट दिया गया। इसके बीस दिन बाद फिर अमोनियम सलफेट दिया गया। पोटे भरना शुरू होने पर एक बार और अमोनियम सलफेट दिया गया। इससे बालियां अच्छी भरीं।

(३) कृषि-पंडित श्री जंगम० सी० संगय्या (निवासी अलूर, कुर्ग राज्य) ने सन १९५१-५२ में एक एकड़ जमीन में कम्पोस्ट खाद १० गाड़ी, हड्डी का चूर्ण ११२ पौंड और हरे पत्ते २५०० पौंड दिये थे। पैदावार ११२०२ पौंड प्रति एकड़ बैठी।

(४) जिला नासिक, ग्राम शिवरे (चांदवड़) के श्री लक्ष्मणगोपाल माली ने सन् १९५२-५३ में १७५०० पौंड गीली धान या १६६१२ पौंड सूखी धान प्राप्त की। प्रति एकड़ २५ गाड़ी कम्पोस्ट खाद दी गई। सन की हरी खाद दी गई। प्रति एकड़ १४ मन मूंगफली की खली, १० मन मिश्र खाद, २२४ पौंड अमोनियम सलफेट और १० पौंड बोरैक्स दिया गया था। प्रति एकड़ ११५० रुपया खर्च बैठा, जिसमें २२६ रुपया खाद का मूल्य भी शामिल है। प्रति एकड़ १४०० मुनाफा मिला।

(५) सन् १९५२-५३ में ग्राम भूदरगढ़ (जिला कोल्हापुर) के श्री बालकृष्ण विट्ठल हवलदार ने प्रति एकड़ ९३ मन धान उपजाया। सात गाड़ी गोबर की खाद और २ मन १० सेर मिश्र खाद दिया गया था। जुताई शुरू करने से पहले गोबर की खाद दी गई। खेत में कीचड़ मचाते समय १ मन मिश्र खाद दी गई। पोटे भरना प्रारंभ होने पर १ मन १० सेर

मिश्र खाद दी गई। कुल खर्च २०४ रुपया आया। सब खर्च घटाने पर प्रति एकड़ १०९० रुपया लाभ हुआ।

(६) नरसरी में प्रति एकड़ १० गाड़ी गोबर की खाद और ६० पौंड हड्डी का महीन चूर्ण दिया गया। खेत में रोपे या पौध लगाने के १५ दिन बाद पहली बार कुलपाई की गई और इसके एक पखवारे के बाद ६० पौंड अमोनियम सलफेट और ६० पौंड सुपरफासफेट देकर दूसरी बार कुलपाई की गई। प्रत्येक पौधे पर औसतन ४० दौजियां निकलीं, बाली ९ इंच लंबी थी और प्रत्येक बाली में २७०-२८० तक मोटे दाने थे।

रोप या पौध लगाने के समय २२४ पौंड तक अमोनियम सलफेट जड़ों पर देने से पैदावार निश्चित रूप से ज्यादा आती है।

मैन्युअर मिक्स्चर ४०० पौंड में १०० पौंड सुपरफासफेट मिलाकर एक एकड़ में दो-तीन बार में दिया जाय। उक्त मिश्रण का आधा भाग खेत में फैलाकर कीचड़ मचाया जाय और रोप या पौध लगाने के बाद गुड़ाई-कुलपाई देकर कीचड़ ढीला करने से एक दिन पहले शेष आधा भाग दो बार में दिया जाय। पौधों की पूर्ण बाढ़ होने के एक मास पहले ही खाद दे देनी चाहिए, कारण कि सुपरफासफेट को पौधों की जड़ों द्वारा ग्रहण किये जाने की अवस्था में आने में लगभग एक मास की अवधि लगती है। कम्पोस्ट या गोबर की खाद देना भी आवश्यक ही है।

नोषजन और फासफेटवाले उर्वरकों का मिश्रण देने से धान की उपज में १०८ प्रतिशत तक वृद्धि होती है। एक पौंड नोषजन देने से लगभग २८ पौंड धान ज्यादा आता है। बिना खाद दिये गये खेत से प्राप्त पैदावार की अपेक्षा नोषजन-फासफेट खाद देने से पैदावार प्रतिशत २२·५ तक ज्यादा बैठती है। लाल मिट्टीवाली जमीनों में उर्वरकों की सहायता से ५० प्रतिशत अधिक पैदावार प्राप्त की जा सकती है। लाल मिट्टीवाली जमीनों में गोबर-कम्पोस्ट आदि-जैसी ज्यादा मिकदार में दी जानेवाली खाद का असर तुरंत दिखाई देता है। प्रतापगढ़ में लगातार पंद्रह वर्ष तक किये गये प्रयोगों से पता चला है कि केवल छः पौंड फासफेट देने से ४६ प्रतिशत साल अधिक पैदा होती है।

कपास

कपास की फसल पर उर्वरकों का बहुत ही जल्दी असर पड़ता है। फासफेटयुत उर्वरक के मिश्रण का उपयोग करना लाभदायक है। खली का महीन चूर्ण २४० पौंड या इसीके समान अन्य जैव खाद में ४५० पौंड सुपरफासफेट मिलाकर एक एकड़ जमीन में देने से काफी फायदा होता है। यह मिश्रण बीज बोने से पहले ही मिट्टी में मिला दिया जाना चाहिए। पौधों के करीब चार इंच ऊंचे बढ़ जाने पर प्रति एकड़ ५० पौंड अमोनियम सलफेट या सोडियम नाइट्रेट जड़ों के पास दिया जाय। पोटाश तो हलकी किस्म की जमीन को ही दिया जाता है। सामान्यतः कपास को पोटाश की खाद देने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती है।

किसानों द्वारा बारानी जमीनों में बोई जानेवाली कपास की फसलों को खाद देने की आवश्यकता ही नहीं समझी जाती है। आम तौर से, सिंचाई की फसलों को ही खाद दी जाती है। वर्षा से पहले, अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट (मिश्रखाद) और खली का महीन चूरा मिलाकर देना ही लाभदायक है। फासफेट देने से फूल जल्दी बैठते हैं और रुई की प्रतिशत मात्रा भी बढ़ जाती है। हड्डी का चूरा देने से भी पैदावार बढ़ जाती है। मिट्टी में स्फुर की मात्रा कम होने पर फूल कम बैठते हैं।

उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में प्रति एकड़ १२० सेर सोडियम नाइट्रेट, १२० सेर सुपरफासफेट और २५ सेर पोटाशियम क्लोराइड का मिश्रण, आधा फसल बोने से आठ-दस दिन पहले और आधा पौधों के छह इंच ऊंचे बढ़ जाने के बाद जड़ों पर दिया जाता है। मध्य प्रदेश में ४० पौंड नोषजन अमोनियम सलफेट के रूप में, आधा फसल बोने से एक-दो दिन पहले और शेष पौधों की अवस्था छह सप्ताह की हो जाने के बाद जड़ों में दिया जाता है। बीज जिस कतार में बोया गया हो उस कतार से दो-तीन इंच के अंतर पर नारी या नाई से, सूखी मिट्टी में मिलाकर, जमीन में डाल दिया जाना चाहिए।

जमीन में शोरा डालने से फसल को नोषजन प्राप्त होता है। किंतु चिकनी मिट्टीवाली जमीन में शोरा कदापि नहीं डाला जाना चाहिए।

अमेरिका में किये गये प्रयोगों से पाया गया है कि पौधे की वृद्धि के लिए बोरोन की अत्यावश्यकता है। मिट्टी में थोड़ा-सा बोरैक्स मिलाने से प्रति एकड़ उपज और उसके गुण-धर्म बढ़ जाते हैं। इससे पौधे की बाढ़ अच्छी होती है और फूल भी जल्दी आते हैं। लगातार तीन साल तक प्रति एकड़ १० सेर बोरैक्स देते रहने पर तीसरे वर्ष लगभग ६५ सेर कपास अधिक पैदा हुई। बिनौले में के तेल पर भी इसका बुरा असर नहीं पड़ता है।

बरार, मालवा, गुजरात, पूर्व खानदेश और मद्रास की तिनावेली की जमीनें कपास के लिए अच्छी हैं। अतएव, इन प्रदेशों में कपास को पर्याप्त खाद दी जानी चाहिए। अनुभव से पाया गया है कि जमीन जितनी ही ज्यादा उपजाऊ होती है, पैदावार भी उतनी ही ज्यादा आती है। खराब जमीन में—कम उपजाऊ जमीन में—ज्यादा खाद देना लाभदायक नहीं है। अन्य उपजाऊ जमीन को अधिक खाद देकर उपजाऊ बनाने की अपेक्षा उर्वरा भूमि में ज्यादा खाद डालकर अधिक उपज प्राप्त करना लाभदायक है।

कपास की फसल को—बारानी फसल को, प्रति एकड़ ४० पौंड और सिंचाई की फसल को ६० से ८० पौंड तक नोषजन दिया जाना चाहिए। जमीन की किस्म, वर्षामान, तापमान, सिंचाई का समुचित प्रबंध, फसल-चक्र आदि पर ही दिये गये नोषजन का असर निर्भर करता है।

(१) चालीस पौंड नोषजन, आधा गोबर की खाद द्वारा और शेष अमोनियम सलफेट द्वारा दिया जाय।

(२) पांच मन मूंगफली की खली या सौ पौंड अमोनियम सलफेट दिया जाय।

(३) पैंतीस पौंड नोषजन का $\frac{२}{३}$ अंश मूंगफली की खली के रूप में और शेष अंश अमोनियम सलफेट के रूप में दिया जाय।

(४) वर्षा के पानी पर निर्भर रहनेवाली फसल को लगभग दोसौ मन गोबर की खाद वर्षा से पहले गरमियों में खेत में फैलाकर मिट्टी में मिला दी जाय और पौधों के लगभग नौ इंच ऊंचे बढ़ जाने पर ४० या ५० पौंड नोषजन, अमोनियम सलफेट द्वारा या सड़ाई गई खली के रूप में दिया

जाय। अमोनियम सलफेट या सड़ाई गई खली आधी-आधी करके दो बार में दी जाय।

(५) दक्षिण भारत का अनुभव है कि मूंगफली की खली या अमोनियम सलफेट देने से पैदावार में विशेष अंतर नहीं पड़ता है। अधिक उपजाऊ जमीन में मूंगफली की खली के रूप में नोषजन देने का खर्च अमोनियम सलफेट के रूप में नोषजन देने के खर्च से कम ही बैठता है। नारी या नाई से बीज की तरह खली का चूर्ण खेत में डालकर उसी कूंड में कपास बोना ज्यादा फायदेमंद पाया गया है। खेत के धरातल पर हाथ से बिखेरकर देना उतना फायदेमंद नहीं है।

प्रत्येक किसान के लिये यह जान लेना नितांत आवश्यक है कि प्रति एकड़ कम-से-कम कितना नोषजन देना लाभदायक है। अतएव कितने नोषजन से किस अनुपात में उपज बढ़ती है, यह ज्ञात करके ही नोषजन की मात्रा निश्चित की जानी चाहिए। पर्याप्त खाद देने पर भी वर्षा अच्छी न होने या उपयुक्त समय पर न होने या अपर्याप्त वर्षा या सिंचाई में खामी रह जाने पर पैदावार काफी घट जाती है।

(६) मध्य प्रदेश का अनुभव है कि गोबर की खाद में पशुओं की पेशाब से भिगोई हुई मिट्टी देना अच्छा है। प्रति एकड़ सौ सेर अण्डी की खली का चूर्ण गोबर की खाद में मिलाकर बीज बोने से लगभग एक महीना पहले खेत में फैलाकर मिट्टी में मिला देने से पैदावार लगभग दूनी आती है।

(७) खानदेश का अनुभव है कि दोसौ या तीनसौ मन गोबर की खाद खेत में फैलाकर अंडी, नीम, मूंगफली, करंज आदि की खली का महीन चूर्ण—लगभग २० पौंड नोषजन की पूर्ति करे, इतना—नारी या नाई से खेत में बीज की तरह बोकर उसी कूंड में बीज बोने से नवांकुरित पौधों की जड़ों को तैयार भोजन मिल जाता है, जिससे पौधे तेजी से बढ़ते हैं।

बंबई और मध्य प्रदेश का अनुभव है कि बीस-पचीस इंच वर्षामान-वाले प्रदेशों में १५० सेर से अधिक खली देना लाभदायक नहीं है। इससे कम वर्षावाले प्रदेशों में १०० सेर से अधिक खली कदापि न दी जानी चाहिए।

(८) मध्य प्रदेश की भिन्न-भिन्न प्रयोगशालाओं में किये गये प्रयोगों

से पाया गया है कि गोबर की खाद और मनुष्यों व पशुओं के पेशाब से भीगी मिट्टी मिलाकर देने से उपज दूनी बैठती है। केवल गोबर की खाद देने से जितनी पैदावार आती है, लगभग उससे ड्योढ़ी पैदावार पेशाब से भीगी मिट्टी की खाद देने से प्राप्त होती है। सोडियम नाइट्रेट की अपेक्षा पेशाब से भीगी मिट्टी की खाद देना अधिक लाभदायक है। विष्टा की खाद सदा चूना मिलाकर ही दी जानी चाहिए।

इस फसल को अमोनियम सलफेट ही दिया जाना चाहिए। इस उर्वरक से पूरा-पूरा लाभ उठाने के लिए मिट्टी में चूने का रहना अत्यावश्यक है। किंतु लगातार वर्षों तक इसको देते रहने से जमीन बेकार हो जाती है। मिश्र में चीलियन नाइट्रेट के रूप में ३४ पौंड नोषजन दिया जाता है। दक्षिण मिश्र में ७० पौंड तक नोषजन देते हैं।

ज्वार

ज्वार जमीन को बेकस बना देती है। अतएव अधिक उत्पादन और जमीन की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने के लिए पर्याप्त खाद देना परमावश्यक है।

इस फसल पर खाद का अच्छा असर पड़ता है। नोषजनयुत खाद तो इस फसल के लिए अत्यावश्यक है। भुट्टे बाहर निकलने तक के जीवन में पौधे बहुत ज्यादा नोषजन शोषण करते हैं। पौधों में संग्रहीत भोज्य पदार्थ दानों के भरने में खप जाते हैं। अतएव भुट्टे निकलने के पहले फसल को एक निश्चित मात्रा तक पर्याप्त नोषजन अवश्य ही दिया जाना चाहिए। दो बार में करके अधिक मात्रा में फासफेट देना भी आवश्यक है।

गोबर-कचरे की खाद, मिश्र-खाद (कम्पोस्ट), सोनखाद, लेंडी की खाद, खली, पेशाब में भीगी हुई मिट्टी आदि खादें देने से काफी फायदा होता है। गोबर-कचरा की खाद, मिश्रखाद, खली और अमोनियम सलफेट बहुत ही लाभदायक पाई गई है।

धारवाड़ में २० गाड़ी गोबर की खाद और १५० पौड अमोनियम सलफेट देने से पैदावार काफी ज्यादा बैठी है। कम वर्षावाले प्रदेशों में ५-७ गाड़ी गोबर की खाद काफी होती है। वर्षा से पहले गोबर की खाद

दी जाती है। हरी खाद तो केवल रबी जुवार को ही दी जा सकती है। हरी खाद से फसल को बहुत ज्यादा लाभ पहुंचता है। किंतु हरी खाद देना तो एकमात्र वर्षा पर निर्भर करता है। बीस से ३० पौंड तक नोषजन की पूर्ति करे इतनी मूंगफली की खली की खाद देने से कोपरगांव, अकोला, धारवाड़ आदि में उपज बहुत ज्यादा बढ़ी है। नारी या नाई से खली का चूर्ण बीज की तरह बोकर उसी कूंड में ज्वार का बीज बोया जाना चाहिए।

अमोनियम सलफेट द्वारा १० से ५० पौंड तक नोषजन देने से उपज काफी बढ़ जाती है। मध्यम और भारी किस्म की जमीन में इस खाद का बहुत ही अच्छा असर पड़ता है। नीचे लिखी गई खाद फसल बोने से पहले ही दी जानी चाहिए :

(१) १२५ पौंड मूंगफली की खली में ५० पौंड अमोनियम सलफेट मिलाकर दिया जाय।

(२) मूंगफली की खली २५० पौंड में १०० पौंड अमोनियम सलफेट मिलाकर दें।

उक्त खाद, आधी बीज बोने से पहले और आधी बीज बोने के दो माह बाद, जड़ों पर फैलाकर मिट्टी में मिला दिया जाय।

बंबई का कृषि-विभाग २५० पौंड मिश्रखाद देने की सिफारिश करता है।

फासफेट की कमीवाले प्रदेशों में २२४ पौंड अमोनियम सलफेट और ११२ पौंड सुपरफासफेट मिलाकर दिया जाना चाहिए। किंतु ये खादें सभी जगह लाभदायक साबित हो नहीं सकती हैं।

काली मिट्टीवाली जमीन में पोटाश पर्याप्त मात्रा में रहता है और कूड़ा-कचरा की खाद से भी फसल को आवश्यक मात्रा में पोटाश मिल जाता है। अतएव ज्वार की फसल को पोटाश की खाद देने की जरूरत नहीं पड़ती है। वर्षा की न्यूनाधिकता का असर खाद के प्रभाव पर अवश्य ही पड़ता है—कम वर्षा होने पर काफी खाद देने पर भी पैदावार कम हो आती है। यदि काफी पानी बरसे तो रासायनिक खाद से, निश्चित रूप से पैदावार काफी बढ़ जाती है। नोषजनवाली रासायनिक खादें तीन बार में पूरी मात्रा में देना ज्यादा अच्छा है। यदि वर्षा शुरू होने से पहले खली के महीन चूर्ण

में अमोनियम सलफेट और सुपरफासफेट मिलाकर नाई या नारी से बीज की तरह बोकर उसी कूंड में बीज बोया जाय तो उपज अवश्य ही बहुत ज्यादा आती है। भुट्टे निकलना शुरू होने से कुछ पहले जड़ों पर उर्वरक देने से दाना अच्छा भरता और भुट्टा बड़ा हो जाता है।

मध्य प्रदेश के दक्षिणी भाग में प्रति एकड़ २ मन २८ सेर से ४ मन २० सेर तक मूंगफली की खली द्वारा १५ से २५ पौंड तक नोषजन दिया जाता है।

जुताई से पहले ज्वार व बाजरा को ५ से १० गाड़ी तक सोनखाद या विष्टा की खाद दी जानी चाहिए। मूंगफली की खली ३५० पौंड या अंडी की खली ७०० पौंड नारी या नाई से बीज की तरह डालकर उसी कूंड में बीज बोया जाय।

मक्का

मक्का को बहुत ज्यादा खाद की आवश्यकता होती है। मामूली उपजाऊ जमीन में २५० से ३०० मन गोबर की खाद फसल बोने से ३-४ सप्ताह पहले मिट्टी में मिला दी जानी चाहिए। पौधों के ९ से १२ इंच तक ऊंचे बढ़ जाने पर, प्रति एकड़ १०० से १५० पौंड अमोनियम सलफेट जड़ों पर डालकर खुरपी देकर या कुलपा चलाकर मिट्टी में मिला देना लाभदायक है। यदि गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद कम हो, तो पचास मन जैव खाद के बदले में एक मन अमोनियम सलफेट और एक मन सुपर फासफेट का मिश्रण दिया जाना चाहिए। यदि नाई या नारी से यह मिश्रण बीज की तरह खेत में डालकर उसी कूंड में बीज बोया जाय, तो पैदावार और भी ज्यादा आती है।

तमाखू

यह फसल ज्यादा खादवाली जमीन में बोई जाती है। नोषजन और पोटाशवाली खादें ही इस फसल को ज्यादा फायदा पहुंचाती हैं। इसे फासफेट की उतनी जरूरत नहीं है। किंतु बहुत ज्यादा नोषजन हरगिज नहीं दिया जाना चाहिए। जरूरत से ज्यादा नोषजन देने से पत्ते हलके दरजे के हो जाते हैं। एक एकड़ के लिए ५० पौंड नोषजन काफी है। अपमोनियम-वाली खाद कदापि न दी जानी चाहिए। इससे पत्ते जल जाते हैं। खली या इसीके समान दूसरी नोषजनवाली जैव या सेंद्रिय खाद १५० सेर,

सुपरफासफेट १०० सेर और सलफेट ऑफ पोटाश ५० सेर का मिश्रण मिट्टी में मिला दिया जाय। खाद का मिश्रण मिट्टी में मिला देने के बाद ही पौध या रोप लगाई जाय। पौधों का बढ़ना शुरू होने पर प्रति एकड़ ५० सेर सोडियम नाइट्रेट दिया जाय। पोटाशियम नाइटाट, पोटैशियम कार्बोनेट, पोटाशियम सलफेट भी दिया जाना चाहिए, कारण कि इस फसल का मुख्य भोजन पोटाश ही है।

तमाखू के लिए ऐसी जमीन पसंद की जानी चाहिए, जिसमें पानी भरा न रहता हो और जमीन में अम्लता भी न हो। इस फसल के लिए चूनावाली जमीन भी उपयुक्त नहीं है। जिस जमीन में प्रतिशत १ के लगभग चूना होता है, उसमें यह फसल अच्छी आती है। पौधों के एक-सा बढ़ते रहने पर उत्तम दर्जे की तमाखू प्राप्त की जा सकती है। पौधों की बाढ़ रुक जाने पर तमाखू खराब हो जाती है। इसलिए पौधों की बाढ़ जारी रखने के लिए किसी नोषजनयुत खाद का देना जरूरी है।

नोषजन ६० पौंड, स्फुर ९ पौंड और पांशुज क्षार ६० पौंड ग्रहण किये जाने पर ही एक हजार पौड सूखे पत्ते प्राप्त होते हैं। तमाखू का मुख्य भोजन तो पोटाश ही है। एक एकड़ जमीन में से १६० पौंड पोटाश निकल जाता है। एक एकड़ में ५६० मन गोबर की खाद दी जानी चाहिए।

फसल बोने से पहले प्रति एकड़ १२० सेर किसी किस्म की खली की खाद देना अच्छा है। यह सही है कि तमाखू के लिए पोटाश की खाद देना जरूरी है। किंतु हरित (क्लोरोफिल) युत खाद (जैसे कैनीट, मुरिएट ऑफ पोटाश) हरगिज न दी जानी चाहिए। इससे तमाखू घटिया दरजे की हो जाती है। मामूली तौर से एक एकड़ में १०० सेर सुपरफासफेट, ८० सेर सोडियम नाइट्रेट और ८० सेर पोटाशियम सलफेट देना अच्छा है। जमीन में चूना कम हो तो सुपरफासफेट न देकर बेसिक स्लैग दिया जाय।

कुछ प्रदेशों में बोने के समय १०० पौंड से ४०० पौंड तक अमोनियम सलफेट और १०० पौंड से ३०० पौंड तक सलफेट ऑफ पोटाश मिलाकर देना फायदेमंद पाया गया है। यदि आवश्यकता जान पड़े तो १०० पौंड अमोनियम सलफेट पौधों के एक फुट के लगभग ऊंचे बढ़ जाने पर जड़ों में दिया जा सकता है।

प्रति एकड़ १०-१५ गाड़ी गोबर की खाद दी जाय। इसमें राख भी मिली हुई हो। इसका कारण यह है कि इस फसल के लिए पोटाश आवश्यक है। प्रति एकड़ १५०० से २००० तक भेड़ें खेत में बिठा दी जायं, तो और भी अच्छा है। अमेरिका में ३ भाग नोषजन, १० भाग फासफेट और ६ भाग पोटाश के अनुपात से खाद दी जाती है। कहीं-कहीं ३ : ८ : ६ और ४ : ८ : १२ का अनुपात भी रखा जाता है। इसके अलावा, मैगनेशियम, क्लोरिन, सलफर तथा कैलशियम भी दिया जाता है।

जितना नोषजन दिया जाने को हो, उसका $\frac{१}{३}$ भाग जैव खाद के रूप में, $\frac{१}{३}$ भाग मूत्र या ऐसी ही किसी अन्य खाद के रूप में और $\frac{१}{३}$ भाग उर्वरक के रूप में दिया जाय। नोषजन की कमी से पत्तों का रंग कुछ तेज हो जाता है और उपज घट जाती है। ज्यादा नोषजन दे देने से पैदावार तो ज्यादा आती है, किंतु पत्ते खुरदरे हो जाते हैं।

सुपरफासफेट, डबल सुपरफासफेट या डी० कैलशियम फासफेट के रूप में फासफेट देने से फसल कुछ जल्दी पकती और उपज कम आती है। पोटाश तो किसी भी रूप में दिया जा सकता है, किंतु खाद या उर्वरक में २० प्रतिशत से अधिक क्लोरिन नहीं रहना चाहिए। पोटाश कम होने पर पत्ते नाजुक हो जाते हैं और जल्द टूट जाते हैं। वही उर्वरक दिया जाना चाहिए, जिसमें २ प्रतिशत से अधिक मैगनेशियम न हो। मैगेनेशियम की कमी से पत्तों का रंग एक-सा नहीं होता है। इसकी मात्रा अधिक हो जाने पर पोटाश के सोखने के कार्य पर बुरा असर पड़ता है और पैदावार का दर्जा घट जाता है। जिस खाद में ६ प्रतिशत से अधिक कैलशियम न हो, वही दी जानी चाहिए। चूना की कमीवाली जमीन में ही चूनावाली खादें देना आवश्यक है।

मिर्च

खेत में भेड़ें बिठाने से मिरची के फल का रंग खब लाल हो जाता है। प्रति एकड़ बीस गाड़ी गोबर की खाद अवश्य ही दी जानी चाहिए। खली की खाद भी दी जा सकती है। फूल आने से पहले प्रति एकड़ दोसौ पौंड अमोनियम सलफेट या सोडियम नाइट्रेट या पोटाशियम सलफेट सूखी महीन मिट्टी में मिलाकर खेत में बिखेरकर मिट्टी में मिला दिया जाय।

मिरची के रोपे या पौध लगाने के १५-२० दिन पहले सूखा खून या रक्त-मिश्रित मिट्टी प्रति एकड़ सौ पौंड दी जा सकती है।

प्रति एकड़ २०० से ३०० मन गोबर की खाद दी जाय। भेड़ें बिठाकर खाद देना भी लाभदायक है। प्रति एकड़ २ से ३ मन तक अमोनियम सलफेट पौधों की जड़ें खोलकर देने से फलों की संख्या काफी बढ़ जाती है। फूल आने के समय ४ से ६ मन अमोनियम सलफेट जड़ों में दिया जाय। २ से ३ मन तक सुपरफासफेट नारी या नाई से जमीन में डालकर उसी कूंड में पौध लगाने से बलुआर-दुमट या दुमट जमीन की पैदावार काफी बढ़ जाती है।

प्रति एकड़ ४०० से ६०० पौंड तक खली का महीन चूर्ण जमीन तैयार करते वक्त दिया जाय। अमोनियम सलफेट ५० पौंड, सुपरफासफेट ९० पौंड और सलफेट ऑफ पोटाश ६० पौंड मिलाकर एक एकड़ जमीन में दिया जाय। प्रति एकड़ ६० पौंड सलफेट ऑफ पोटाश, ९० पौड सुपर-फासफेट और १०० पौंड सोडियम नाइट्रेट का मिश्रण भी दिया जा सकता है। मछली की खाद १६०० पौंड में १२० पौंड सलफेट ऑफ पोटाश मिला-कर भी दिया जा सकता है। मध्य प्रदेश के पवार खेड़ा कृषि क्षेत्र पर बरसात से पहले ८ टन प्रति एकड़ घूरे-कचरे की खाद देने से पैदावार सर्वाधिक आई है। इस खाद को देकर जमीन की जुताई शुरू की जाय। अमोनियम सलफेट २०० पौंड, सुपरफासफेट ४०० पौंड और पोटाशियम सलफेट १८० पौंड मिलाकर रख लिया जाय। इस मिश्रण का आधा भाग पौध लगाने से १५ दिन पहले दिया जाय और आधा पौध लगाने के ४०-४५ दिन बाद जड़ों पर दिया जाय।

मूंगफली

फसल बोने से १५-२० दिन पहले दस गाड़ी गोबर की खाद दी जाय। बरार का अनुभव है कि प्रति एकड़ ७० पौंड पोटाशियम सलफेट देने से फली अच्छी जमती हैं। कहीं-कहीं चूना भी दिया जाता है। नदी-नाले की कांप या कलई की खाद देने से भी पैदावार अधिक बैठती है।

फूल-फल-झाड़

फल-झाड़ धीरे-धीरे बढ़ते हैं। इसलिए इनको वही खाद दी जानी

चाहिए, जो धीरे-धीरे घुलनशील अवस्था को प्राप्त होती हो। इसलिए शोरा, सोडियम नाइट्रेट-जैसी खादें फल-झाड़ों को नहीं दी जानी चाहिए। फल-झाड़ों के रोप या पौध तैयार करते समय, नवजात पौधों की बाढ़ के लिए नरसरी या गमलों-बक्सों में, थोड़ी-सी नोषजनीय उर्वरक खाद दी जा सकती है। आम, संतरा, नीबू, जामफल (अमरूद), सीताफल, अनार, पपीता आदि के रोपों की बाढ़ जोरदार करने के लिए नोषजनीय खाद दी गई तो हर्ज नहीं है। किंतु नोषजनीय खाद का घोल ही दिया जाना चाहिए।

फल-झाड़ को हड्डी का महीन चूर्ण, अंडी की खली का चूर्ण, गोबर-चमड़े के टुकड़े, विष्टा आदि की खाद दी जा सकती है। पोटाशयुत खाद देने से फल में मधुरता आ जाती है। नीचे लिखा हुआ मिश्रण बहुत ही फायदेमंद साबित हुआ है—

१. मुरिएट ऑफ पोटाश या शोरा एक भाग, हड्डी का महीन चूर्ण दो भाग, और गोबर की खाद (अच्छी गली हुई खाद) तीन भाग को मिलाकर मिश्रण तैयार कर लिया जाय। जड़ें खोलकर प्रति पौधा दस सेर से बीस सेर तक वर्षा प्रारंभ होने के समय दी जाय। खाद डालने के बाद जड़ों को मिट्टी से ढककर तुरंत ही पानी सींच दिया जाय।

२. हड्डी का चूरा १०० सेर, मूंगफली की खली का चूर्ण १०० सेर, सोडियम नाइट्रेट ५० सेर और पोटाशियम सलफेट ५० सेर मिलाकर मिश्रण तैयार कर लिया जाय। गमले में बोये गये फूल के एक पौधे के लिए एक मुट्ठी खाद काफी है। बड़े झाड़ को दो सेर मिश्रण जड़ों में दिया जाना चाहिए। बारहों महीने फूल देनेवाले झाड़ को साल में दो बार खाद दी जाय। मौसमी फूल-झाड़ों को फूल बहार आने से एक सप्ताह पहले नीचे लिखा हुआ मिश्रण दिया जाय—

हड्डी का महीन चूर्ण एक भाग, अमोनियम सलफेट या सोडियम नाइट्रेट एक भाग, राख तीन भाग मिलाकर मिश्रण तैयार कर लिया जाय। पौधे की जड़ों के आसपास मिश्रण फैलाकर खुरपी से मिट्टी में मिला दिया जाय। खाद देने के बाद तुरंत ही सिंचाई कर दी जाय।

३. अच्छी तरह से सड़ी हुई पत्तों की खाद आठ भाग, चिकनी मिट्टी

आठ भाग, और महीन रेती या ईंट-खपरैल का महीन चूरा मिलाकर रख लिया जाय। पेटी, गमले या नरसरी में फल-फूल झाड़ों के बीज बोने के लिए यह मिश्रण काम में लिया जाना चाहिए।

गेंहूं

उत्तर प्रदेश में प्रति एकड़ ३० या ६० या ९० पौंड नोषजन देकर प्रयोग किये गये। फसल बोने से ३५ या १७ और १ दिन पहले भिन्न-भिन्न भूमि-खंडों में गोबर की खाद, खली का चूर्ण और अमोनियम सलफेट उर्वरक दिये गये। पाया गया कि अंडी की खली और अमोनियम सलफेट देने से दौंजी और पत्ते ज्यादा निकले और पैदावार भी ज्यादा आई। उर्वरक जमीन की उर्वरा शक्ति को स्थायित्व प्रदान करने में असमर्थ हैं। गोबर और खली की खाद में यह गुण होता है। भारत में अभी तक यह निश्चित ही नहीं किया जा सका है कि जमीन की उर्वरा शक्ति को स्थायी रूप से उच्च स्तर पर बनाये रखने और प्रति एकड़ अधिक उपज प्राप्त करने के लिए जैव खाद और उर्वरकों का मिश्रण किस अनुपात में दिया जाना चाहिए।

उत्तर प्रदेश के 'कृषि-पंडित' की उपाधि प्राप्त श्री पद्मसिंह ने प्रति एकड़ लगभग ५९ मन २६ सेर गेहूं पैदा करने में सफलता प्राप्त की है।

अठारह बार देशी हल से जुताई करके जुलाई में सन बोया गया और अगस्त में इसकी हरी खाद दी गई। बीज बोने से पहले प्रति एकड़ चारसौ मन कम्पोस्ट खाद दी गई। बीज बोते समय प्रति एकड़ २८ सेर अमोनियम सलफेट दिया गया। इससे एक दिन पहले दो मन रेंडी की खली का चूर्ण दे दिया गया था। बीज बोने के १५ दिन बाद सिंचाई की गई। इसके तीन सप्ताह बाद दूसरी बार पानी दिया गया था।

हरी खाद देने से गेहूं की उपज बहुत बढ़ जाती है। उत्तर प्रदेश में वर्षा प्रारंभ होते ही मूंग नंबर १ बो दिया जाता है। ६०-६५ दिन में फसल पक जाती है। पकी फलियां चुन लेने के बाद फसल को हल चलाकर मिट्टी में मिला देते हैं। इस हरी खाद के देने से चौमस या अषाढ़ी या पलिहर खेत में गेहूं या जौ की पैदावार काफी ज्यादा आती है और प्रति एकड़ ८-१० मन मूंग भी मिल जाता है।

वर्षा या सिंचाई द्वारा पर्याप्त पानी मिल जाने पर उपज बहुत ज्यादा आती है। गेहूं को नोषजन और फासफरसयुत खाद देना जरूरी है। इन दोनों भोज्य पदार्थों से परिपूर्ण रासायनिक खाद या उर्वरक देने से पैदावार ६० प्रतिशत तक बढ़ जाती है। जैव खाद और उर्वरक मिलाकर देने से पैदावार में प्रतिशत ४० तक वृद्धि सहज ही हो जाती है। भारतीय कृषि-अनुसंधान संस्था का मत है कि प्रति एकड़ २० पौंड नोषजन देना अत्यावश्यक है। उत्तर प्रदेश में प्रति एकड़ ५० पौंड नोषजन दिया जाना चाहिए।

सिचाई की फसल को हरी खाद देना लाभदायक है। पंजाब में ज्वार की हरी खाद देना लाभप्रद पाया गया है। कुछ प्रदेशों का अनुभव है कि गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद जून या अक्तूबर में न देकर अगस्त में देना लाभदायक है। उत्तर प्रदेश में एक एकड़ में १५० से २०० मन तक और मध्य प्रदेश में लगभग ४ टन गोबर की खाद देना पर्याप्त समझा जाता है। गोबर की खाद या कम्पोस्ट पर्याप्त मात्रा में न मिले तो फसल बोने से पहले प्रति एकड़ २५० से ४०० पौंड तक खली दी जा सकती है। अमोनियम सलफेट या अमोनियम नाइट्रेट देना हो तो १०० से २५० पौंड तक दिया जाय। केवल वर्षा के ही जल पर निर्भर रहनेवाली फसल को बोनी के समय और सिंचाई की फसल को बीज वो देने के एक माह बाद पहली बार पानी सींचने से पहले उर्वरक देकर तुरंत ही सिंचाई कर दी जानी चाहिए। आधी खाद बीज बोने के साथ-ही-साथ और आधी खाद पहली सिंचाई देने से एक दिन पहले भी दी जा सकती है। सुपरफासफेट तो बीज से पहले नारी या नाई से जमीन में डालकर उसी कूंड में बीज बोया जाना चाहिए। एक एकड़ के लिए १४० पौंड सुपरफासफेट काफी होता है। खेत की ऊपर की सतह पर फेंक देने से फसल को फायदा नहीं पहुंचता है। आवश्यकता से अधिक नोषजन देने से दौंजियां कमजोर हो जाती हैं। पत्तों की वृद्धि ज्यादा होती है और पौधे जमीन की ओर झुक जाते हैं, जिससे फसल देरी से पकती और दाना ठीक नहीं भरता है।

कहीं-कहीं बोनी के समय १०० से २०० पौंड तक अमोनियम सलफेट, आधा बीज बोने से एक-दो दिन पहले और आधा बाली पोटे में भरने पर, दिया जाता है।

देश के भिन्न-भिन्न राज्यों में किये गये प्रयोगों से पाया गया है कि नोषजन और फासफेट देने से पैदावार ६० प्रतिशत तक बढ़ जाती है। जैव खाद में उर्वरक मिलाकर देने से पैदावार मे ३७ प्रतिशत से अधिक वृद्धि नहीं होती है।

पंजाब के जलंधर कृषि-क्षेत्र पर किये गये प्रयोगों से पाया गया है कि घूरे-कचरे की खाद द्वारा २५ पौंड और ४० पौंड नोषजन देने से गेहूं की पैदावार ७ प्रतिशत तक बढ़ गई। इतना ही नोषजन अमोनियम सलफेट द्वारा देने पर यह वृद्धि क्रमशः प्रतिशत ४० और ६६ हुई। बारानी क्षेत्र में १६ पौंड नोषजन घूरे-कचरे की खाद द्वारा देने से पैदावार ३४ के लगभग बढ़ी। सभी प्रयोगों के परिणामों के आधार पर कहा जा सकता है कि बारानी क्षेत्र में बोई गई गेहूं की फसल को अमोनियम सलफेट द्वारा नोषजन कम मात्रा में ही दिया जाना चाहिए।

बरार-क्षेत्र में किये गये प्रयोगों से पाया गया कि बीज बोने से एक दिन पहले १०० पौंड और बाली निकलना प्रारंभ होते ही १०० पौंड अमोनियम सलफेट देना लाभदायक है।

श्री रामकृष्णसिंह, निवासी बरकतपुर, जिला बुलंदशहर (उत्तर प्रदेश) ने प्रति एकड़ ६४ मन गेहूं उपजाकर सन् १९५४-५५ की 'कृषि-पंडित' की उपाधि प्राप्त की। सन् १९५३-५४ में भी ५४ मन १७ सेर ४ छटांक पैदा करके उत्तर भारत का प्रथम पारितोषिक प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की थी।

गत वर्ष की फसल निकाल लेने के तुरंत बाद ही दो बार जुताई की गई और तब उपयुक्त मौसम आते ही हरी खाद के लिए १½ मन सन बीज बोया गया। बीज बोने के एक माह बाद खड़ी फसल मे ही छह मन हड्डी का महीन चूर्ण खेत में फैला दिया गया। इसके १५ दिन बाद सन मिट्टी में गाड़ दिया गया। पंद्रह दिन तक इसे सड़ने दिया गया और समय-समय पर जुताई की जाती रही। लगभग चार मास बाद ६ मन अंडी की खली और २½ मन सुपरफासफेट देकर दो बार जुताई की गई। पी० ५९१ नस्ल के गेहूं का १ मन १० सेर बीज देसी नाई या नारी से बोया गया। दो कतारों में सात-आठ इंच का अंतर रखा गया। खाने के नमक के घोल

में बीज डालकर अच्छे बीज अलग कर लिये गये थे। बीज उग आने के बाद यथा समय निराई-कुलपाई की जाती रही और जड़ों पर मिट्टी भी चढ़ाई गई थी। फसल बोने के छह सप्ताह बाद दिसंबर के दूसरे सप्ताह में पहली बार सिंचाई की गई। तीन माह में तीन बार और पानी सींचा गया। पौधे सात फुट तक ऊंचे बढ़ गये थे। अप्रैल के मध्य में कटाई की गई।

आलू

बंबई राज्य मे बिना खाद दिये प्रति एकड़ ७००० पौंड उपज आती है। खाद देकर यह उपज १५३२४ पौंड बढ़ाई जा चुकी है। डॉक्टर सहस्रबुद्धे का मत है कि ६००० पौंड पैदावार प्राप्त होने पर एक एकड़ जमीन में से १७·९ पौंड चूना, ५९·६ पौंड पोटाश, १३·८ पौंड फासफरिक एसिड और ३२·९ पौंड नोषजन ग्रहण कर लिया जाता है। इस फसल को उर्वरकों की अपेक्षा सेंद्रिय खादों से अधिक लाभ पहुंचता है। गोबर की खाद, विष्टा की खाद, और लेंडी की खाद इस फसल के लिए विशेष लाभदायक पाई गई है। हरी खाद देना भी लाभकारी है।

भिन्न-भिन्न राज्यों के कृषि-विभागों द्वारा किये गये प्रयोगों से नीचे लिखी हुई खादें फायदेमंद साबित हुई हैं।

बंगाल—गोबर की खाद २०० मन, और अंडी-खली पांच मन का मिश्रण।

बिहार—अमोनियम सलफेट ३७५ पौंड, सुपरफासफेट १६० पौंड और १७५ पोटाशियम सलफेट को मिलाकर दिया जाता है। फसल बोने से पहले १०-१५ गाड़ी गोबर की खाद देते हैं।

असम—२२५ पौंड निसिफास में २२५ पौंड पोटाशियम सलफेट मिलाकर दिया जाता है।

उत्तर प्रदेश—२५० सौ मन गोबर की खाद में २० मन अंडी की खली का महीन चूर्ण मिलाकर देने से उपज ज्यादा आई है।

मद्रास—मूंगफली की खली ५०० पौंड, सुपरफासफेट ३३६ पौंड, पोटाशियम सलफेट २२४ पौंड और हड्डी का महीन चूर्ण ३५० पौंड मिलाकर मिश्रित खाद तैयार की जाती है, जिसे 'नंदजन' मिश्रण कहते हैं। प्रति

एकड़ ५००० पौंड गोबर की खाद में १६१० पौंड नंदजन नामक मिश्रित खाद देना लाभदायक पाया गया है ।

मध्य प्रदेश—(१) कम्पोस्ट खाद ३० गाड़ी, खली का महीन चूर्ण २० मन, अमोनियम सलफेट ५ मन और लकड़ी का बुरादा २० मन मिलाकर तैयार की गई खाद देकर प्रति एकड़ ५५० मन आलू उपजाये गये हैं।

(२) प्रति एकड़ १८ हजार पौंड गोबर की खाद मेंपोटाशियम सलफेट २०५ पौंड, सुपरफासफेट २६० पौड, अमोनियम सलफेट २२५ पौंड और खली का महीन चूर्ण १५० पौंड मिलाकर दिया जाता है।

बंबई—१२००० पौड गोबर की खाद में २०० पौड पोटाशियम सलफेट, २०० पौंड सुपरफासफेट और २०० पौंड अमोनियम सलफेट मिला कर देते हैं ।

अदरख, आलू, हलदी, घुइयां, गाजर, सूरण, शकरकंद, मूली, प्याज, लहसुन आदि को कंद-मूलवाली फसलें कहते हैं । इन्हें वही खाद दी जानी चाहिए, जिसमें के भोज्य पदार्थ मिट्टी में संचित पानी में शीघ्र घुल जायं और जिन्हें इन पौधों की जड़ें सरलता से ग्रहण कर सकें । ये फसलें पोटाश और फासफरस ही अधिक मात्रा मे ग्रहण करती हैं । इसलिए शोरा या सुपरफासफेट देने से पैदावार अवश्य ही अधिक आती है; गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद या खली के महीन चूरे में मिलाकर ही ये खेतों में बिखेरे जाने हैं ।

अंगूर

अंडी की खली के महीन चूरे को, पानी में डालकर, जबतक खली गल न जाय, उबाला जाय । खली के उबलकर गल जाने के बाद जितनी खली दी गई हो, उतना ही गुड़ और थोड़ा चूना डालकर खूब चलाया जाय। खली का दसगुना गोबर मिलाकर मिश्रण खूब चलाया जाय, ताकि सब पदार्थ ठीक तरह से पानी में घुल-मिल जायं । इस मिश्रण को एक पक्के हौज में भरकर ढंक दिया जाय। लगभग दो मास में यह मिश्रण पूरी तरह सड़कर काम में लेने लायक हो जायगा। खाद में दुर्गंध निकलना शुरू होने पर पौधों की जड़ें खोदकर यह खाद दी जाय ।

परिशिष्ट—१

कौन-सी फसल एक एकड़ जमीन में से कौन-कौन-से वनस्पति पोषक पदार्थ कितने पौंड ग्रहण करती है:—

नाम फसल	उपज प्रति-एकड़ (पौंड में)	नोषजन	फास्फरिक एसिड	पोटाश	चूना
धान	२०००	२७	२१	६०	२०
गेहूं	७००	३५	२१	४०	२०
ज्वार	२०००	५९	१४	१४२	२९
बाजरा	१०००	३१	२४	५९	११
मक्का	१०००	२०	१९	१८	१४
अरहर	२००	१९	८	१९	२२
चना	५००	१८	८	२१	१४
कुलथी	५००	४३	१२	२५	१८
उर्द	६००	३७	९	३३	३१
मूंग	६००	५३	१८	४४	४०
मूंगफली	१४००	६२	२३	१४	३५
तिल	३००	१६	११	१६	१५
आलू	६०००	३३	१४	५९	१८
बैंगन (भटा)	२२०००	९४	७०	८६	—
प्याज	१४०००	४८	२८	५२	४१
हलदी	१८०००	३८	४०	१४४	१६
अदरख	६०००	२३	१९	५८	१६
मिरची	१०००	४८	१५	५७	३७
ईख	२२०००	७५	१६०	२४०	१०८
तमाखू	१३००	८५	१००	६०	८४
कपास	४००	२८	१३	४१	३१

परिशिष्ट—२

भिन्न-भिन्न प्रकार की खादों में वनस्पति के भोज्य पदार्थ (प्रतिशत)

नाम खाद	नोषजन	पोटाश	फासफरिक एसिड
गोबर	०·०५ से ०·०९	२·६	०·०६
लीद	०·०६ से ०·०८	—	—
सोनखाद (विष्टा)	०·५ से १·५०	०·७ से १·२	०·९० से १·४०
भेड़-बकरी की लेंडी	१·५	१·००	१·३०
हरी खाद	०·४	०·४१	०·३२
हड्डी का चूर्ण	४·०० से ५·००	—	२२ से २४
मछली की खाद	३·५ से ४·००	—	३३·००
बूचड़खाने का			
गोश्त का चूरा	११·५	७·००	२·५०
अंडी की खली	४·५ से ६·००	१·३९	१·८६
नारियल की खली	३·०२	१·७७	१·९०
बिनौला की खली—			
(अ) छिलकासहित	३·९९	१·६०	१·९०
(ब) छिलकारहित	६·४०	२·१७	२·८९
मूंगफली की खली	७·२९	१·३३	१·५३
करंज की खली	३·९७	१·२७	०·९४
अलसी की खली	४·५७	१·२८	१·४४
महुवा की खली	२·५१	१·८६	०·८०
नीम की खली	५·२२	१·४८	१·१०
राई-सरसों की खली	५·२०	१·१९	१·८४

परिशिष्ट—२

नाम खाद	नोषजन	पोटाश	फासफ़रिक एसिड
कुसुम की खली—			
(अ) छिलकासहित	४·९२	१·२३	१·४४
(ब) छिलकारहित	७·८८	१·९२	२·२०
तिल की खली	६·२२	१·२६	२·१०
उर्वरक			
सुपरफासफेट	—	—	२०·००
डबल सुपरफासफेट	—	—	४०·००
निसिफास १	१४·००	—	४८·००
निसिफास २	१८·००	—	१८·००
बेसिक स्लेग	—	—	१५·०० से २०·००
पोटाशियम सलफट	—	४८·००	—
पोटाशियम क्लोराइड		५०·००	—
अमोनियम सलफेट	२०·००	—	—
सोडियम नाइट्रेट	१५·००	—	—
केलशियम सायनामाइड	२०·००	—	—
केलशियम नाइट्रेट	१६·००	—	—

परिशिष्ट—३

जंगल में चरने वाले मवेशियों के गोबर में पाये जाने वाले मुख्य वनस्पति-पोषक पदार्थ (प्रतिशत) : सात प्रयोगों के परिणाम

प्रयोग	एक	दो	तीन	चार	पांच	छः	सात
जल	७६·०५	७५·७	७७·१८	७८·२८	७८·०५	७५·६०	७३·९०
सेंद्रिय-पदार्थ	१४·९०	१४·३	१४·५१	१४·४५	१३·४०	१४·६९	१५·९५
सिलिका	७·२४	७·६	७·८	६·९२	६·६७	८·४६	८·२४
फ़ासफरिक-एसिड	०·१७	०·१७	०·१८	०·१७०	०·१७	०·१९	०·१३
नोषजन	०·२५	०·२१	०·२९	०·२४	०·२३	०·७२७	०·२५

कृषि-संबंधी अन्य पुस्तकें

१. कृषि-ज्ञान-कोष
२. अन्नों की खेती
३. फलों की खेती
४. साग-भाजी की खेती
५. तिलहन की खेती
६. दलहन की खेती
७. रोक-फसलों की खेती
८. खेती के साधन
९. धान की खेती
१०. पुष्पोद्यान

मूल्य
साढ़े तीन रुपये